केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

२ अप्रैल - जूलाई २०१३ अंक, वर्ष २०, नं ६३ (संयुक्तांक), लक्ष्मीनगर, पट्टम पालस, तिरुवनन्तपुरम-६९५ ००४

स्वामी विवेकानन्द विशेषांक

डॉ. चन्दशेखरन नायर कृत "श्रीमद् भागवतम एकादश स्कन्धम मुक्तिस्कन्धम" (मलयालम) का लोकार्पण केरल संस्कृति मंत्रि और अन्य शिक्षा शास्त्रियों द्वारा हो रहा है।

अपने सपने साकार करें

आवास ऋण

कार ऋण

स्वर्ण ऋण

▸ कम ब्याज ▸ सुगम ▸ ओवरड्राफ्ट के रूप में ऋण ▸ दीर्घावधि

SBT

विश्वास की दीर्घ परम्परा

स्टेट बैंक ऑफ़ त्रावणकोर

Toll-free No. 1800 425 5566 www.statebankoftravancore.com

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

२ अप्रैल - जूलाई २०१३ अंक, वर्ष २०, नं ६३ **(संयुक्तांक)**, लक्ष्मीनगर, पट्टम पालस, तिरुवनन्तपुरम-६९५ ००४

स्वामी विवेकानन्द विशेषांक

सम्पादक

डा० एन० चन्द्रशेखर नायर

संरक्षक

श्रीमती शांता बाई (बेंगलोर)
श्री. डी.शशांकन नायर
श्रीमती कमला पद्मगिरीश्वरन
डा० वीरेन्द्र शर्मा (दिल्ली)
डा० अमर सिंह वधान (पंजाब)
श्री. हरिहरलाल श्रीवास्तव (काशी)
श्रीमती के. तुलसी देवी (चेन्नै)
श्रीमती रजनीसिंह
डा. मिनी सामुवल
डा. सविता प्रमोद

परामर्श-मण्डल

डा० एस.तंकमणि अम्मा
डा० मणिकण्डन नायर
डा० पी.लता
श्रीमती आर. राजपुष्पम
श्रीमती एल. कौसल्या अम्माल
श्रीमती रमा उण्णित्तान

सम्पादकीय कार्यालय

श्रीनिकेतन, लक्ष्मीनगर,
पट्टम पालस पोस्ट
तिरुवनन्तपुरम-६९५ ००४
दूरभाष-०४७१-२५४१३५५

प्रकाशकीय कार्यालय

मुद्रित : (द्वारा)
श्रीरामदास मिशन मुद्रणालय,
चेंकोट्टकोणम, तिरुवनन्तपुरम-८७
मूल्य-एक प्रतिः २०.०० रुपये
आजीवन सदस्यता : १०००.००
संरक्षक : २०००.००

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका कहाँ कहाँ जाती है?

कन्याकुमारी, मैसूर-२, महाराष्ट्रा, मणिपुर, मद्रास-६, कलक्कता-२, नई दिल्ली (अनेक स्थान), गुन्डूर, त्रिवेन्द्रम (अनेक जगहें), बागपत (यु.पी.) उन्नाव (उ.प्र.), बिलासपुर (म.प्र.), गुंतकल, जबलपुर, इलहाबाद, अहमदाबाद, बिरखडी, जमशेदपुर, लातूर, हैदराबाद, रतलाम, देवरिया, गाजियाबाद, इम्फाल, चुडीबाज़ार, पीली भीत, फिरोजाबाद, अम्बाला, लखनऊ, बलांगीर, बिहार, पटना, गया, बांका, ग्वालियर, भगलपुर, देवधर, जयपुर, बनारस, तृशूर, आलप्पुषा, मेरठ केन्ट, कानपुर, उज्जैन, पानीपत, होरंगाबाद, सीतामठी पोस्ट, प्रतापगढ, सरगुजा, बिजनौर, भीलवाडा, सतना, रेलमंत्रालय, तिरुवल्ला, वर्कला, कोट्टयम, नई माही, ओट्टप्पालम, चेप्पाड, लक्किडि, नेय्याट्टिनकरा, कोषिकोड, पय्यन्नूर, कोल्लम, मान्नार, मंगलोर, पुरनपुर, पंजाब, विशाखपटनम

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय नई दिल्ली द्वारा निर्देशित जगहें :

तमिल नाडुः- अरुम्बाक्कम, तोरापक्काओ, मद्रास, चेन्नै-३२, क्रोमोपेट्टा, चेन्नै-२१, चेन्नै-२, चेन्नै-८, कान्चीपुरम, तिरुचिरापल्ली, तिरुचिरापल्ली-२, नोर्त अरकोट, ताम्बरम, कोयम्बतूर, सेलम, सेलम-२६, चेन्नै-३४, चेन्नै-२४, तिरुचिरापल्ली-२, चेन्नै-३०, कोयम्बतूर-४, चेन्नै-२८, चेन्नै-८६। **गुजरातः-** अहमदाबाद, बरोडा। **कर्नाटकः-** बांगलोर, चित्रदुर्ग, श्रीनिगेरी, मौंगलोर, मैसूर, हस्सन, मान्डीया, चिगमौंगलोर, षिमोगा, तुमकूर, कोलार। **महाराष्ट्राः- मुम्बई,** कोलाबा-मुम्बई, मुम्बई-२०२, माटुंगा, मुम्बई-८, मुम्बई-८६, अन्देरी-६९, मुम्बई-२६, मुम्बई-८७, मुम्बई-२, औरंडगाबाद-३, औरंडगाबाद-२, औरंडगाबाद-१, नागपुर, रामटाक-नागपुर, सताना, नन्दगौन-नासिक, पूना, पूना-१, पूना-४, मानमाड-नासिक, चन्द्रपुर, अमरावती, कन्डहार, कोलह्रापुर, बानडरा, अकोला, नासिक, अहमदनगर, जलगौन, दुलिया, सांगली-कोलहापुर, षोलापुर, सतारा, सान्ताक्रूस, बारसी-४१३, माटुंगा, संगली-४१६। **वेस्ट बंगालः-** कलक्कता। **हैदराबादः-** सुल्तान बाज़ार। **गौहाटीः-** कानपुरा। **नई दिल्लीः-** आर, के पुरम। गोवाः- मपुसा-५०७।

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं हैं। सम्पादक

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका केरल विश्व विद्यालय से अनुमोदित पत्रिकाओं की सूची में शामिल की गयी है। (संपादक)

www.hindisahityaacademy.com

सम्पादकीय

प्रोफसर एम.पी.मन्मथन की जन्मशताब्दी

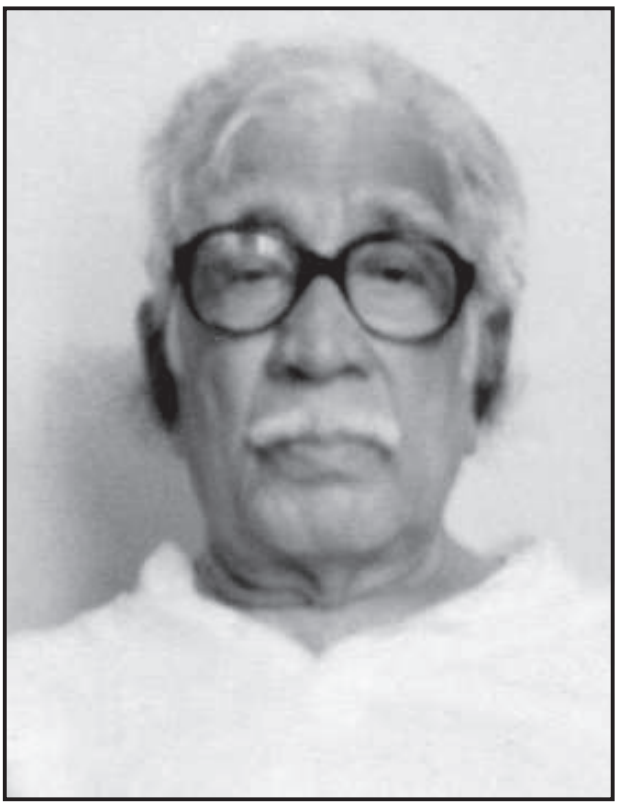

तिरुवनन्तपुरमवाले गाँधी भवन के तत्वावधान में ३ मई २०१३ को प्रख्यात देशीय नेता एवं गाँधीवादी पुरुष प्रोफसर एम.पी.मन्मथन जी की जन्म शताब्दी का आयोजन-समारोह दस बजे शुरु हुआ। वर्ष भर के आयोजन का प्रारंभिक समारोह था। प्रोफसर मन्मथन का व्यक्तित्व कलाकार, वाग्मी, आदर्शधीर, श्रेष्ठ संघाटक का आकर्षक व्यक्तित्व था। इसलिए सम्मेलन गृह खचाखच भरा हुआ रहा था।

विशिष्ट अतिथियों में पूर्व मेघालय रोजापाल माननीय एम.एम.जेकब, केरल सरकार के सांस्कृतिक मंत्री श्री.के.सी.जोसफ, पद्मश्री श्रीमती सुगतकुमारी, गाँधी स्मारकनिधि चेयरमान श्री.पी.गोपिनाथन नायर, पूर्व केन्द्रमंत्री श्री.ओ.राजगोपाल, पूर्व एम.पी. श्री.पी.विश्वंभरन, भाषा इंस्टीट्यूट के निदेशक डॉ.एम.आर.तंपान, अड्वेकेट एन.राजेन्द्रन, जन्मशताब्दी कमेटी चेयरमान डॉ.एन. राधाकृष्णन, सेक्रटरी श्री.के.जगदीशन आदि उपस्थित थे।

प्रोफ. मन्मथन के अनन्य मित्रों में उर्पयुक्त विद्वद्जन विशेष रूप से देशीय धारा में प्रकीर्तित एवं मान्यता प्राप्त हैं। उन सबके अभिमत में प्रोफसर मन्मथन देश के अनोखे व्यक्तित्व के अधिकारी थे। उनके जैसे चरित्र-वान कमर्ठ पुरुष अन्यत्र विरले ही मिलते हैं। उन्होंने अध्यापक जीवन का श्रेष्ठ उदाहरण ही प्रस्तुत किया है। वे सच्चे अर्थ में गाँधी आदर्शों के प्रतिमान थे।

उनके जैसे त्यागमय जीवन का उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलता। वे अपने जीवन में जैसे निर्भीक थे, चरित्रवान थे श्रेष्ठ अभिनेता थे वैसे ही अतुल्य संयमी भी थे। आदर्श के नाम पर ही उन्होंने कोलेज के प्रिंसिपल पद से इस्तिफा दे दिया और बिना किसी प्रकार के आर्थिक लाभ से बाहर आये। जहाँ उन्होंने अपने तपस्या निरत जीवन के कठोर प्रयत्न से केरल भर में अनेक महाविद्यालयों के निर्माण में योगदान दिया वहाँ केरल के एक समुन्नत संस्था एन.एस.एस. को प्राणदान दिया।

जीवन के अंतिम चरणों में एक महान उद्देश्य से उद्प्रेरित होकर उन्होंने मद्यविमुक्त देश की जो संकल्पना की वह आज भविष्य के अंतराल में असंख्य कार्यालोचनाओं केलिए कारण बन गई है। मद्यव्यवसाय से लाभान्वित होकर असंख्य दुराचरणों से संपृक्त होकर चलनेवाली सरकार को विपरीत मार्ग से ले चलना असाध्य तो है। वस्तुतः इस विकट रास्ते से जाने का यात्री बना था मन्मथन जी। इस असाध्य लक्ष्य को साध्य बनाने का पावन कर्म ही जीवनपर्यन्त वे करते रहे थे। जन्मशताब्दी के संचालकों एवं उपर्युक्त सभा नेताओं को मन्मथनजी की अन्तिम संकल्पना की पूर्ति करने की ओर उन्मुखता रही है। अतः इस गति को कार्यान्वित करने में अतीव तत्पर है। उनके संकल्प में यह कार्य आधुनिक देशीय धारा का अनिवार्य लक्ष्य है। इस पवित्र लक्ष्य को उन्होंने जन्मशताब्दी का लक्ष्य मान लिया और उसके कार्य निर्वहण का प्रण ही ले लिया।

पाठकीय प्रतिक्रिया

आदरणीय चन्द्रशेखरन नायर जी, सादर प्रणाम

आपके द्वारा भेजी गई पुस्तक प्राप्त हुई। एक कर्मयोगी की आत्मकथा सरसरी तौर पर यह पुस्तक मैंने पढ़ी है। आप के संघर्ष की गाथा संजोय यह पुस्तक उन तमाम लोगों केलिए प्रेरणा और पथपदर्शक सिद्ध होगी जो अपने अभावों का रोना रोते रहते हैं और अभावों को अपने जीवन की बाधा मान कोई प्रयास नहीं करते। प्राप्त सुविधाओं का उपयोग जीवन को बनाने में नहीं लगाते। आप निश्चय ही एक कर्मयोगी हैं और जीवन के इस पड़ाव पर भी सतत गतिशील। आप को बहुत-बहुत साधुवाद

श्री. संतोष श्रेयांस, संपादक, सृजन लोक, वसिष्ठ नगर, आरा, बिहार-८०२३०१

आदरणीय डाक्टर साहब, सादराभिवादन

एक कर्मयोगी की आत्मकथा आद्योपांत पढ गया। ८६ वर्ष के युवा की आत्मकथा नहीं है यह हिन्दी की आत्मकथा है और प्रत्येक हिन्दी प्रेमी को अवश्य पढ़ना चाहिए। आज हिन्दी की चर्चा वैश्विक संदर्भ में हो रही है। बड़े दम्भ से विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजक प्रचार-प्रसार का नाटक करते हैं और सरकारी पैसे से सरकारी चारण ही विदेशयात्रा कर आते हैं। प्रश्न यह है कि इन योजनाओं से भारतीयेतर कितने लोगों का हिन्दी से जुड़ाव हुआ। प्रवासी भारतीय तो हिन्दीवाले है ही। मौरिशस और फिजी के लोगों का उदाहरण देते हैं। वहाँ की हिन्दी तो हिन्दीवालों द्वारा हो गयी और वहाँ उन्हीं के बीच बनी है।

मूल प्रश्न यथावित् है जहाँ हिन्दी ही नहीं वहां हिन्दी के प्रति आस्था किसने जगायी? हिन्दी को राष्ट्रीय स्वाभिमान से जोड कर पूरे देश को एकसूत्र में बाँधने का कार्य जिस व्यक्ति ने किया, वे अहिंदी भाषी गाँधी जी थे। गाँधीजी की ही प्रेरणा है, जो हिन्दी उन लोगों द्वारा संवर्द्धित हुई जिनकी मातृभाषा नहीं थी। उन महापुरुषों में जिस व्यक्ति का योगदान महत्वपूर्ण है उनमें माधवन जी और आप आते हैं। केरल आज हिन्दीतर क्षेत्रों में हिन्दी का सर्वाधिक सुदृढ दुर्ग है। कोई नहीं जानता कि इसकी नींव आप जैसे मनीषी ने रखी है। मैं ने पहले भी और आज पत्रकारिता के माध्यम से देख लिया कि नवनिकर्ष को जो स्नेह केरल ने दिया है, वह पूरे भारत में नहीं मिला। इसका श्रेय आपके उस संघर्ष में छिपा है, जिसे अपमान सहकर, भविष्य को दाँव पर लगाकर आपने जिया है।

मैं इसे आपकी गाथा नहीं मानता यह हिन्दी गाथा है और हिन्दीवालों को इसे इसलिए पढ़ना चाहिए जिससे उनका दंभ समाप्त हो। आप की साधना को सादर नमन करते हुए। **डॉ.लक्ष्मीकांत पांडेय, प्रधान संपादक, नव निकर्ष, कानपुर-२०४०२१**

केरल के हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास

१९८९ से २०१२ तक का नवीकृत ग्रंथ

भारत सरकार के शिक्षा विभाग केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निदेश पर, उनके सहयोग से तैयार हो गया है।

मूल्य 123.00

- **केरल के हिन्दी साहित्य एवं भाषा का सम्पूर्ण विवरण**
- **दक्षिण के हिन्दी प्रचरण की विस्तृत रूप रेखा**
- **स्कूलों-कालेजों में हिन्दी का प्रवेश और प्रोन्नति**
- **केरल के अब तक जीवित-दिवंगत साहित्यकारों की जानकारी**
- **केरल के विश्व विद्यालयों में हुए हज़ार तक शोधकार्य का सही विवरण**
- **केरल की हिन्दी सेवा-संस्थाओं का परिचय**
- **केरल में हुए पत्र-पत्रिकाओं की रूप रेखा**
- **केरलीय ग्रंथकारों द्वारा रचित ग्रंथ-विवरण-**

അനന്തപുരിയും ഞാനും (മലയാളം ആത്മകഥ) - 400.00

एक कर्मयोगी की आत्मकथा, भारत स्वतंत्रता के रास्ते से (हिन्दी आत्मकथा) (अनुवाद-कौसल्या अम्माळ) - 500.00

एम.ओ. सहित प्राप्ति-पता भेजें : लेखक, चेयरमेन, केरल हिन्दी साहित्य अकादमी, लक्ष्मी नगर, पट्टम पालेस पोस्ट, तिरुवनन्तपुरम - 695004

विश्वात्मा एवं जगत्गुरु स्वामी विवेकानंद - राष्ट्रीय सेमिनार रिपोर्ट

आर. राजपुष्पम

स्वामी जी की १५०-वाँ वर्ष गाँठ २३-२-१३ को एक राष्ट्रीय सेमिनार के रूप में केरल हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा म्यूज़ियम सभागृह में आयोजित हुई। प्रस्तुत राष्ट्रीय सम्मेलन चार सत्रों में विभाजित हुआ था। प्रथम सत्र उद्घाटन सम्मेलन के रूप में रहा था। सम्मेलन का उद्घाटन अकादमी के मंत्री श्रीमती राजपुष्पम की प्रार्थना के साथ कार्यारंभ हुआ। प्रार्थना गान के पश्चात् अकादमी की महामंत्री एवं केरल विश्व विद्यालय हिन्दी विभाग की अध्यक्षा एवं भाषा संकाय की सदस्या डॉ.तंकमणि अम्मा ने स्वागत भाषण से श्रोताओं को हर्षातिरेक से सचेत किया। उद्घाटन का समुचित निर्वहण एम.एल.ए. श्री. के.मुरलीधरन ने

श्री.के.मुरलीधरन नायर

किया जो प्रसिद्ध राजनैतिक नेता श्री. करुणाकरन जी के सुपुत्र हैं। उन्होंने भारतीय अध्यात्मचिंतन और उसको स्वामीजी की देन आदि विषय पर गंभीर भाषण दिया। तिरुवनंतपुरम के शिक्षा क्षेत्र के गुरुजनों छात्रों के अलावा स्थानीय सामाजिक राजनैतिक एवं साहित्यिक प्रतिष्ठित जनों से सभा संपन्न रही थी। सम्मेलन की अध्यक्षता के माननीय अध्यक्ष डा.एन.चन्द्रशेखरन नायर जी ने ग्रहण की थी। भारत के आध्यात्मिक परिवेश से विशेष रूप से आलोकित रहनेवाले अध्यक्ष ने आर्षभूमि की विरासत पर विशेष रूप से प्रकाश डाला था।

डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर

बीज भाषण का निर्वहण अकादमी के संरक्षक श्रेष्ठ जस्टीस एम.आर.हरिहरन नायर ने ही किया था। केरल के नैतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में विशेष ख्याति प्राप्त श्री. हरिहरन नायर जी ने भारत में विश्वगुरु स्वामी विवेकानन्द के प्रवृत्तन, भाषण तथा कर्मठ जीवन का सविस्तर व्याख्यात्मक प्रतिपादन किया। आगरा निवासी एवं महाराष्ट्र महाविद्यालय में प्रथम अध्यापक के रूप में काम करनेवाले प्रख्यात साहित्यकार डा. पंडित बन्ने की अनुपस्थिति के अभाव को जस्टीस एम.आर.हरिहरन नायर जी के भाषण ने पूरा किया।

जस्टिस एम.आर.हरिहरन नायर

अगला सत्र चाय के बाद प्रारंभ हुआ। प्रस्तुत सत्र में स्वामी विवेकानंद के आध्यात्मिक जीवन विश्वकल्याणकारी प्रभाषण, भगवान श्रीरामकृष्ण देव के शिष्य के रूप में स्वामीजी का जीवन, स्वामीजी के चारित्रिक एवं विश्व गुरु के रूप में उनका तपस्यानिरत यात्रावर्णन, केरल एवं कन्याकुमारी में उनका संचरण, उनके जीवन का जगत पर प्रभाव आदि विषयों पर केरल के विशेष कर तिरुवनन्तपुरम के वीसों कालेजीय अध्यापकों एवं शोध छात्रों के आलेख्र प्रस्तुत हुए। निम्न वक्ताओं ने आलेख्र प्रस्तुत किया था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता यूनिर्वेसिटी कालेज के हिन्दी विभाग के प्रधान अध्यापक एवं सिद्धहस्त साहित्यकार डा. जयमोहन ने की थी।

डा. प्रोफसर बिन्दु वेल्सर, प्रो.डॉ.टी.ई.प्रीता रमणी, डॉ.प्रो.आशा एस. नायर, डॉ.प्रोफ. श्रीचित्रा वी.एस., डॉ.प्रो.एच.महेष, डॉ.उदयकुमारी, डॉ.षीना यू.एस., डॉ. रेखा आर. नायर, डॉ.एस.एस.लक्ष्मी, डॉ.श्रीकला जी.एस, राखी ए.आर., दिव्या वी.एच., कुमारी आशादेवी एम.एस., कुमारी रीजा आर.एस. और दिव्या एस की ओर से आलेख्र प्रस्तुति हुई। आलेख्र प्रस्तुति के पश्चात् श्रोताओं के द्वारा चर्चा-परिचर्चाएँ संपन्न हुई। इस

सत्र का पूरा समर्थ संचालन सरकारी महिला कालेज की हिन्दी प्राध्यापिका डॉ.पी.लता ने बखूबी किया था।

मध्याह्न भोजन के पश्चात् दो बजकर ३० मिनट पर तीसरा सत्र डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर की नवति आदर के रूप में प्रारंभ किया। सम्मेलन का अध्यक्ष भाषण श्रीमती आर.राजपुष्पम के प्रार्थनागीत के पश्चात् केरल के सर्वमान्य बी.जे.पी. नेता तथा पूर्व केन्द्रमत्री श्री.ओ.राजगोपाल जी ने किया। डॉ.नायरजी श्री. ओ.राजगोपालजी से

अनेक वर्षों से परिचय एवं मैत्री में हैं। केन्द्र सरकार के रेल मंत्रालय में वे तीस साल पहले से हिन्दी उपदेशक रह चुके थे। श्री. राजगोपालजी के मंत्रीकाल में भी वे मंत्रालय के हिन्दी सलाहकार रहे थे। इस नाते उन दोनों के बीच में निकटतम संबंध रहा था। मंत्री महोदय डॉ.नायर जी से उनके निर्देशों के कारण विशेष प्रभावित थे। इस नवति आदर के शुभ सम्मेलन में श्री.ओ.राजगोपालजी का अध्यक्ष रहना विशेष स्वाभाविक एवं समयानुकूल रहा था। हिन्दी संबंधी बैठकों में मंत्री के रूप में ओ.राजगोपालजी ही अध्यक्षता ग्रहण करते थे। इस कारण अध्यक्षता का भाषण मधुर-बनाने में श्री.ओ.राजगोपालजी सक्षम रहे थे। सम्मेलन का स्वागत भाषण अकादमी की महामंत्री एवं डॉ.नायर जी की प्रिय शिष्या तथा हिन्दी के जानीमानी लेखिका डॉ.एस.तंकमणि अम्मा ने प्रस्तुत विशिष्ट संदर्भ को मधुर बनाते हुए किया था। नायर जी के बहुआयामी व्यक्तित्व का स्वागत भाषण में अनावरण ही हुआ था। स्वागत भाषण में केरल के संस्कृति मंत्री माननीय **सी.के.सी. जोसफ** जी और आदरणीय **श्री. परमेश्वर** जी का भी विशेष परिचय हुआ था। **श्री. के.सी. जोसफ** जी सम्मेलन का उद्घाटन करके सभा को प्रबुद्ध कर दिया था। उन्होंने श्री विवेकानंद के विश्वव्यापी अभिनंदनों का उस संदर्भ में स्मरण दिलाया। इसी संदर्भ में स्मर्यपुरुष डॉ.नायरजी का नवति आदर भी बिलकुल शुभकार्य है ऐसा उद्घोषण उन्होंने किया। विचार परिषद के निदेशक एवं देश के सर्वाधरणीय श्री. परमेश्वर जी का नवति आदर संबंधी प्रभाषण विशेष रूप से आकृष्ट एवं अनुकरणीय रहा था। श्री. परमेश्वर जी और स्मर्य पुरुष डॉ.नायर वर्षों के परिचित हैं। केरल हिन्दी साहित्य अकादमी भारतीय सांस्कृतिक विचारधारा से प्रारंभ से ही अनुप्राणित रही है विशिष्ट भारतीय जनों के पर्वों को मनाते

डॉ.नायरजी के ग्रंथों को मंत्री महोदय देखते हैं

में सदैव जागरूक रही है। परमेश्वर जी ने कहा है कि इस प्रकार के धन्यतापूर्ण कार्यों के निवंहण के कारण आज यह संस्था दुनिया भर स्मरण की जाती है।

अगला सत्र एक संस्कृतिक ग्रंथ के लोकार्पण का था। "श्रीमद् भागवतम् एकादश स्कंदम - मुक्ति स्कन्दम" नामक ग्रंथ कर लोकार्पण अतिविशिष्ट कार्य रहा था। इस लोकार्पण संबंधी सम्मेलन में तिरुवनन्तपुरम के सात विशिष्ट व्यक्तियों का भाषण हुआ था। ग्रंथ का लोकार्पण श्री. परमेश्वर जी ने प्रख्यात विद्वान एवं सन्यासी स्वामी अश्वति तिरुनाल को प्रथम प्रति देते हुए किया था। श्रीमद् भागवतम के महत्व एवं आध्यात्मिकता

को पहचाननेवाले परमेश्वरजी और अश्वति तिरुनाल दोनों ने ग्रंथ के प्रतिपादन का समुचित विस्तार के साथ वर्णन किया। मुख्यतः ग्रंथ का

आधार हैन्दव धर्म का तत्व विचार है। यह अन्यधर्मों केलिए भी आदरणीय हो सकता है। इस ग्रंथ का प्रवचन करनेवाले केरल के ब्रह्मज्ञ दो साधुपुरुषों ने प्रस्तुत रचना का महत्व प्रतिपादित किया है। स्वामी भूमान्दजी महाराज और स्वामी उदित चैतन्य दोनों साधुपुरुष संसार भर के प्रख्यात सन्तपुरुष हैं। उन दोनों ने प्रस्तुत रचना की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इसके बारे में भी व्याख्यादादाओं ने इंगित किया है।

अध्यक्षीयभाषण

भारत नवोत्थान और स्वामी विवेकानन्द

सन् अठारह सौ तिरासठ में जन्मे स्वामी जी की जन्मशताब्दी सन् उन्नीस सौ तिरासठ में धूमधाम से मनायी गयी। देशभर स्वामी विवेकानंद के नाम पर उन दिनों भारत का आध्यात्मिक महोत्सव मुखरित हुआ था। आज इस वर्ष में उनके एक सौ पचासवाँ वर्ष देश के कोने कोने में आचरित किया जा रहा है! वह लाल पगडी और बंधे हुए हाथ देश के सम्मान्य गौरव का विलम्बर करते हुए सर्वत्र आनन्द देते हुए दिखाई दे रहे हैं। अन्यत्र कहीं कहीं होनेवाले अनाचार एवं आक्रामक परिस्थितियों के अपमान और मनोपीडन पर मानो पर्दा डाला जा रहा है। वास्तव में ये दो रूप प्रकृति तथा पुरुष का सार्वकालिक स्वरूप हैं।

हम जीवन के वस्तु-तत्व में प्रकृति के साथ हैं, जो सनातन सत्य जैसा है। लेकिन हम तभी मनुष्य बनते हैं, जब हम पुरुष बन जाते हैं। वह पुरुष ही स्वामी विवेकानन्द के रूप में प्रत्यक्ष रहे थे। वस्तुतः पुरुष ही शाश्वत रहता है वही, प्रकृति को भी बनाये रखता है। वही पुरुष ही जीवन का आनन्द-तत्व है। आज हम एक सौ पच्चास वर्षों के पश्चात् भी विवेकानन्द का यथार्य अर्थ समझते हैं कि "विवेक से ही आनन्द संभव है", तो हम जीवित रहने के अधिकारी हैं। इस तत्व का हम आचार नहीं करते, बल्कि अनुभव करके हम स्वयं आनन्द में रहते हैं।

स्वामीजी अपना प्रथम भाषण सन् अठारह सौ तिरानबे सितंबर की ग्यारह तारीख को चिकागो के धर्म सम्मेलन में किया था। सन् १९०२ जूलाई दो को उनकी महासमाधि हुई। इस नौ वर्षों के अंतराल में उन्होंने जितने भाषण किये वे कम नहीं थे! लेकिन उन्होंने इन भाषणों को कभी लिख नहीं रखा था। पर ये भाषण लिपिबद्ध मिले हैं। स्वामी जी के एक शिष्य गुडविन ने उनके भाषणों को सुनकर लिख रखा था। जहाँ जहाँ स्वामीजी जाते वहाँ वहाँ गुडविन उनका अनुधावन करते थे। लेकिन वे सन् अठारह सौ अठानबे को ऊट्टि में दिवंगत हुए। केवल अढ़ाई वर्षों के सम्पर्क में जितना लिख सके उतना ही आधिकारिक रूप से स्वामी जी के विचार संसार पा सके। स्वामीजी के, उन प्राप्त भाषणों के आधार पर ही उन्नीस सौ तिरासठ में उनकी जन्म शती के अवसर पर सात खंडों का 'विवेकानन्द साहित्य सर्वस्व' निर्मित हुआ था। सूचनार्थ निवेदन है, श्रीरामकृष्ण आश्रम त्रिचूर द्वारा प्रकाशित उन सात खण्डों का अध्ययन स्वामीजी का संपूर्ण विवरण देता है।

आत्मा के पौरुष में जीवित रहते हुए संसार को सचेतन में लाने का परिश्रम ही स्वामीजी ने किया था। उनके आत्मबल के सामने संसार झुक गया। स्वामीजी ने स्पष्ट समझाया कि जीवन का सार आत्मा को जानना है, अतः उसे जानने केलिए एक मात्र उपाय आत्मविद्या है। स्वामीजी के एक ही वाक्य से भारत नवोत्थान का आशय समझ सकते हैं, "महर्षियों के देश की संतानें पैरों तले पडे कराह रहे हैं। आज हम वहाँ से उठ खडे हो जायेंगे। धैर्य और बल अर्जित करके हम मनुष्य का स्वत्व समझकर स्थाई मनोबल एवं शरीर शक्ति से संसार का उद्धार करेंगे"। मद्रास के सुविख्यात भाषण में उनका आह्वान सुन लें - "मेरा समरकार्यक्रम यही है, हमें सबसे पहले करने का काम यही है कि उपनिषदों आध्यात्मिक ग्रंथों में छिपे पडे हुए अतीव अद्‌भुत सत्यों को बाहर लाना है। उत्तर-दक्षिण सब के सब जगहों में, सिन्धु से ब्रह्मपुत्रा तक देश भर छाये गये अज्ञान आग में जल उठें। सब मनुष्य उस ज्ञान के ताप से तप जाये।"

"उत्तिष्ठ भारत" स्वामी का आह्वान हम सुनेंगे, अपनायेंगे।

डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर

विश्वात्मा एवं जगत्गुरु स्वामी विवेकानंद - सेमिनार रिपोर्ट...

जस्टीस श्री. एम.आर. हरिहरन नायर ने प्रस्तुत ग्रंथ पर आध्यात्मिक लेख्र प्रस्तुत किया जो हिन्दु धर्म के तत्व विचारों को चरितार्थ करनेवाला है। सर्वश्री एडवकेट के. अय्यप्पन पिल्लै और श्री. के. रामनपिल्लै दोनों केरल के प्रख्यात राजनैतिक एवं सांस्कृतिक नेतृत्व के प्रतिनिधि पुरुष हैं। निन्यानब्बे वर्ष के श्री. अय्यप्पन पिल्लै जी डॉ.नायरजी के प्रति सद्‌भाव रखनेवाले रहे हैं। वर्षों से उनके बीच में गहरा आध्यात्मिक एवं सामाजिक विषयों का संबंध था। श्री.के.रामनपिल्लै जी ने भी नायर जी को सुवर्ण वस्त्र पहनाकर उनके द्वारा रचित ग्रंथ का अभिनंदन और अनुमोदन किया। श्री.के.राजेन्द्रनजी ग्रंथ के प्रकाशक ही नहीं बल्कि एक धार्मिक पुरुष भी हैं। उन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ पर आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। उपर्युक्त चारों सत्रों के समापन के पश्चात् डॉ.एन. चन्द्रशेखरन नायर जी का कृतज्ञता ज्ञापन रहा था। साथ ही उन्होंने उपस्थित लेखकों को प्रमाणपत्र वितरण भी किया। राष्ट्रगीत के पश्चात् सभा ने मिलकर चाय सत्कार का आनंद उठाया।

सचिव, केरल हिन्दी साहित्य अकादमी

മുഖ്യപ്രഭാഷണം: ജസ്റ്റിസ് എം.ആർ. ഹരിഹരൻ നായർ

മുഖ്യപേട്രൻ, കേരളഹിന്ദി സാഹിത്യ അക്കാദമി

യോഗാദ്ധ്യക്ഷൻ ഡോക്ടർ എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ, ഉദ്ഘാടനകൻ ശ്രീ.കെ.മുരളീധരൻ, വേദിയിലും സദസ്സിലും ഇരിപ്പുള്ള വിശിഷ്ട വ്യക്തികളേ, സുഹൃത്തുക്കളേ,

ഇന്നത്തെ കാലത്ത് വളരെ പ്രസക്തിയുള്ള ഒരു സെമിനാറാണ് ഇന്നിവിടെ നടക്കുന്നത്. തിന്മയുടെ തേരോട്ടമാണ് ഓരോ ദിവസവും പത്രപംക്തികളിൽ നിറഞ്ഞുനിൽക്കുന്നത്. എവിടെയും കൊലപാതകങ്ങൾ, മാതൃ-പിതൃ-സഹോദരബന്ധങ്ങളെല്ലാം മറന്നുള്ള മൃഗീയ പീഡനങ്ങൾ, അഴിമതി എന്നിങ്ങനെ ആ ലിസ്റ്റ് നീണ്ടുപോകുന്നു. ഇത് ഭാരതത്തിൽ മാത്രം കാണുന്ന ഒരു പ്രതിഭാസമല്ലെന്ന് ഓർക്കണം. ചെറുപ്പക്കാരിലുള്ള കുറ്റവാസനയുടെയും തോക്കിനോടുള്ള പ്രേമത്തിന്റെയും കഥകളാണ് അമേരിക്കയിൽ നിന്നും നാം കേൾക്കുന്നത്. ശക്തമായ നിയമനിർമ്മാണം കൊണ്ടു മാത്രം തിരുത്താവുന്ന ഒരു കാര്യമല്ലിത്. മനുഷ്യന്റെ ധാർമ്മിക നിലവാരം ഉയർത്തുക എന്നതും പരമപ്രധാനമാണ്. കഴിഞ്ഞയാഴ്ച കൊച്ചി മുസൂറി ബിനാലേ എക്സിബിഷൻ കാണാൻ ഇടയായി. അവിടുത്തെ ഒരു കാഴ്ച ഇരുട്ടിന്റെ പശ്ചാത്തലത്തിൽ കണ്ട് ആസ്വദിക്കേണ്ടതാണ്. അത് ആ രൂപത്തിൽ ആസ്വദിക്കാൻ ഇപ്പോൾ സാധ്യമല്ല. കാരണം ഗൈഡ് വ്യക്തമാക്കി തന്നു. ആദ്യ ദിവസങ്ങളിൽ തന്നെ ആ മുറിയിൽ കാണികളായെത്തിയ വിദേശികളും തദ്ദേശീയ വാസികളുമടങ്ങിയ സ്ത്രീജനങ്ങളും ചില്ലറ പീഡനങ്ങൾക്ക് വിധേയരായി. സ്ത്രീത്വത്തെ ബഹുമാനിക്കാൻ നാം ഇനിയും പഠിക്കേണ്ടിയിരിക്കുന്നു. കയ്യെത്തും ദൂരത്ത് എത്തിപ്പെടുന്ന ഏതു സ്ത്രീയെയും ആക്രമിക്കാൻ മടിക്കേണ്ടതില്ലെന്നും പിടിക്കപ്പെട്ടാൽ തന്നെ വലിയ ബുദ്ധിമുട്ടുകൾ കൂടാതെ രക്ഷപ്പെടാമെന്നുള്ള ചിന്താഗതി പരക്കെ വ്യാപകമായിരിക്കുന്നുവോ എന്നു സംശയിക്കേണ്ടിയിരിക്കുന്നു. കുറ്റവാളികളെ സത്വര വിചാരണ ചെയ്ത മതിയായ ശിക്ഷ ഉറപ്പാക്കുക എന്നതിനോടൊപ്പം ചെയ്യേണ്ട മറ്റൊരു കാര്യമുണ്ട്. പൗരധർമ്മങ്ങളുടെ പ്രാധാന്യവും ഭാരതത്തിന് സ്വാതന്ത്ര്യം നേടിത്തരുന്ന കാര്യത്തിൽ നമ്മുടെ സമരസേനാനികളും മുൻഗാമികളും സഹിച്ച ത്യാഗവും ഭരണഘടനയുടെ അന്തസ്സത്തയും അതിലെ മാർഗ്ഗനിർദ്ദേശക തത്വങ്ങളുടെ പ്രാധാന്യവും ഭാരതപൗരന്മാരിൽ നിന്നും പ്രതീക്ഷിക്കുന്ന മൗലിക ചുമതലകൾ എന്തൊക്കെയാണെന്നും ഭാരതം എക്കാലവും പിൻതുടർന്നു വന്ന ഉന്നത ധാർമ്മിക നിലവാരം പുനഃസ്ഥാപിക്കേണ്ടതിന്റെ പ്രാധാന്യവും വളർന്നുവരുന്ന തലമുറ മനസ്സിലാക്കിയേ പറ്റൂ. സ്ത്രീത്വത്തെ ബഹുമാനിക്കാനും രാഷ്ട്രത്തിന്റെ അഖണ്ഡത കാത്തുസൂക്ഷിച്ചുകൊണ്ട്, കക്ഷിരാഷ്ട്രീയ പരിഗണനകൾക്കു അതീതമായി നാടിനെ മുന്നോട്ടു കൊണ്ടുപോകുന്ന കാര്യത്തിലും വിദ്യാർത്ഥികളെ പ്രബുദ്ധരാക്കണം. ഇവിടെയാണ് സ്വാമി വിവേകാനന്ദന്റെ ഉദ്ബോധനങ്ങളുടെ പ്രസക്തി.

39 വർഷവും അഞ്ചുമാസവും 22 ദിവസവും മാത്രം നീണ്ടു നിന്ന ഹ്യസ്വകാലജീവിതത്തിനിടയ്ക്ക് തന്റെ തലമുറയ്ക്ക് മാത്രമല്ല, വരാനിരിക്കുന്ന തലമുറകൾക്കും സന്മാർഗ്ഗ ദർശനം നൽകിയ വീരപുത്രനാണ് അദ്ദേഹം. ആത്മീയതയ്ക്ക് അദ്ദേഹം പുതിയ മാനങ്ങൾ കണ്ടെത്തി. ഭയരഹിതമായും വിനയത്തോടെയും മൂല്യബോധനത്തോടെയും സാമൂഹ്യ പ്രതിബദ്ധതയോടെയും ജീവിതത്തെ സമീപിക്കാനാണ് അദ്ദേഹം ആഹ്വാനം ചെയ്തത്. ആത്മീയത എന്നാൽ ശ്ലോകങ്ങൾ ചൊല്ലിയും ധ്യാനത്തിലൂടെയും മുക്തി തേടുക എന്നതല്ലെന്നും സഹജീവികളോടൊപ്പം പരസഹായം ചെയ്ത് ജീവിച്ച് എല്ലാ പ്രശ്നങ്ങളെയും സമചിത്തതയോടെയും ധീരതയോടെയും നേരിടുകയാണ് കരണീയമെന്നും അദ്ദേഹം നമ്മെ പഠിപ്പിച്ചു. 1892-ൽ ഹിമാലയത്തിൽ നിന്നാരംഭിച്ച് കന്യാകുമാരിയിൽ അവസാനിച്ച ഭാരതപര്യടനത്തിനിടയിൽ അദ്ദേഹം ഈ രാജ്യത്ത് നിലവിലുള്ള വൈരുദ്ധ്യങ്ങളും ദരിദ്രരുടെ യാതനകളും എല്ലാം നേരിൽ മനസ്സിലാക്കി. 1893 സെപ്റ്റംബറിൽ ഷിക്കാഗോയിൽ വച്ചു നടന്ന മതമഹാസമ്മേളനത്തിൽ അദ്ദേഹം ഭാരതത്തെക്കുറിച്ചും നമ്മുടെ ആത്മീയ സങ്കല്പങ്ങളെക്കുറിച്ചും പാശ്ചാത്യർക്കുണ്ടായിരുന്ന മിഥ്യാ ധാരണകൾ തിരുത്തിക്കുറിച്ചു. മനുഷ്യന്റെ ഉള്ളിൽ കുടികൊള്ളുന്ന ആത്മീയശക്തിയെ ഉണർത്തി അവന്റെ ഓജസ്സും വീര്യവും ശരിയായി ഉപയോഗിച്ചാൽ യുവജനങ്ങൾക്ക് സമൂഹത്തിൽ വലിയ മാറ്റങ്ങൾ വരുത്താൻ കഴിയും എന്ന് അദ്ദേഹം നമ്മെ പഠിപ്പിച്ചു. എല്ലാ മതങ്ങളും ദൈവത്തിലേക്ക് നയിക്കുമെന്നും ഏറ്റവും മഹത്തായ ഈശ്വരാരാധന സ്നേഹപൂർവ്വമായ മനുഷ്യസേവനം തന്നെയാണെന്നും അദ്ദേഹം നമുക്കു പറഞ്ഞുതന്നു.

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन

डॉ.बिन्दु वेलसर

वेदान्त के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु स्वामी विवेकानन्द का जन्म १२ जनवरी सन् १८६३ को कोलकत्ता में हुआ था। इनके बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। उनके पिता श्री विश्वनाथ दत्त कलकत्ता हाइकोर्ट के एक प्रसिद्ध वकील थे। वे अंग्रेज़ी सभ्यता पर विश्वास रखते थे। वे अपने पुत्र नरेन्द्र को भी अंग्रेज़ी पढाकर पाश्चात्य सभ्यता के समर्थक बनाना चाहते थे। रोमा रोला ने नरेन्द्र के बचपन के बारे में बताया था 'उनका बचपन और युवावस्था के बीच का काल योरोप के पुनरुज्जीवन-युग के किसी कलाकार राजपुत्र के जीवन प्रभात का स्मरण दिलाता है।' उनकी माता श्री भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों की महिला थी। उनका अधिकांश समय भगवान शिव की पूजा अर्चना में व्यतीत होता था। नरेन्द्र को संगीत, साहित्य और दर्शन में भी विशेष रुचि थी। तैराकी, घुडसवारी और कुश्ती उनका शौक था। नरेन्द्र की बुद्धि बचपन से ही बडी तीव्र थी और भगवान को पाने की लालसा भी प्रबल थी। इस हेतु वे पहले ब्रह्मसमाज में गये लेकिन वहाँ उनके चित्त को सन्तोष नहीं हुआ। कई साधु सन्तों के पास भटके, नास्तिक भी हो गये। अंततः रामकृष्ण के सामने हार गये। रामकृष्ण के रहस्यमय व्यक्तित्व ने उन्हें प्रभावित किया, जिससे उनका जीवन बदल गया। १८८१ में रामकृष्ण को उन्होंने अपना गुरु स्वीकार किया। गुरुदेव के अंतिम दिनों में वे सब कुछ छोडकर गुरुसेवा में सतत संलग्न रहे। गुरुदेव की मृत्यु के बाद २७ वर्ष की अवस्था में वे गेरुआ वस्त्र धारण किये। तत् पश्चात् उन्होंने पैदल ही पूरे भारत वर्ष की यात्रा की।

१८८४ में पिता की मृत्यु के बाद घर का भार नरेन्द्र पर आ पडा। घर की दशा बहुत खराब थी। इस अवस्था में भी स्वयं भूखे रहकर अतिथियों के सत्कार की गौरव गाथा उनके जीवन का उज्ज्वल अध्याय रहा था।

रामकृष्ण से भेंट

पाश्चात्य दार्शनिकों के निरीश्वर भौतिकवाद और भारत दार्शनिकों के ईश्वर पर दृढ विस्वास के कारण नरेन्द्र को गहरे द्वन्द्व से गुज़रना पडा। उसी समय उसकी मुलाकात श्री रामकृष्ण से हुई उन्होंने उसे विश्वास दिलाया कि ईश्वर है और मनुष्य ईश्वर को पा सकता है। श्री रामकृष्ण

മുഖ്യപ്രഭാഷണം...

മനുഷ്യജന്മത്തിലെ ഏറ്റവും മഹനീയമായ ജീവിത ഘട്ടമാണ് യൗവ്വനകാലം. ആദരവും സന്തോഷവും സൽപ്പേരുമെല്ലാം ആ കാലത്തു തന്നെ ആർജ്ജിക്കണമെന്നും ശാരീരികസുഖമാണ് പരമപ്രധാനമെന്ന മിഥ്യാധാരണ മാറ്റണമെന്നും അദ്ദേഹം നമുക്കു പറഞ്ഞുതന്നു. ശ്രേഷ്ഠമായ ഒരു ജീവിതശൈലി നേടിയെടുക്കുകയാണ് ജീവിതവിജയത്തിന് അത്യന്താപേക്ഷിതമായിട്ടുള്ളത്. വിവേകാനന്ദ കൃതികൾ ആലോകാടിസ്ഥാനത്തിലുള്ള മഹാന്മാരെ വലുതായി സ്വാധീനിച്ചു. ഭാരതത്തെ അറിയണമെങ്കിൽ സ്വാമി വിവേകാനന്ദനെ അറിയണമെന്ന് നമ്മോടു പറഞ്ഞത് മഹാകവി രവീന്ദ്രനാഥ ടാഗോറായിരുന്നു. വിവേകാനന്ദ കൃതികൾക്ക് അവതാരിക ആവശ്യമില്ലായിരുന്നു മഹാത്മാഗാന്ധിയുടെ അഭിപ്രായം. ലിയോ ടോൾസ്റ്റോയ് ഉൾപ്പെടെ അനേകം ചിന്തകരേ വിവേകാനന്ദ കൃതികൾ സ്വാധീനിച്ചു. നാം കടന്നു പോയിക്കൊണ്ടിരിക്കുന്ന ഇരുണ്ട യുഗത്തിൽ സ്വാമിയുടെ നിഗമനങ്ങൾക്കും ഉപദേശങ്ങൾക്കും വലിയ പ്രാധാന്യമുണ്ട്. അലസതയിൽ നിന്നും ഉണർന്നെണീറ്റ് ലക്ഷ്യപ്രാപ്തി വരെ കഠിനപ്രയത്നം നടത്താനാണ്, ഉത്തിഷ്ഠത, ജാഗ്രത, പ്രാപ്യവരാന്നിബോധത എന്ന മുദ്രാവാക്യത്തിലൂടെ അദ്ദേഹം നമ്മെ ഉദ്ബോധിപ്പിച്ചത്. നമുക്ക് ആ കാൽപ്പാടുകൾ പിൻതുടരാം. ഇന്ന് ഇവിടെ അവതരിപ്പിക്കാൻ പോകുന്ന പ്രബന്ധങ്ങളുടെ പ്രസിദ്ധീകരണത്തിനായി നമുക്ക് കാത്തിരിക്കാം. കായികാധ്വാനമുള്ള തൊഴിൽ ചെയ്യാനുള്ള വിമുഖതയും അലസജീവിതവും മദ്യാസക്തിയും ലഹരിയിലൂടെ നൈമിഷിക സുഖം തേടാനുള്ള ആസക്തിയും മാറ്റിയാൽ മാത്രമേ നമ്മുടെ യുവതലമുറയ്ക്ക് മുന്നേറാനാവൂ. നമുക്ക് മാതൃകാനേതാക്കൾ ഉണ്ടാകട്ടെ. നമ്മുടെ വിദ്യാലയങ്ങളിൽ നിന്നും പഠിച്ചിറങ്ങുന്ന കുട്ടികൾ ആദർശധീരരും മാതൃരാജ്യത്തിന് വേണ്ടി ത്യാഗങ്ങൾ ചെയ്യാൻ തയ്യാറുള്ളവരും അക്രമപ്രവർത്തനങ്ങളിലൂടെ പൊതുമുതൽ നശിപ്പിച്ച് സർക്കാരിനെ മുട്ടുകുത്തിച്ച് എന്തെല്ലാം ആനുകൂല്യങ്ങൾ പിടിച്ചു വാങ്ങാം എന്നുള്ള ചിന്താഗതിയിൽ നിന്നും മാറി രാജ്യത്തിനും സമൂഹത്തിനും എനിക്ക് എന്തു സഹായം ചെയ്യാൻ കഴിയും എന്ന് ചിന്തിക്കുന്നവരാക്കി മാറ്റാൻ കഴിയുമെങ്കിൽ നമ്മുടെ രാജ്യം രക്ഷപ്പെടും. അതായിരിക്കും സ്വാമി വിവേകാനന്ദനോട് നമുക്കുള്ള ബഹുമാനവും കടപ്പാടും പ്രകടിപ്പിക്കാനുള്ള ഏറ്റവും നല്ല മാർഗ്ഗം.

ഈ സെമിനാർ ഈ അവസരത്തിൽ സംഘടിപ്പിക്കാൻ മുൻകൈയ്യെടുത്ത പ്രൊഫസർ ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരെയും ഇവിടെ പ്രബന്ധാവതരണത്തിനായി മുന്നോട്ടു വന്ന അദ്ധ്യാപകർ, വിദ്യാർത്ഥികൾ എന്നിവരെയും അഭിനന്ദിച്ചുകൊണ്ട് ഞാൻ എന്റെ ചെറു പ്രസംഗം അവസാനിപ്പിക്കട്ടെ. ജയ് ഹിന്ദ്.

परमहंस जैसे महापुरुष के स्पर्श ने नरेन्द्र को बदल दिया। कहा जाता है कि उस अग्निपात के कारण कुछ दिनों तक नरेन्द्र उन्मत्त से रहे। उन्होंने सर्वव्यापी परमसत्य के रूप में ईश्वर की अनुभूति करने का मार्गदर्शन नरेन्द्र को दिया और यह शिक्षा दी कि सेवा कभी दान नहीं, बल्कि सारी मानवता में निहित ईश्वर की सचेतन आराधना होनी चाहिए। यह उपदेश विवेकानन्द के जीवन का प्रमुख दर्शन बन गया। उन्हें गुरु ने आत्मदर्शन करा दिया। जीवन के आलोक को जगत के अन्धकार में भटकते प्राणियों के समक्ष उन्होंने उपस्थित किया। गुरुदेव की मृत्यु के बाद २७ वर्ष की अवस्था में उन्होंने गेरुआ वस्त्र धारण किया। तत् पश्चात् पैदल ही पूरे भारत वर्ष की यात्रा की। इन छह वर्षों के भ्रमण काल में वे राजाओं तथा दलितों, दोनों के अतिथि रहे। उनकी यह महान यात्रा कन्याकुमारी में समाप्त हुई, जहाँ ध्यानमग्न विवेकानन्द को यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि मनुष्य की आत्मा में सुप्त दिव्यता के जागरण से ही इस मृतप्राय देश में प्राणों का संचार किया जा सकता है। भारत के पुनर्निर्माण के प्रति उनके लगाव ने ही उन्हें अन्ततः १८९३ में शिकागो धर्म संसद में जाने केलिए प्रेरित किया, जहाँ वे बिना आमन्त्रण के ही गए थे, संसद में उनके प्रवेश की अनुमति मिलना ही कठिन हो गयी। उनका विचार था कि पराधीन भारन क्या सन्देश देगा। योरोपीय वर्ग को भारत के नाम से ही घृणा थी। फ़िर एक अमेरिकन प्रोफ़सर के प्रयत्न से किसी प्रकार समय मिल गये ११ सितंबर १८९३ के भाषण ने पाश्चात्य जगत को चौंका दिया। सिस्टर्स एण्ट ब्रदर्स आँफ़ अमेरिका इस सम्बोधन के साथ भाषण शुरुआत करते ही ७००० प्रतिन्तधियों ने तालियों के साथ उनका स्वागत किया। १८९६ तक वह अमेरिका रहे। 'अध्यात्म विद्या और भारतीय दर्शन के बिना विश्व अनाथ हो जाएगा' यह विवेकानन्द का दृढ विश्वास था। अमेरिका में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की कई शाखायें स्थापित की। अनेक अमेरिकन विद्धानों ने उनका शिष्यत्व ग्रहण किया। इस समय उन्होंने विदेश में भारतीय धर्म दर्शन अद्वैत वेदान्त की श्रेष्ठता सिद्ध कर पराधीन भारत को ऐसा गौरव का क्षण प्रदान किया जिससे जन जन में आत्मबोध हुआ। उन्होंने मनुष्य और उसके उत्थान और कल्याण को सर्वोपरि माना व धार्मिक जड सिद्धान्तों और साम्प्रदायिक भेदभाव को मिटाने के आग्रह किया। इसप्रकार भारत एवं हिन्दु धर्म के महत्व पहली बार विदेशों में पहुँच गया।

विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन नीतिशास्त्र, धर्म व नैतिकता का सम्मिश्रण था। उसमें प्रकृतिवाद तथा प्रयोजनवाद की झलक दृष्टिगत थी। आपकी शिक्षा संबन्धी प्रत्येक विचारधारा ने मानव निर्माणकारी शिक्षा का योगदान दिया। उनके अनुसार शिक्षा का अंतिम उद्देश्य आत्मानुभूति था, क्योंकि दुःखों से मुक्ति आत्मानुभूति से ही संभव है। स्वामी विवेकानन्द गहन विवेकशील, मननशील और निर्णयशील थे। उनकी आत्मा के अनेक पक्ष थे। जिसप्रकार हीरे में सुन्दरता व चमक दोनों होती है उसीप्रकार उनके अध्यात्मवाद के एक पक्ष ने बुद्ध के मानवतावाद को प्रतिबिंबित किया तो दूसरे पक्ष ने शंकराचार्य के अद्वैतवाद को। उनका विश्वास था कि बौद्धिक उपलब्धि की तुलना में चरित्र अधिक महत्वपूर्ण या और अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्यों का महत्व अधिक था। स्वामी ने कर्म का जो दर्शन प्रस्तुत किया उसमें शंकर का बुद्धितत्व और बुद्ध का प्रेम मिला हुआ है।

स्वामीजी के अनुसार वर्तमान शिक्षा का सबसे बडा दोष यह है कि उसका कोई प्रत्येक लक्ष्य नहीं है। शिल्प बनाने से पहले ही शिल्पी जानते है कि वे क्या बनाने जा रहे है और उसका शिल्प कैसे होना चाहिए, वैसे ही चित्रकार चित्र बनाने से पहले ही जानते है कि वह कैसे चित्र बनाने जा रहे है। लेकिन अध्यापक के सामने अपने लक्ष्य के बारे में कोई ऐसा निश्चित रूपरेखा नही है। स्वामीजी कहते हैं कि शिक्षा का लक्ष्य मानव निर्माण होना चाहिए। और उन्होंने जो वैदिक दर्शन स्वायत्त किया उसके प्रकाश में आपने आदमी बनाने वाली शिक्षा की योजना तैयार की।

शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य

वेदान्त के अनुसार मनुष्य के तन, मन के अलावा एक आत्मा भी है वही उसका सार है। आत्मा का स्वभाव पूर्णता है। यह आत्मा उस अनन्त शक्ति का अंश है जो हर जगह अस्तित्व, चेतना और आनन्द के रूप में रहती है। उस अनन्त शक्ति को समझने के बाद हम अपने अन्दर विद्यमान आत्मा की पहचान कर सकते है। उसके लिए हमें, अपने अहंकार, अज्ञता और अन्य सभी झूठी पहचान जो हमें आगे बढने से रोकता है, खतम करना होगा। शरीर, इन्द्रिय, अहं और अन्य सभी गैर आत्मतत्व आत्मान्वेषक के लिए विनाशकारी है, इन सबसे मुक्ति पाने केलिए नैतिक शुद्धता और सत्य के प्रति तीव्र इच्छा से उत्पन्न ध्यान हमें मदद करती है। इस प्रकार उसे अनश्वर परम आत्मा का जो अनंत ज्ञान, अनंत आनन्द और अनन्त अस्तित है, पता चलता है।

इस स्तर पर पहुँचने से उसे पता चलता है कि इस ब्रह्मांड के समस्त चराचर में एक ही आत्मा विराजमान है और मानव मानव में कोई भेदभाव नहीं है। इसलिए विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य आत्मज्ञान के लिए सक्षम बनाना है। अतः शिक्षा के माध्यम से इस ब्रह्मांड के लिए अनिवार्य एकता का एहसास होता है। हालांकि शिक्षा शरीर और मन को छोड़कर केवल आत्मा के विकास की ओर इंगित नहीं करता। हम जानते हैं कि स्वामीजी की शिक्षा का आधार अद्वैत दर्शन है जो विविधता में एकता का उपदेश देता है। इसलिए उनके अनुसार मानव निर्माण का अर्थ है शरीर, मन और आत्मा का एक सामंजस्यपूर्ण विकास।

अपनी शिक्षा-पद्धति में स्वामीजी शारीरिक स्वास्थ्य पर बहुत ज़ोर देते हैं क्योंकि एक स्वस्थ शरीर में ही एक स्वस्थ मन रहता है। वे अक्सर, इस उपनिषद पंक्ति का उद्धरण करते है 'नयमात्मा बलहीनेन लभ्यत' अर्थात् आध्यात्मिक ज्ञान दुर्बलों को प्राप्य नहीं है। स्वामीजी के अनुसार विद्यार्थी ध्यान, एकाग्रता और नैतिक पवित्रता से मन को अधीन कर सकते है। काम जो भी हो उसकी सफ़लता एकाग्रता की शक्ति पर निर्भर है। एकाग्रता का मतलब है बाकी सभी कार्यों से ध्यान हटाकर एक कार्य में केन्द्रित करना, जो ब्रह्मचर्य का एक हिस्सा है। यह ब्रह्मचर्य विवेकानन्द की शिक्षा-पद्धति का प्रमुख अंग है। संक्षेप में कहें तो ब्रह्मचर्य का अर्थ है अपने मनोवेगों से सामंजस्य स्थापित करने केलिए आत्म नियंत्रण। इसप्रकार उनके शिक्षा दर्शन के अनुसार शिक्षा मात्र विभिन्न सूचनाओं का संग्रह नहीं वरन् जीवन

के लिए एक व्यापक प्रशिक्षण है। स्वामी विवेकानन्द के लिए शिक्षा वह है जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शक्ति बढे, बुद्धि तीव्र हो जाये, परिणामस्वरुप मनुष्य अपने पैरों में खड़ा हो सके।

विधि या प्रक्रिया

शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य के विश्लेषण के बाद अगला सवाल शिक्षा प्रदान करने की विधि के बारे में है। यहाँ फ़िर से, स्वामीजी वैदिक दर्शन का सहारा लेते हैं । उनके अनुसार, ज्ञान हर मनुष्य की आत्मा में निहित है। कहने का तात्पर्य यह है कि अपनी आत्मा के आवरण हटाने से जो प्रकट हो जाता है वही उसका ज्ञान है। इसलिए अध्यापक का कर्त्तव्य है छात्र को अपने रास्ते की बाधाओं को दूर करके ज्ञान प्राप्त करने के लिय मदद करना। स्वामीजी कहते है कि वेदान्त के अनुसार केवल एक बच्चे तक के अन्दर भी सभी ज्ञान छिपे हुए है। अध्यापक का कर्त्तव्य है उसे जगाने में उसकी मदद करना। जिसप्रकार एक पौधे के उगने में हम केवल उसे पानी, खाद और वायु दे सकते हैं और वह अपनी प्रकृति के अनुसार बढता है वैसे ही अध्यापक छात्र को शिक्षित नहीं कर सकता वह अपनी प्रकृति के अनुसार बढता है। इसप्रकार स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा विधि आधुनिक शिक्षाविदों के स्वानुभविक (heuristic) शिक्षा विधि से मिलता-जुलता है। इस पद्धति के अनुसार अध्यापक विद्यार्थी के अन्दर छिपे हुए जांच की भावना को जगाकर पूर्वाग्रह से मुक्त स्वयं ज्ञान प्राप्त करने की मदद करते है।

स्वामीजी बच्चों के समुचित विकास के लिए घर और विद्यालय के माहौल पर बहुत ज़ोर देते है। 'अध्यापक एवं माँ-बाप को स्वजीवन से बच्चों को प्रेरणा देनी चाहिए। इस लक्ष्य के लिए स्वामीजी हमारे पुराने गुरुकुल प्रथा की सिफ़ारिश करते हैं। इस प्रणाली से गुरु का आदर्श जीवन एक नमूने के समान हमेशा छात्रों के सामने रहेगा, जिसका वह अनुकरण कर सकेंगे। स्वामीजी के अनुसार शिक्षा मातृभाषा में होनी चाहिए। इसके अलावा अंग्रेज़ी और संस्कृत भी पाठ्य विषय होना चाहिए, क्योंकि पाश्चात्य विज्ञान और तकनीकी केलिए अंग्रेज़ी ज़रूरी है और हमारे क्लासिक्स की विशाल गहराई को जानने के लिए संस्कृत भी ज़रुरी है।

अध्ययन के क्षेत्र

विवेकानन्द जी ने अपनी शिक्षा पद्धति में उन सभी विषयों को शामिल किया है जिनसे हमारे शरीर, मन और आत्मा का संपूर्ण विकास संभव है। उन सारे विषयों को भौतिक संस्कृति, सौन्दर्यशास्त्र, क्लासिक्स, भाषा, धर्म, विज्ञान, प्रौद्योगिकी आदि व्यापक विषयों के अन्तर्गत रखा जा सकता है। स्वामीजी के अनुसार देश की संस्कृति और मूल्यों को शिक्षा पाठ्यक्रम के अनिवार्य अंग बनाना चाहिए। भारतीय संस्कृति का जड उसके आध्यात्मिक मूल्यों में है। रामायण, महाभारत, भगवतगीता, वेद और उपनिषदों में बताये गये मूल्यों को उनके अध्ययन द्वारा बच्चों के मन में, उनकी चिन्ताओं में और उनके जीवन में प्रतिष्ठित करना शिक्षकों का कर्त्तव्य है। । ऐसे विश्व संस्कृति में हमारे आध्यात्मिक मूल्यों को स्थायी बना सकता है।

स्वामीजी के अनुसार सौन्दर्य शास्त्र और ललित कला के अभाव में शिक्षा अधूरा रह जाएगा। जापान का उदाहरण देकर वे कहते हैं कि कला और उपयोगिता का संयोजन कैसे एक देश को महान बनाया।

स्वामीजी दुहराते हैं कि धर्म ही शिक्षा का केन्द्र है। हालांकी धर्म से मतलब कोई विशेष धर्म से नहीं बल्कि उसके आद्यंतिक सत्य वह सर्वोत्तम शक्ति जो हमारे अन्दर स्थित है उसे अनुभव करने योग्य मनुष्य को बनाना। उनके लिए धार्मिक होने का अर्थ है अपने विचारों, वाणी और कर्मों मे उन्नत प्रकृति, सत्य और सौन्दर्य प्रकट करना। सभी अन्त:प्रेरणा, विचार और प्रवृत्ति, जो किसी को इस लक्ष्य की ओर ले जाता है, स्वाभाविक रूप से ऊँचा करनेवाला और समन्वय करने वाला है और सही अर्थों में यही नैतिकता है। शिक्षा संबन्धी प्रकरण में धर्म से स्वामीजी का आशय यही समझना चाहिए कि 'चरित्र निर्माण केलिए, जो भी सत्य और महान है उसके निर्माण केलिए, दूसरों को शान्ति प्रदान करने केलिए, स्व शान्ति केलिए, धर्म ही सबसे बडा प्रेरणा केन्द्र है, और इसलिए इस दृष्टि से धर्म का अध्ययन करना आवश्यक है।' स्वामीजी का विश्वास है कि अगर अपने धार्मिक कोर के साथ शिक्षा मनुष्य को अपनी दिव्य प्रकृति पर और अपनी आत्मा की अपार शक्ति पर विश्वास करने की मदद करेगी तो वह निश्चय ही मनुष्य को मज़बूत बनाने के साथ साथ उसे सहिष्णु और सहानुभूतिपूर्ण भी ब्नायेगी। शिक्षा आदमी को साम्बदायिक, जातीय और राष्ट्रीय बाधाओं से परे अपने प्यार और सद्भावना के विकास करने की मदद भी करती है। ऐसा कहना स्वामीजी की शिक्षा पद्धति का गलत अर्थ निकालना होगा कि उन्होंने अपनी शिक्षा पद्धति में भौतिकता को नगण्य करके आध्यात्मिकता की भूमिका को अधिक बल दिया है। वे कहते है कि हमारे देश के औद्योगिक विकास केलिए हमें तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता है जिससे हमें काम की तलाश नहीं करनी पडेगी और अच्छी कमाई भी हो जाएगी। स्वामीजी के अनुसार पाश्चात्य संस्कृति की अच्छाईयों को अपनाना भारतीयों के लिए ज़रूरी है। फ़िर भी व्यक्तियों के समान देश का भी अपना व्यक्तित्व हाता है, जिसको नष्ट नहीं करना चाहिए। भारत का व्यक्तित्व उसकी आध्यात्मिकता में है। इसलिए स्वामीजी कहते हैं कि एक संतुलित राष्ट्र के रुप में भारत के विकास के लिए आध्यात्मिकता के साथ पाश्चात्यों की गतिशीलता और वैज्ञानिकता का गठबन्धन होना चाहिए। पूरे शैक्षिक कार्यक्रम की ऐसी योजना बनानी चाहिए जिससे युवा वर्ग भौतिक विकास केलिए अपना योगदान देने के साथ साथ हमारी सांस्कृतिक विरासत के सर्वोच्च मूल्यों को बनाये रख्ने में भी अपना योगदान दे सके।

स्वामीजी की शिक्षा योजना का और एक महत्वपूर्ण पहलू स्त्री-शिक्षा है। वे जानते है कि यदि हमारे देश की स्त्रियों को उचित शिक्षा प्राप्त हो सके तो वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से हल करने में सक्षम हो जाएँगी। स्त्री-शिक्षा से उनका मुख्य उद्देश्य स्त्रियों को मज़बत, निडर बनाने के साथ साथ अपनी पवित्रता तथा गरिमा के प्रति सचेत करना भी है। उन्होंने परख्र लिया है कि यद्यपि स्त्री और पुरुष शैक्षिक कार्यों में समान रुप से सक्षम होने पर भी स्त्री को घर और परिवार से सम्बन्धित विषयों पर विशेष रुचि और क्षमता है। इसलिए वे सिलाई, नर्सिंग, गृह विज्ञान, पाक्कला जैसे विषयों को, जो उस ज़माने में शिक्षा का विषय नहीं था, शिक्षा का भाग बनाने की सिफ़ारिश करते है।

“हिन्दू धर्म सिद्धान्त को स्वामी विवेकानन्द का योगदान”

दिव्या. एस

स्वामी विवेकानन्द आधुनिक मानव के एक आदर्श प्रतिनिधी होने के अतिरिक्त वैदिक धर्म एवं संस्कृति के समस्त स्वरुपों के उज्जवल प्रतीक थे। सन् १८६३ ई. को कलकत्ता के एक मध्यवर्गीय परिवार में जन्मे स्वामी विवेकानन्द प्रतिभासंपन्न बुद्धिजीवि थे। रामकृष्ण परमहंस के संपर्क के कारण स्वामी जी के हृदय में आध्यात्मिक दृष्टि के प्रति आत्मविश्वास भी पैदा हुआ। रामकृष्ण परमहंस की मृत्यु के उपरान्त विवेकानन्द ने उनकी याद, दिशा निदर्शन में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। इसका उद्देश्य समाज में नये संदेश का प्रचार-प्रसार करके जन-जन में नयी चेतना को विविध प्रकारों से जगाना था। केवल भारत के लोग ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व स्वामीजी के स्फूर्तिदायी एवं विधायक विचारों द्वारा प्रचुर मात्रा में लाभान्वित हुआ है। स्वामीजी की ये विचारधाराएँ मानव के समस्त कार्यक्षेत्रों में यथार्थतः सहायक हैं। आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य के सम्मुख अनेकानेक समस्याएँ उपस्थित हुई हैं। स्मावी जी इन सभी समस्याओं से परिचित थे तथा उन्हें विस्ताररूपेण समझ भी सके थे। फलतः उन सबके लिए उन्होंने उपाय तथा मार्ग भी प्रदर्शित किए हैं और ये सारे मार्ग उन चिरन्तन सत्यों पर आधारित है जो वेदान्त तथा विश्व के अन्य महान धर्मों में निहित हैं।

विश्व-धर्म-महासभा के सम्मुख स्वामी विवेकानन्दजी के अभिभाषण के संबन्ध में यह कहा जा सकता है कि “जब उन्होंने अपना भाषण आरंभ किया, तो विषय था हिन्दुओं के धार्मिक विचार किन्तु जब उन्होंने अन्त किया तब तक हिन्दू धर्म की सृष्टि हो चुकी थी।”१ गीता के कृष्ण की भाँति, बुद्ध की भाँति स्वामी जी के वाक्य भी वेदों और उपनिषदों के उद्धरणों से परिपूर्ण हैं। वास्तव में स्मामीजी हिन्दू धर्म के दूत के रूप में अवतरित हुए हैं। हिन्दू धर्म विचार करते समय स्वामीजी ने अध्यात्मिकता की चर्चा भी की। आध्यात्मिकता भारत वर्ष की प्राण रही है। उसी के माध्यम से धर्म की मानवीय परिभाषा को पुनः स्थापित करना उनका मूल उद्देय था। आध्यात्मिकता के साथ स्वामीजी के यह धर्म विचार बुद्धिवाद और वैज्ञानिक दृष्टि पर आधारित थे। उनकी दृष्टि में धर्म ही वह प्रबल शक्ति है जिसके आधार पर समाज में जागरूकता पैदा की जा सकती है। क्योंकि मनुष्य के लिए धर्म सर्वस्व है।

हिन्दू धर्म सिद्धान्त के स्वामी विवेकानन्द का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। “धर्म पर विवेकानन्द ने व्यापक प्रकाश डाला क्योंकि धर्म ही मनुष्य जाति की नशों, दिमागों में भली प्रकार रचा पचा है, उसकी सहीं ढंग से व्याख्या करना मानव सेवा करना ही है”२। हिन्दू धर्म सिद्धान्त में एकरूपता और एकता को महत्व देते हुए स्वामीजी ने यह साबित किया कि एकरूपता ही एकता है। उन्होंने हिन्दू धर्म को एकरुपता, समग्रता और संपूर्णता प्रदान की। सबसे पहले स्वामीजी ने एक बात व्यक्त करने का सफल प्रयास किया है कि हिन्दू धर्म की जो मूलभूत अवधारणाएँ हैं वे सब अन्य धर्मों में भी दिखायी देते हैं। सन् १८९३ में विश्व धर्म अधिवेशन में हिन्दू धर्म के प्रतिनिधि संत के रूप में वे अमरीका गये। इस प्रकार उन्होंने पहली बार पश्चिम में हिन्दू धर्म सिद्धान्तों का प्रचार किया और वे स्वयं हिन्दू धर्म की एकता के प्रतीक बन गये। इसके आधार पर माहूर विद्वान के एम. पणिक्कर के शब्दों को अपना लें तो मालूम हो जाता है कि “हिन्दू विचारधारा के एकीकरण का दावा इस आधुनिक शंकराचार्य को देना ही उचित है, इसमें कोई संदेह नहीं।”३

स्वामी विवेकानन्द सामाजिक संगठन में धर्म की दखलंदाजी बर्दाश्त

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन....

निष्कर्ष

विवेकानन्द की शिक्षा पद्धति के विवेचन उसके रचनात्मक, व्यावहारिक और विस्तृत स्वभाव प्रकाश में लाता है। वह जानता है कि शिक्षा से ही जनता का उत्थान संभव है। स्वामीजी कहते हैं-यूरोप के कई शहरों से यात्रा करने से और वहाँ के गरीबों तक के जीवन की सुविधा और शिक्षा देखने से उन्हें अपनी जनता की अवस्था की याद आती थी और वे यादें उन्हें रुलाती थी। इस अन्तर के कारण सोचने से उन्हें एक ही उत्तर मिला ‘शिक्षा’। वे ज़ोरदार ढंग से कहते है कि अगर समाज का सुधार करना है, तो समाज के सभी वर्गों को शिक्षित करना पड़ेगा क्योंकि व्यक्ति ही समाज का मुख्य अंश है। जब मानव को अपनी आत्मा का बोध होता है तब उसको अपनी गरिमा का भी बोध होता है। वे विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति से उत्पन्न मूल्यों के साथ भारत के प्राचीन मूल्यों का समन्वय चाहते हैं। नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षा के माध्यम से जो परिवर्तन आदमी में होता है वही सारी सामाजिक बुराइयों का समाधान है। वे बताते हैं कि हमें अपने ही दर्शन और संस्कृति के ठोस आधार पर शिक्षा का नींव बनाना ही वर्तमान सामाजिक और वैश्विक बीमारियों का इलाज है। वे अपनी शिक्षा पद्धति द्वारा मनुष्य का, वह भले ही जिस जाति, धर्म, राष्ट्रीयता या काल के हो, नैतिक और आध्यात्मिक कल्याण और मानवता के सुधार अमल में लाने की कोशिश करते हैं। हालांकि अपनी शिक्षा पद्धति, जिसके द्वारा वह भारत को एक मज़बूत देश बनाकर उससे विश्व को शांति और समरसता की ओर ले जाना चाहते थे, वह आज भी एक विदूर सपना है। यह एक ऐसा समय है कि हम उनकी शिक्षा पद्धति पर गंभीरता से विचार करे और उसके नारा को हमेशा अपने स्मरण में रखें “उठो जागो और तब तक न रुको जब तक मंज़िल प्राप्त न हो जाए”

असिस्टन्ट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग, गवर्मेन्ट विमन्स कॉलेज, त्रिवेन्द्रम

नव भारत में विवेकानन्द दर्शन की धार्मिक भावना

डॉ.उदयकुमारी डी.

यदा यदा ही धर्मस्या गलनिर्भवति भारतम्
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानम सृजाम्यहम।

'जब धर्म की क्षति होती है और अधर्म जन्म लेता है, तब धर्म के महन्व की रक्षा केलिए ईश्वर अवतार लेते हैं'।

भगवद्गीता की प्रस्तुत उक्ति से धर्म की कालातीत भावना को व्यक्त हुई है। "धर्म" शब्द का अर्थ है - 'धारण करना' या पालन करना। जो धारण करने योग्य है वही धर्म है। धर्म का संबन्ध मानव के अंतर्बाह्य मनसा- वाचा-कर्मणा व्यवहार से है। धर्म के माध्यम से मनुष्य कर्तव्य पालन के पथ पर प्रवृत्त होता हुआ आनन्दोपलब्धि की दिशा में अग्रसर होता हैं। धर्म सार्वभौम है। समयानुकूल परिस्थिति व अधिकार के अनुसार यह नाना रूपात्मक है।

दार्शनिकता का उदय :

विभिन्न आचार्यो ने अपने अन्दर और बाह्य की परिस्थितियों से जो अनुभव प्राप्त किये हैं, उसके आधार पर कुछ तत्व विचार अपनाए गए हैं। वास्तव में दर्शन शब्द भी धर्म से जुड़ा हुआ है। मनुष्य

"हिन्दू धर्म सिद्धान्त को स्वामी विवेकानन्द का योगदान"...

नहीं करते हैं। उनका मानना है कि किसी भी धार्मिक दृष्टि से समाज संगठित होना चाहिए और वह विभिन्न धर्मों द्वारा असंगठित नहीं होना चाहिए। स्वामीजी ने हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता के बारे में अनेक भाषण किए। उन्नीसवीं शती के अंत में पश्चिमी निवासियों के मन में भारत और हिन्दुओं के बारे में गलत विचार था। स्वामीजी ने उनके इस गलत विचार में परिवर्तन लाने का प्रयास किया। स्वामीजी की राय में धर्म का एक अनिवार्य आन्तरिक क्रोड और एक अनावयक बाह्यावरण है। इस अनावयक बाह्यावरण के अंदर मिथ, अनुष्ठान, त्योहार आदि आते हैं। स्वामीजी ने इनको अधिक स्थान नहीं दिया और तोडने की कोशिश की। विवेकानन्द ने प्रत्यक्ष रूप से समाज में फैली विसंगतियों, धार्मिक सामाजिक रीति - रिवाज़ों, अधविश्वासों, रूढियों पर बडे प्रहार किए हैं। उन्होंने समाज सेवा को आध्यात्म-साधना से जोडने का प्रयास किया है। वे समाज की उन्नती कठिन परिश्रम के साथ मानते थे जिसमें यदि आन्तरिक परिश्रम जुड जाय तो निचित रूप से उन्नति के पथ पर आगे बढ़ता चला जायेगा। धर्म की परिधि में विवेकानन्द समस्त संसार को समेटने का प्रयत्न करते हैं। वे भारतीय चिन्तन और दर्शन की विविध प्रवृत्तियों में समन्वय करने की कोशिश करते हैं और धर्म के बाह्याडंबरों की निन्दा करते हैं। स्वामीजी किसी धर्म का विरोध नहीं करते हैं। वे सभी को अपनी दृष्टि में समा लेते हैं। स्वामीजी की राय में "हम किसी को अस्वीकार नहीं करते - न तो ईश्वरवादी को, न सर्वेश्वरवादी को, न बहुदेववादी को, न अनीश्वरवादी को और न नास्तिक को।"४

हिन्दू धर्म सिद्धान्त के लिए स्वामीजी का अगला महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होंने लोगों को वेदान्त दर्शन की संपूर्ण जानकारी दी। हिन्दू धर्म संबन्धी अपने सारे भाषणों में उन्होंने वेदों और उपनिषदों के अनेक उद्धरणों को प्रस्तुत किया। स्वामीजी की राय में द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत वेदान्त दर्शन की तीन अवस्थाएँ हैं और ये अवस्थाएँ एक के बाद एक क्रमशः आती हैं। इसलिए समग्र धर्म वेदान्त ही में आते हैं। यह समन्वय का सिद्धान्त है। अपने इस नूतन आविष्कार के बाद स्वामीजी को यह विश्वास अवश्य हो गया था कि वेदान्त ही विश्व धर्म बनने जा रहा है और इसी पर भारत का और संपूर्ण मानव जाति का भविष्य निर्भर है और इसी से विश्व बंधुत्व का स्वप्न साकार होगा। इस प्रकार वेदान्त दर्शन की सैद्धान्तिक व्याख्या करते हुए उन्होंने धर्म को कर्मकांड और ज्ञानकांड में विभाजित कर लिया है। फिर उन्होंने इन दोनों को अलग-अलग करके उसकी तात्विक मीमांसा की और उसे विकसित भी किया है।

संक्षेप में कह सकते हैं कि हिन्दू धर्म के लिए स्वामीजी ने जो योगदान दिया है वह अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। स्वामीजी कोई साधारण विचारक नहीं थे, वह अपने समय का चलता-फिरता ज्ञान कोश थे। उन्होंने न सिर्फ अपने देश का बल्कि दुनिया भर का इतिहास और दर्शन खंगाल डाला था।

संदर्भ संकेत:

१. विवेकानन्द संचयन - जन्मशती प्रकाशन : स्वामी भास्करेश्वरानन्द
२. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य - डॉ.रामबीरसिंह शर्म - पृ. १०५
३. Swami Vivekananda's Contributions to Hinduism - Swami Bhajanananda - www.google.com
४. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य - डॉ.रामबीरसिंह शर्मा - पृ.१०४

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

१. रोमां रोलां कृत विवेकानन्द -अनुवादक - अज्ञेय, रघुवीर सहाय
२. सामाजिक चेतना और आधुनिक - डॉ. रामबीरसिंह शर्मा हिन्दी महाकाव्य
३. योद्धा सन्यासी विवेकानन्द - हंसराज रहबर
४. हिन्दू धर्म - स्वामी विवेकानन्द - श्रीरामकृष्ण आश्रम
५. हिन्दू धर्म के पक्ष में विवेकान्द - श्रीरामकृष्ण आश्रम
६. विवेकान्द संचयन - श्रीरामकृष्ण आश्रम
७. www.google.com

शाोध छात्रा, सरकारी वनिता कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम

जीवन की अर्थवत्ता ओर तन्वसंबन्धी चिन्तन को दर्शन और दार्शनिक चिन्तन का प्रस्थान बिन्दु माना जाता है। मनुष्य जव विराट विश्व के ताने-बाने और अपनी स्थिति व कर्म को वस्तु - जगत् में आकलन करने की कोशिश करता है तो अनजाने में ही वह दर्शन के परिज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य को जानने की ओर प्रवृत्त हो जाता है। दर्शन और दार्शनिक चिन्तन की सार्थकता तभी हो जाती है कि जिसे जिया भी जा सकते है और कर्म के दर्शन के रूप में स्वीकार भी कर सकते है।

बिना अध्यात्मबोध के कर्मो का अनुष्ठान व्यर्थ है। ज्ञान, भक्ति और कर्म की त्रिधारा में अवगाहन करते रहना ही भारत की सनातन परंपरा है ओर यही वास्तविक भारतीय संस्कृति है।

धार्मिक भावना :

इस जगत् में दुख एंव विषाद की गहरी छाया को देखकर मानव मन धबरा उठा। सामाजिक जीवन में व्यवस्था बनाए रखने केलिए कण कण में परम शक्ति की सत्ता स्वीकार करके लोकमंगल की भावभूमि स्थापित कर दिया है। भारत में धर्म को अध्यात्म पर और अध्यात्म को धर्म पर अधिष्ठित करके देखा गया है। जो अध्यात्मविद् है वही धर्म के स्वरूप को जानता है। जिस विधान के दवारा प्राकृतिक नियम शासित होते हैं, उसी का नाम धर्म विधान है।

आत्मदर्शन

आत्मदर्शन ही श्रेष्ठ धर्म है। संपूर्ण शास्त्र ओर समस्त विधाएँ उस परम धर्म के बाद स्वतः ही प्राप्त हो जाती हैं। धर्म का एकमात्र उद्देश्य है आत्मा का दर्शन करना।

विवेकानन्द दर्शन में धार्मिक भावना का महत्व

दुःखत्रय की इस जगत् में मानव मन घबरा उठा वह कुछ खोजने केलिए विचलित हो उठा जिसे पाकर वह वैयक्तिक सामाजिक और मानववादी जीवन क्षेत्र में अपूर्णता, असहायता आदि का निराकरण कर सुख शान्तिमय जीवन व्यतित कर चुके, दु खत्रय की आत्यंतिक और एकांतिक निवृत्ति का आकांक्षी एवं पूर्णता के प्रत्याशी मानव ने अपने जीने का ऐसा धरातल खोज ही लिया जहां वह जीवन के समस्त भाव विचारों और विश्वासों के लंगर डाल सके। वैयक्तिक जीवन की सिद्धि के रूप में उसने भक्ति, धर्म और मोक्ष आदि का वरण किया। भक्तिभावना में आत्मसमर्पण की प्रधानता है। हमारे मन के स्वार्थता, अहं, निराशा, वासनाऐं आदि का उन्मुलन हो जाता है।

विवेकानन्दजी ने कहा है - 'आध्यात्मिक क्षेत्र में मुझे सैकडों आदमी मिलें तो जगत बदल जाएगा'।

स्वामी विवेकानन्द ने सामाजिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक और धार्मिक सभी क्षेत्रों में अपने विचार प्रस्तुत किए है। विभिन्न क्षेत्र जो है परस्पर जुडी हुई है। आध्यात्मिक और धार्मिक नवोत्थान से ही राजनीती ओर समाज में प्रभाव डाल सकते है। मानव के स्वभाव के किसी एक अंश पर परिर्वतन संभव है, वही है धंम या अध्यात्म वहां से क्रान्तिकारी विचारधारा उत्पन्न होगी। आध्यात्मिक और धार्मिक नवोन्नति ही नव भारत को आगे बढेंगी।

विवेकानन्दजी का कहना है -
'उठो जागो और तब तक रुको नहीं
जब तक मंजिल प्राप्त न हो जाए।

लोग धर्म के प्रति पागल हो जाते है। युक्ति विहीन वन जाने पर मानव की प्रकृति में दुष्टता की अधिकता होते है। हर एक धर्म अपने धर्म पर विश्वास रखने केलिए लोगों को हठ कर देते हे। हर एक धर्म केलिए अपनी अपनी कथा है। सभी धर्म में सहानुभुति, सार्वलैकिकता, सौहार्द अत्मर्लीन है। लेकिन इन सभी वातें एक धर्म के अन्दर सीमित होते है। एक धर्म को दुसरे धर्म के प्रति सहिष्णुता उत्पन्न होने की जरुरत है। विश्व में जितने धर्म है वह एक एक मोती है. मोती में गुंथे हुए सूत्र जो है वही ईश्वर है।

एक धर्म पर विश्वास करना असंभव है। विविधता जीवन की प्रथम तत्व है। धार्मिक समन्वय केलिए विवेकानन्द का पहला नारा है - 'नाश न करों। नाश करने से किसी प्रकार का उद्धार नहीं होगा। निर्माण करना, संरक्षण करना प्रकृति और प्रगति की और बढना है। आध्यात्मिक प्रगति स्वतः उत्पन्न होते है। धर्म स्वानुभुति पर आश्रित है। जिसका हम विश्वास करते है वही धर्म है। धार्मिक समन्वय केलिए हर एक धर्म की भावना को अपनाना चाहिए।

'थतो धर्मस्ततोजय'

भारत में आजकल मानव मूल्य नष्ट होने की एक बात प्राचीन धर्म और संस्कृति पर विश्वास दूर होना है। नारी के संरक्षण न करनेवाले, अनाथ को रोटी न देनेवाले समाज में आध्यात्मिक प्रगति कैसी होगी? सब लोगों को जागृत करने की कामना करते हुए विवेकान्दजी ने गीता के स्लोक प्रस्तुत किया है -

'उत्तिष्ठता जाग्रता प्राप्य वरान्न निबोधतः'

भारत में सामाजिक पतन एक प्रधान कारण है बहुसंख्यों की उपेक्षा। वहां उपेक्षा करने से देश प्रगति की ओर नहीं बढेगा। विवेकानन्दजी के शब्दों के ओज इतनी मुखरित होते है। वह कल केलिए नही आज ही हमें जाग्रत होने का उचित समय है यह सूचित करते है।

धर्म का रहस्य आचरण से जाना जा सकता है। व्यर्थ के मतवादो से नही सच्चा बनना सच्चा वर्ताब करना उसमें समग्र धर्म निहित है। जो परमपिता के अनुसार कार्य करता है वही धार्मिक है। गीताके पहले अध्याय के पहले श्लोक के पहले शब्द और अन्तिम अध्याय के अन्तिम श्लोक के अन्तिम शव्द 'मम धर्म' में हमारी चेतना जाग उठते है।

समाज की सेवा करने केलिए विवेकानन्दजी हमेशा उत्सुक रहते थे। सेवा करने केनिए पुनःजन्म लेने की कामना करते है। वे मोक्ष नहीं चाहते थे।

"न त्वहम्र कामये राज्यम्
न स्वर्गम् न पुनर्भवम्
कामये दुःख तप्तानाम्
प्राणीनामार्तिनाशनम्

हमारी नैतिक प्रकृति जितनी उन्नत होती है उतना ही उच्च हमारा प्रत्यक्ष

भारत के आध्यात्मिक नायक: स्वामी विवेकानन्द

डॉ.प्रीता रमणी टी.ई

भारतीय धर्म एवं संस्कृति को विश्व-स्तर पर अभूतपूर्व पहचान दिलानेवाले महापुरुष स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारत के क्रांतिकारी विचारक माने जाते हैं। उन्होंने अपने बचपन से ही ईश्वर को जानने की तीव्र जिज्ञासावश तलाश आरंभ कर दी। श्रीरामकृष्ण परमहंस की कृपा से उन्हें आत्मसाक्षात्कार हुआ और इसके फलस्वरुप वे परमहंसजी के शिष्यों में प्रमुख्र हो गए। गुरु के संपर्क ने उनके हृदय में आध्यात्मिक दृष्टि के प्रति आत्मविश्वास पैदा किया जो उन्हें अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक सिद्ध हुआ ।

पच्चीस वर्ष की आयु में सन्यास स्वीकार करने के बाद स्वामी विवेकानन्द ने पैदल ही पूरे भारत की यात्रा की। अपने भारत भ्रमण काल के दौरान स्वामीजी ने विभिन्न धर्मों के मूल को समझने की कोशिश की और उन्होंने पाया कि सभी धर्मों में शाश्वत एकत्व निहित है । वे वेदांत के विख्यात एवं प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उन्होंने अमेरिका के शिकागों में सन् १८९३ में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था और उसे सार्वभौमिक पहचान दिलवाई । वहाँ उन्होंने किसी भी धर्म की निन्दा या समालोचना नहीं की। उनका मत था कि प्रत्येक धर्म को अपनी स्वतंत्रता और, विशेषता को बनाए रखकर दूसरे धर्मों का भाव ग्रहण करते हुए क्रमशः उन्नत होना होगा। उन्होंने शून्य को ब्रहम सिद्ध किया और भारतीय धर्म-दर्शन एवं अद्वैत वेदांत की श्रेष्ठता का डंका बजाया। योरोप और अमेरिका के लोग उस समय पराधीन भारतवासियों को बहुत हीन दृष्टि से देखते थे। किन्तु स्वामीजी के विचार सुनकर सभी विद्वान चकित हो गये। सवामीजी ने ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें धर्म या जाति के आधार पर मानव - मानव में कोई भेद नहीं रहे। उन्होंने वेदों के सिद्धांतों को समता के सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया। इसतरह उन्होंने भारत के गौरव को विभिन्न देशों में उज्जवल करने का सदा प्रयत्न किया।

विदेशी सांस्कृतिक एवं धर्मिक आक्रमण की प्रतिक्रिया के रूप में उन्नीसवीं सदी के आरंभ में भारत में पुनर्जागरण की चेतना का उदय हुआ। राजा राम मोहन राय के समय से भारतीय समाज में जो आन्दोलन चल रहे थे, वे स्वामी विवेकानन्द के समय चरम सीमा पर पहुँचे। रामथारी सिंह दिनकर के अनुसार - "जब स्वामी विवेकानन्द का आविर्भाव हुआ, उन्हें अपने सामने कई प्रकार के उद्देश्य दिखाई पडे। सबसे बडा कार्य धर्म की पुनःस्थापना का कार्य था। दूसरा काम हिन्दु-धर्म पर कम-से-सम, हिन्दुओं की श्रद्धा जमाए रखना था। और तीसरा काम भारतवासियों में आत्म-गौरव की भावना को प्रेरित करना था, उन्हें अपनी संस्कृति, इतिहास और आध्यात्मिक परंपरा ओं का योग्य उत्तराधिकारी बनाना था।[१]

स्वामीजी के संदेश आज भी युवा पीढी को अपने कर्मपथ पर अग्रसर होने केलिए प्रेरणास्रोत है। जन्मदिन (जनवरी १२) 'राष्ट्रीय युवा दिवस'

नव भारत में विवेकानन्द दर्शन की धार्मिक भावना....

अनुभव होता है और उतनी ही हमारी इच्छा शक्ति अधिक बलवति होती है। मन का विकास करने केलिए उद्बोधित करते है। मन पर संयम रहने से, उसके बाद जहां इच्छा हो वहां इसका प्रयोग करो। उससे अति शीघ्र फल प्राप्ति होगी। यह है यथार्थ आत्मोन्नति का उपाय। विज्ञान और तकनीकी हमें पूर्णता की ओर ले जाते है लेकिन आत्मप्रभाव के विना हम उन्नति की ओर बढ नही सकते हैं। अगर भारतभूमि में प्रगति केलिए कोई कार्य करना है तो वह धर्म के नाम पर कर सकते है।

उपसंहार

धार्मिक नवोत्थान समाज से संबन्धित है। जिसप्रकार धर्म शब्द सार्वभौम है उसी प्रकार धार्मिक नवोत्थान केलिए सार्वभौम दर्शन होना चाहिए। समाज के हर एक व्यक्ति के स्वभाव अन्तः बाहय प्रवृत्ति से जुडी हुई है। अन्तारिक परिवर्तन से, मन पर जितना संयम रखते है उससे बाह्य परिस्थितियों में संघर्ष नही आता। स्वामी विवेकानन्दजी ने मन पर संयम रखते हुए विभिन्न देशों में यात्रा किये है और विभिन्न धर्मों को सीख लिया है और ज्ञात किया कि यह सब ईश्वर की ओर जाने का विभिन्न मार्ग है। इसलिए उन्होंने धार्मिक समन्वय की कामना की। विभिन्न धर्मों में मनानेवाले त्योहार हर एक को अपनाना चाहिए। इस प्रकार समाजिक तौर पर हम थोडा सा परिवर्तन ला सकते है। भारतीय संस्कृति नारी के हाथों में ही सौंप दिया है। नारी के उद्धार से देश की उद्धार संभव है। भारतीय नारी को भारतीय संस्कृति का आभिरक्षक होना चाहिए। भारत में गरीब और अमीर दो वर्ग, धर्म के नाम पर बांट दिया है। भारत माता के हर एक पुत्र को स्वामी विवेकानन्द की चेतना को स्वीकार करके सत्य, ज्ञान देते हुए पूर्ण सक्षम होना चाहिए इस सत्य को हमारी जिन्दगी से साबित करना चाहिए। भारतीय दर्शन में धार्मिक नवोत्थान केलिए जो विचार संकलित है वे बीती हुई बात नहीं है उनका पुनः आविष्कार करने का समय आ गया है। भारतीय संस्कृति के प्राचीन धर्मों में संकलित विचारों में सुखद और प्रगति के पथ की ओर ले जाने का मार्ग कौन सा है उनको स्वीकार करके नवीन परिस्थितियों में प्रस्तुत करके एक नवभारत का निर्माण करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए।

एच.एस.एस.टी.इन हिन्दी गवर्मेंट गेर्लेस हायर सेकेंटरी स्कूल, वल्लिक्कीषु, कोल्लम।

के रूप में मनाया जाता है। वे मानते थे कि भारत का भविष्य और वर्तमान युवाओं में छिपा है। यदि उसे किसी तरह से जगा दिया जाय और उसको सही दिशा में लगा दिया जाय तो बहुत अधिक समस्याओं का समाधान हो सकता है। वे युवाओं की शक्ति को देश-निर्माण में लगाना चाहते थे। भारत के नौजवानों को वे ऐसा संदेश देते थे - "तुम ईश्वर की संतान हो, अमर आनन्द के भागी हो, पवित्र और पूर्ण आत्मा हो। अतएव तुम कैसे अपने को जबरदस्ती दुर्बल कहते हो ? उठो, साहसी बनो, वीर्यवान होओ। सब उत्तरदायित्व अपने कंधे पर लो। यह याद रखो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो।

स्वामीजी का विश्वास था कि पवित्र भारतवर्ष धर्म एवं दर्शन की पुण्य भूमि है और आध्यात्मिकता उसका प्राण है । आध्यात्मिकता के माध्यम से धर्म की मानवीय परिभाषा को पुन:स्थापित करना उनका मूल उद्देश्य था। वे हिन्दुत्व के प्रबल समर्थक थे। फिर भी भारत में प्रचलित विभिन्न धर्मों के विषय में उनका मत था कि हमें इन धर्मों को केवल बर्दाश्त करना नहीं है, ये सभी धर्म हमारे अपने धर्म हैं, इस भाव से उन सबको हमें अपना लेना है । डॉ. रामबीर सिंह शर्मा का कथन है - "रामकृष्ण मिशन ने पूर्व एवं पश्चिम की संसकृति के समन्वय पर ज़ोर दिया। उनका (स्वामी विवेकानन्द का) सन्देश था कि पश्चिम की अच्छी बातों को ग्रहण करके हमें अपना मानसिक क्षितिज ऊँचा बनाने में संकोच नहीं करना चाहिए।"[१]

इसप्रकार स्वामी जी ने भारतीय धर्म एवं संस्कृति के कलेवर में नवचैतन्य का संचार करने का प्रयास किया । उन्होंने एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र और प्रगतिशील समाज की परिकल्पना की थी। रवीन्द्रनाथ टागौर ने कहा था - 'यदि आप भारत को जानना चहते हैं तो विवेकानन्द को पढिये उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पाएँगे। नकारात्मक कुछ भी नहीं है।भारत को जिस दिशा की ओर जाना था उसका स्पष्ट संकेत विवेकानन्दजी ने दिया। दिनकर जी ने यह स्पष्ट किया है - "विवेकानन्द वह सेतु है, जिसपर प्राचीन और नवीन भारत परस्पर आलिंगन करते हैं। विवेकानन्द वह समुद्र है, जिसमें धर्म और राजनीति, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता तथा उपनिषद् और विज्ञान, सब-के-सब समाहित होते हैं।"[२]

स्वामीजी ने धर्म का परिष्कार भारतीय समाज की आवश्यकताओं को सामने रखकर करना शुरू किया और इस प्रक्रिया में उन्होंने कडी-से कडी बातें भी बडी ही निर्भीकता से कह दीं। धर्म को वे व्यक्ति और समाज दोनों केलिए उपयोगी मानते थे। भारतीय एकता के महत्व को जनता के समक्ष अत्यंत सुस्पष्ट रूप में रखकर उन्होंने कहा कि मन से एक होना समाज के अस्तित्व का सार है ।

स्वामीजी का दृढविश्वास था कि व्यक्ति अथवा समाज के जीवन की सफलता आध्यात्मिक उन्नति पर निर्भर करती है। अत: मनुष्य को सबसे पहले पवित्रता, विनयशीलता, सच्चाई, निस्वार्थता, प्रेम आदि गुणों का विकास करना चाहिए। वे धर्मिक संकीर्णता के विरोधी एवं धर्म की व्यापकता के पक्षधर थे। उन्होंने धर्म को मनुष्य, समाज एवं राष्ट्रनिर्माण केलिए स्वीकार किया और कहा कि धर्म मनुष्य केलिए हैं, मनुष्य धर्म केलिए नहीं। भारत की आध्यात्मिक संस्कृति के प्रति गर्व होने पर भी उन्होंने उसमें निहित रूढि, परंपरा, जातिभेद, अंधविश्वास, धर्माडंबर जैसे हीन घटकों पर अपने भाषणों से करारा प्रहार कर भारतवासियों को जगा देना का प्रयास किया। भारतीय जनता केलिए उनका नारा था - 'उठो, जागो और तब तक न रुको जब तक मंजिल प्राप्त न हो जाए।' अद्वैत वेदांत के आधार पर सारे जगत को आत्मरूप मानकर उन्होंने कहा कि आत्मा को हम देख नहीं सकते, किन्तु अनुभव कर सकते हैं । यह आत्मा जगत के सर्वांश में व्याप्त है। सारे जगत का जन्म उसी से होता है, फिर वह उसी में विलीन हो जाता है।

वे केवल एक सन्यासी नहीं, देश भक्त, वक्ता, विचारक, लेखक, मानवप्रेमी और आध्यात्मिक नेता भी थे। उन्होंने समाज सेवा को आध्यात्म-साधना से जोडने का प्रयास किया। वे अपने को गरीबों का सेवक कहते थे। उनके गुरू रामकृष्ण परमहंस जी कहा करते थे कि ख़ाली पेट धर्म नहीं होता। इस कथन की सत्यता को उन्होंने भलीभाँति अनुभव किया था। उन्होंने महसूस किया कि गरीबी की समस्या को दूर किए बिना नैतिक, बौद्धिक, धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक उन्नति संभव नहीं हो सकती। उन्होंने मानवता को ब्रह्म की अभिव्यक्ति के रूप में समझने और देखने का संदेश दिया। उनके अनुसार सच्ची ईश्वरोपासना यह है कि हम अपने मानव-बन्धुओं की सेवा में अपने आप को लगा दें। उनका विचार यों था- 'जब पडोसी भूख़ा मरता हो तब मंदिर में भोग चढाना पुण्य नहीं है।

इसप्रकार स्वामीजी ने धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना जगाने, सांप्रदायिकता मिटाने और मानवतावादी संवेदनशील समाज की स्थापना केलिए एक आध्यात्मिक नायक की भूमिका निभाई। प्रो. चिन्तामणि शुक्ल के अनुसारस्वामी विवेकानन्द ने धर्म की नवीन और विज्ञान सम्मत व्याख्या कर भारत की सुप्त धमनियों में नवीन रक्त का संचार किया। उन्होंने बाह्य कर्मकांड तथा मतमतान्तरों से आछन्न धर्म को उज्ज्वल बनाया। आध्यात्मिकता के नाम पर फैली हुई अकर्मण्यता की प्रवृत्ति पर तीव्र प्रहार किए। उनके संदेश में भारतीय संस्कृति-सम्मत ज्ञान और कर्म का तथा आध्यात्मिक जागृति एवं भौतिक विकास का अद्भुत समन्वय है।"[१]

स्वामी विवेकानन्द ने आध्यात्मिकता रूपी मृतसंजीवनी के माध्यम से भारतवासियों में एक नवीन चेतना जगाने का जो प्रयास किया है वह चिरस्मरणीय रहेगा । उनके दिव्य सन्देश जनमानस को उद्बोधित एवं आलोकित करने में अतीव समर्थ हैं। उन्तालीस वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामीजी ने जो अद्भुत कार्य किये हैं वे आनेवाली अनेक पीढियों को मार्गदर्शन करने में सफल रहेंगे।

सन्दर्भ ग्रंथ:

२. हमारे युग की ऐतिहासिक झांकियाँ, प्रो.चिंतामणि शुल्क, शुक्ला प्रकाशन, मथुरा, १९८६।

२. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९९४।

३. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य, डॉ.रामबीरसिंह शर्मा।

४. इतिहास के झरोख़े से, दीपचन्द्र निर्मोही।

प्राध्यापिका, सरकारी महिला कॉलेज, त्रिवेन्द्रम

भारतीय संस्कृति और विवेकानन्द दर्शन

डॉ.आशा एस. नायर

वर्तमान जीवन में यह देखा जाता है कि मनुष्य सुख-संपन्न जीवन जीने के लिए व्यस्त है। अपने लक्ष्य तक अग्रसर होते वक्त, कई जिम्मेदारियों से दूर चला जाता है। जब मन की विराटता के लिए सीमाएँ निर्धारित होती है, तब मानसिक विकास संकुचित होता है। यह मानव सहज भावनाओं से वंचित रहने के लिए प्रेरणादायक होता है और जीवन समस्याओं और जटिलताओं के घेराव में फँसता है। जब जीवन को सुगम गति से आगे बढाने में कोई बाधा पडती है, तब जाकर हम उसे सुधारने तथा उसके उलझनों को सुलझने के बारे में सोचते हैं। यही कोशिश में भारतीय संस्कृति, दर्शन और महात्माओं की पनाह लेने लगते हैं। जीवन के रहस्य तथा वास्तविकताओं की खोज में निकलते हैं। उसके लिए हमें पौराणिक काल की ओर मुडकर देखना है तथा हमारे धरोहर को सही माइने में पहचानता है।

भारतीय दर्शन तथा संस्कृति संसार - भर में विख्यात है। उनका मानव जीवन से सीधा संबन्ध है। उनका महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे उन सभी, समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने के लिए समर्थ है, जिसके कारण मानव जीवन पीडित रहता है। भारत के सभी दर्शन अपने अपने ढंग से बुराइयों का समाधान प्रस्तुत करते हैं। मानव-जीवन के लिए उपयोगी तथा मानवीय समस्याओं का समाधान सुगम रूप में प्रस्तुत करने के कारण, इनका विशेष महत्व है।

प्राचीन काल से ही चिन्तन-धारा भारतीय जन-जीवन में प्रवाहित हो रही है। व्यापक दृष्टि रखनेवाली भारतीय संस्कृति का उद्भव वैदिक काल से प्रारम्भ हुआ। उस समय ऋषि-मुनि जगत् के रहस्य तथा व्यवस्था की व्याख्या करने लगे थे तथा जीवन के विभिन्न पक्षों पर विचार कर रहे थे। वैदिक युग में भारतीय दर्शन-शास्त्र का विकास हुआ था।

भारत के पूर्वज यथार्थ की खोज करने में रुचि रखनेवाले थे। हमारे समाज सुधारक तथा आचार्य जैसे राजा राम मोहन राय, जस्टीज़ राणडे, स्वामि दयानन्द सरस्वति, रामकृष्ण परमहँस, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अरविन्द घोष, महात्मा गान्धी, डॉ.राधाकृष्ण आदि पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के सामने सांस्कृतिक चेतना के प्रतिरोध का प्रतिनिधित्व करते रहे। सबसे पहले किसी संगठन या समाज के रूप में आगे आनेवाला 'ब्रह्मसमाज' रहा, जिनका आरम्भ राजाराम मोहनराय द्वारा संभव हो पाया था। वे विभिन्न दर्शन तथा संस्कृति के परम ज्ञानी थे। वे हमाशा तथ्य के निकाट ही रहे। शिक्षित युवा उनके प्रति आकृष्ट हुए और विवेकानन्द उनमें एक रहे।

'प्रार्थना समाज' जो राणडे की अगुवाई में शुरू हुआ था, 'ब्रह्म समाज' का महाराष्ट्रीय इकाई था। वे विभिन्न देवी-देवताओं को एक ही ईश्वर के विभिन्न रूप मानते थे।

स्वामी दयानन्द सरस्वति ने जनता को वेदों की ओर खींचने के लिए 'आर्य समाज' की स्थापना कीं। उन्होंने हिन्दु धर्त को सर्वमान्य बनाने की कोशिश की और यह स्थापित करना चाहा कि हिन्दु धर्म वैदिक धर्म है। रामकृष्ण परमहंस ने इसे एक नया रूप दिया जो ज़्यादा मान्यता-प्राप्त था। रामकृष्ण परमहंस में परंपरा की, संस्कृति की जो ज्योति जागृत थी, वह उनके शिष्य विवेकानन्द में प्रज्ज्वलित होने लगीं।

व्यक्ति के जीवन की जटिलताएँ उसके भविष्य के निर्णायक है। विवेकानन्द के जीवन को प्रभावित करनेवाली तीन घटनाएं घटित हुई थीं। पहला, अंग्रेज़ी तथा संस्कृत साहित्य में प्राप्त शिक्षा था। दूसरा गुरु परमानन्द से हुई निकटता और तीसरा, पिता की मृत्यु के उपरान्त घटित दुखद अनुभव। इन प्रभावों के अलावा भारत की परख तथा विभिन्न प्रान्तों के जन-जीवन से प्राप्त जानकारिया जो सन्यासी की भ्रमण रीति से प्राप्त हुई थी। वे सारे उनके जीवन में बदलाव लाने के लिए सहायक रहे। गुरु रामकृष्ण परमहंस दक्षिणेश्वर के काली मंदिर का पूजारी था, जो ईश्वर में अटूट आस्था रखनेवाला था, जिनके लिए ईश्वर और धर्म सब कुछ था। ईश्वर की खोज में रहे विवेकानन्द को गुरु का स्पर्श, अद्वैद को पहचानने की कुँजी रहा।

चिकागो के सर्व धर्म सम्मेलन (parliament of Religions) में जब, अमरीकी जनता को स्वामी विवेकानन्द अभिवादन कर रहे थे, तब अन्होंने 'अमरीका के भाइयो-बहनो' कहकर संबोधन किया था, जिसमें वेदों की सूक्तियाँ मुखरित थीं। जैसे विभिन्न सरिताओं का स्रोत विभिन्न जगहों पर होते हुए भी एक ही समुद्र में आ मिलती है; वैसे विभिन्न धर्म विभिन्न मार्गों से ईश्वर की ओर जा पहुँचते हैं। कोई भी नाम से पुकार लें, ईश्वर एक ही होता है। वेदों को तथा हिन्दु धर्म को पहचानने और उनके प्रचार-प्रसार में उनका जीवन जुड गया था। अद्वैद के प्रसार के लिए भारत की धर्मनिरपेक्ष दार्शनिकता और पश्चिमी ज्ञान का उपयोग किया। उनकी दृष्टि में अद्वैत आध्यात्मिक चिन्तन के मुकुट-मणि है। अपने गुरु रामकृष्ण की समाधि के पश्चात् वे भारत-भर यात्रा करके जनता को अपने विचारों से अभिभूत करते रहे। यही दौरान उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पडा था। दस साल तक वे लगातार परिश्रम करते रहे और इसका असर उनके जीवन पर भी पडा।

विभिन्न धर्मों को परखने पर यह जान सकता है कि वे जिन तथ्यों पर पहुँचे हुए हैं, वे सारे उन्हीं लोगों के अनुभवों पर आधारित है जो इनके प्रणेता हैं। एक बार घटित घटनाएँ आगे भी होने की संभावना है। इसके ऊपर धर्म के आधार पर गौर से विचार करना

देशीयोत्थान में स्वामी विवेकानंद की भूमिका

डॉ.षीना यू.एस.

'जननी जन्म भूमिश्च
स्वर्गादपि गरियसी'

जन्म भूमि माता है, वह स्वर्ग से श्रेष्ठ भी है। रामायण का यह वाक्य पढ़नेवाला हर व्यक्ति देश का उत्थान चाहता है।

देशीयोत्थान माने क्या है ?

विभिन्न देशों की जनता को एकसूत्र में बाँधने की कड़ी है देशीयोत्थान। इस उत्थान में विभिन्नता का कोई स्थान नहीं है। स्थान केवल एकता केलिए है। विदेशी शासन से हमारा देशीय बोध और भी मज़बूत हो गया था। स्वतंत्रता केलिए हमने मिलजुलकर काम किए। देशीयोत्थान को सामने रखकर हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर चुन लिया गया।

भारत भूमि में अनेक महापुरुषों ने जन्म लिया। स्वामी विवेकानंद इन महापुरुषों में से एक है जिन्होंने भारत माता तथा हमारी गरिमामय संस्कृति के उत्थान केलिए आजीवन कार्य किया था।

जिस प्रकार सभी नदियों का मिलन सागर में हो जाता है उसी प्रकार सभी जाति-धर्मवालों का एक ही लक्ष्य है 'एकता'। उस एकता को भारत में भर लाने का सफल प्रयास करनेवाले थे स्वामी विवेकानंद। अपनी कर्मकुशलता से, त्याग से, ज्ञान से, भाषण से तथा चिंता से उन्होंने यह महान कार्य किया था।

जनता में देशीयोत्थान का बीजावपन कर देनेवाली प्रेरक शक्तियाँ हैं - शिक्षा और धर्म। स्वामी विवेकानंद ने अपनी शिक्षा रूपी फूल का सुगंध सब कहीं फैलाया था, वे सच्चे धर्मावलंबी थे। उन्होंने भारत की संस्कृति को पहचाना था, भारतियों की दुर्दशा जान ली थी। उनके संबधं में सुभाषचन्द्र बोस का यह कथन देखें -

"स्वामीजी की इच्छाशक्ति बेजोड़ है। सत्य से मिलकर उन्नति पर पहुँचे योगी थे वे। आधुनिक भारत उनकी सृष्टि है। उन्होंने देश की एकता केलिए सब कुछ अर्पित करने का आह्वान किया था।"[1]

जन्मभूमि के प्रति हर एक व्यक्ति के हृदय में अभिमान होता है। अपना देश, गाँव, मित्र आदि की यादें हर पल उनके मन में जाग उठती हैं।

जो अपने देश से प्यार नहीं करता वह शांतिपूर्ण जीवन नहीं बिता सकता। उनके मन में हमेशा संघर्ष होता है।

स्वामी विवेकानंद भारत की संस्कृति एवं इतिहास के गहरे ज्ञानी थे।

चिकागो में दिये भाषण में उन्होंने देश की दुर्गति के बारे में कहा था,

"यह सुंदर धरती अब धर्मांधों से भरा है। इसकी अंधता ने पृथ्वी पर अधिकार पाया है। पृथ्वी को अत्याचार से भराया है। सब कहीं मानव का ख़ून है। संस्कृति की जड़ें उखाड़ दी गयी हैं। सब बंधुजन हताश हैं।[2]

देश के उत्थान में स्वामीजी की विदेश यात्राएँ सहायक बनीं। उनके अनेक लक्ष्य पूरे हुए। अमरीका के लोगों की प्रयत्नशीलता, भारतवासियों में भर देने का अथक परिश्रम उन्होंने किया था। साथ ही साथ भारतीय संस्कृति तथा आध्यात्मिक विचारों को विदेश में फैलाने का प्रयास भी स्वामीजी ने किया। दोनों देशों के बीच का आदान-प्रदान उनका लक्ष्य था।

किसी से भी विरोध का भाव न रखकर सभी से सहायता का मनोभाव प्रकट करनेवाले व्यक्ति देश की उन्नति की एक उत्तम कड़ी है।

देश के उत्थान में बाधा पहुँचानेवाले सांस्कृतिक अधःपतन, धर्म संबंधी स्वार्थता, उच्च-नीचत्व, अंधविश्वास, अनाचार आदि से भारत भूमि की रक्षा करने का प्रयास उन्होंने किया था।

स्वामी विवेकानंद ने सभी धर्मों को सत्य के रूप में स्वीकार किया था। भारत भूमि के संबंध में उन्होंने कहा था,

---

भारतीय संस्कृति और विवेकानन्द दर्शन....

चाहिए और मानसिक अनुशासन द्वारा चित्त की एकाग्रता हाज़िल करना चाहिए। यथार्थ का बोध वैसे ही प्राप्त हो सकता है। स्वामी विवेकानन्द हमेशा वह गुरु के समान प्रस्तुत होते हैं जो अध्यापन और मार्ग-निर्देशन में रुचि रखनेवाले हैं। परम सत्ता से मिलने केलिए योग्य विश्लेषणात्मक अन्तर्ज्ञान, सहजबुद्धि और समझदारी हाज़िल कराने में मदद करनेवाले हैं।

भारत एवं हिन्दू धर्म की ख़ूबियों को देश-विदेश में फैलाने का लक्ष्य उन्होंने अच्छी तरह निभाया। भारत के प्रति जो अवधारणाएँ पश्चिम में रूढिग्रस्त थी, उन्हें बदलवाने तथा उसके बारे में विचार करवाने में कामयाब हुए। परतंत्रता एवं अशिक्षा के कारण कठिन जीवन बिताने के लिए मज़बूर सैकडों दीन-दुखियों के जीवन को सुधारने के लिए प्रयत्नरत रहे। उनका विश्वास था कि स्त्रियों की शिक्षा एवं औद्योगीकरण देश को प्रगति की ओर अग्रसर कराएगा। अपने देश को अन्य संपन्न, विकसित राष्ट्रों की बराबरी में लाना उनका सपना था। स्वामी विवेकानन्द भारतीय संस्कृति के धरोहर वेद और अद्वैत दर्शन के दीप को प्रज्ज्वलित करके समस्त दुनिया के जन-मानस को ग्रसित अन्धकार दूर करने की कोशिश में अंतिम साँस तक लगे रहे। उनका आत्मबल और सास्था उनके कर्मपथ को सुगम बनाते रहे। देश-विदेश के महान विभूतियों से लेकर सामान्य जनता तक के मन और विचार को प्रभावित करनेवाला अभूतपूर्व व्यक्ति विशेष हैं स्वामी विवेकानन्द।

असि.प्रो. ऑफ हिन्दी,
वि.टि.एम.एन.एस.एस. कॉलेज, धनुवच्चपुरम

"मुझे गर्व है कि मैं एक ऐसे देश से हूँ जिसने इस धरती के सभी देशों के सताये गये लोगों को शरण देती है।"[3]

देश के उत्थान केलिए युवा पीढ़ी को उत्तेजित करने की शक्ति स्वामी विवेकानंद में थी। युवकों से उनका आह्वान देखें -

"यह सोने का समय नहीं है। जागरण का समय है। मातृभूमि केलिए स्वयं अर्पित करने का समय आ गया है। हम मिलकर कठिन प्रयत्न करें। भारत का भविष्य हमारे प्रयत्न पर निर्भर है। उठो .... सब जाग उठो। ईश्वर सेवा का सच्चा मार्ग है गरीबों की सेवा। दुःखियों को आश्वासन दो, भूखों को अन्न दो।"[4]

स्वामीजी का विश्वास था कि भारत की जनता केलिए किसी भी धर्म की आवश्यकता नहीं है, उन्हें अन्न की आवश्यकता है।

हिंदु हो, बौद्ध हो या ईसाई हो-सभी को दूसरों का मन पहचानना चाहिए। अपने व्यक्तित्व को निर्मल बनाना चाहिए। आध्यात्मिकता, पवित्रता और उदारता हर एक धर्म का मूलमंत्र होना चाहिए।

भारत माता की संतान होने से उन्हें अभिमान था। जन्मभूमि के संबंध में उनका यह कथन देखें :

"इस भूमंडल का अनुगृहीत राष्ट्र है भारत। औदार्य, परिशुद्धि, शांति आदि की ओर मानवराशि को ले जानेवाला राष्ट्र। आध्यात्मिकता का भण्डार। पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण भूभागों को आनंद की लहरों से भरने का प्रयास करनेवाली पुण्य भारत माता। दुःख दर्द से पीड़ित जन हृदयों की अग्नि को अमृत वर्षा से शीतल करनेवाली हमारी भारतमाता।"[6]

भारत के इतिहास में त्याग और सत्य का स्थान बेजोड़ है। स्वामी विवेकानंद ने त्याग और सत्य का पाठ हमें सिखाया था। अपने सन्यासी साथियों और भक्तजनों के साथ मिलकर उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। मिशन द्वारा सारे संसार में अनेक सेवा केन्द्र, आश्रम, मठ, शिक्षा-संस्थान, अस्पताल आदि संचालित किए जा रहे हैं । स्वामी विवेकानंद ने संपूर्ण देश में भ्रमण कर नवजागरण की मशाल जलाया थी।

स्वामी विवेकानंद के आदर्श एवं प्रतिभाशाली व्यक्तित्व आज भी देशवासियों को प्रेरित करता हैं।

हमेशा उनकी यही चिंता थी कि हमने राष्ट्र केलिए क्या किया, हम क्या करते हैं और आगे क्या करेंगे। ?

पुण्य भारत केलिए ईश्वर का वरदान था स्वामी विवेकानंद। अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करके ज्ञान का प्रकाश फैलानेवाले पुण्यात्मा। लोकमंगल के संस्थापक। हे स्वामी, सारे भारतवासी आपके सम्मुख नतमस्तक हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ:

1. 'नरऋषि' पृ. 93, गोलोकानंदस्वामी, श्रीरामकृष्णमठ, तृश्शूर.
2. 1893 'सितंबर 11 को चिकागो' में दिये भाषण से
1. चिकागो में दिए भाषण में अपना परिचय उन्होंने इस प्रकार किया था ।
2. 1897 जनवरी 26 को भारत में दिये भाषण से
3. 1897 जनवरी 15 को कोलंबो में दिये भाषण। भाषण का विषय था 'पुण्य भूमि भारत'।

संदर्भ ग्रंथसूची:

1. 'नरऋषि' - स्वामी गोलोकानंद, प्रकाशक : श्रीरामकृष्णमठ, तृश्शूर
2. 'श्रीमद् विवेकानंद स्वामिकल्' - स्वामी सिद्धिनाथानंद प्रकाशक : श्रीरामकृष्ण मठ, तृश्शूर.

एच.एस.एस.टी., गव.वी.एच.एस.एस.,
करकुलम, तिरुवनन्तपुरम

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य बने (१०५)

नाम : **श्रीदेवी एस.**
पता : शेकरम, स्वाती नगर-३७, कषक्कूट्टम, तिरुवनन्तपुरम-६९५५८२
शैक्षिक योग्यताएँ : एम.ए., एम.फिल., बी.एड़., सेट
संप्रति : शोध छात्रा, यूनिवर्सिटी लाईब्रेरी, तिरुवनन्तपुरम
निर्देशक : डॉ.सी.एम.योहन्नान
पति : सुरेश बाबू

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य बने (१०६)

नाम : **रेखा आर.एस.**
शिक्षा : एम.ए.(हिन्दी) केरल वि.वि. (१९९७) बि.एड (१९९८), सेट (२०००), नेट (२०१२)
अध्यापिका (हायर सेकण्टरी) श्रीविद्याधिराजा विद्या निलयम हायर सेकन्टरी स्कूल, नेय्याट्टिनकरा
पति : स्वेणुगोपाल एन.एस (Journalist)
पता : वृन्दावनम, नडूरकोल्ल्ला, अमरविला पि.ओ.-६९५१२२
Ph : 0471 - 2231040, Mob: 9400498757

स्वामी विवेकानन्द के इतिहासोज्ज्वल भाषण

डॉ.श्रीकला.जी.एस

स्वामी विवेकानन्द सामायिक भारत के उन कुशल शिल्पियों में है जिन्होंने आधारभूत भारतीय जीवन-मूल्यों की आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में विवेकसंगत व्याख्या की तथा विगत और वर्तमान, परंपरा और आधुनिकता, पूर्व और पचिम, आध्यात्मिकता और भौतिकता, विज्ञान और विश्वास, विचार और व्यवहार, साधना और स्वास्थ्य जैसे एक दूसरे से दूर दिखाई पडनेवाली नदी के तटों को सामंजस्य तथा समन्वय के सेतु से जोड़ने का भगीरथ प्रयत्न किया। स्वामी विवेकानन्दजी ने जो संदेश हमें दी है वह न कभी पुराना पड़ सकता है, न कभी मर सकता है। वह आज के लिए भी है, वह कल के लिए भी है। स्वामी विवेकानन्द ने अपने जीवन का प्रधान लक्ष्य मानव निर्माण माना है।

१८६३ ई. की १२ जनवरी को सूर्योदय से छह मिनट पहले छह बजकर तैंतीस सेकें ट पर भुवनेश्वरी देवी ने विवेकानन्दजी को जन्म दिया। स्वामीजी का वास्तविक नाम नरेन्द्र था। आपके पिता श्री विश्वनाथ दत्त बंगाल के सुप्रसिद्ध वकील थे तथा माता श्रीमती भुवनेश्वरी देवी थी। अत: स्वामिजी पर अपने माता-पिता का बहुत प्रभाव पड़ा। स्वामीजी की शिक्षा का प्रारंभ उनके घर से ही हुआ था। बालक नरेन्द्र ने सात वर्ष की आयु तक संपूर्ण व्याकरण कंठस्थ कर लिया और रामायण तथा महाभारत के बहुत से लंबे प्रसंग याद कर लिए।

स्वामी विवेकानन्द प्रारंभ से ही एक जिज्ञासु युवक थे। स्वामीजी के ऊपर ब्रह्म समाज का काफी प्रभाव पड़ा था। लेकिन उन्हें लगा कि ब्रह्म समाज के द्वारा उनका लक्ष्य पूरा न हो सके गा। सन् १८८६ में श्री.रामकृ ष्ण की मृत्यु के पश्चात् उनकी शिक्षा का प्रचार किया और विश्व के लोगों को वेदान्त, आध्यात्मिकता, नैतिकता और धर्म के बारे में जानकारी देकर एक उचित राह पर चलने के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

विवेकानन्दजी को विज्ञान, ज्योतिष, गणित, योग विद्या तथा भारतीय भाषाओं - हिन्दीं, संस्कृ त, बंगला एवं योरोपीय भाषाओं विशेषकर अंग्रेज़ी पर विशेष अधिकार था। स्वामीजी ने स्वयं को ग्रन्थ कम लिखे थे। लेकिन उन्होंने भाषण देश और विदेशों में काफी दिए थे। स्वामी विवेकानन्दजी ने निम्नलिखित ग्रंथ स्वयं लिखे थे:

१. उत्तिष्ठित जागृत, २. मेरे गुरु देव, ३. परिव्राजक

इन उपर्योक्त ग्रन्थों के अलावा उन्होंने विभिन्न विषयों पर जो भाषण दिए थे वे भी संकलित रूप से प्रस्तुत है। इन व्याख्यान मालाओं के अन्तगर्त कर्मयोग, भक्तियोग, आधुनिक भारत, पूर्व पचिम वेदान्त का रहस्य आदि विषयों का समावेश है। स्वामी विवेकानन्दजी ने जो पत्र लिखे थे तथा उन्हें जो उत्तर पाए हुए थे उनका संग्रह भी पत्रावली नामक पुस्तक में है।

स्वामीजी एक महान राष्ट्रवादी देाभक्त तथा विश्व बन्धुत्व की भावना से ओतप्रोत था। स्वामीजी पर सबसे अधिक प्रभाव उनके गुरु श्रीरामकृ ष्ण परमहंस की शिक्षाओं का पड़ा था। स्वामी विवेकानन्दजी अपने आपको श्री रामकृ ष्ण परमहंस की प्रतिध्वनि मानते थे।

विश्वधर्म महासभा, शिकागो में दिए गए भाषण

अपनी यात्रा के बीच में जब वे खण्डवा में थे तब उन्हें १८९३ में अमेरिका के शिकागो नगर में होनेवाली धर्म संसद के बैठक के बारे में पता चला। स्वामी विवेकान्दजी ने इस सभा में भाग लेने की इच्छा व्यक्त की। धर्म संसद में भाग लेने के लिए उनके दो उद्देय थे।

१. हिन्दू धर्म की अन्य धर्मों के ऊपर श्रेष्ठता का प्रतिपादन करना।

२. भारत की गरीबी के विवरण के लिए अमेरिका की समृद्धि का सहयोग प्राप्त करना।

सोमवार ११ सितंबर १८९३ को धर्म संसद का प्रथम अधिवेशन कोल नगर होल में प्रारंभ हुआ। यहाँ पर धर्मों की प्रतिनिधि उपस्थित थे। मध्य में रोमन कै थोलिक चर्च के उच्चतम अधिकारी कार्डिनल गिवन्स बैठे थे। भारत से आए प्रतिनिधियों में ब्रह्म समाज के प्रताप चन्द्र मजूमदार और नागरकर गाँधी, जैन समाज के वीरचन्द्र, थिओसफी की ओर से एनी बेसेन्ट व चक्रवर्ती तथा स्वामी विवेकानन्द जो हिन्दु धर्म का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। स्वामीजी ने अपने परिचय के साथ अमेरिकावासियों को भगिनी व भ्राता कहकर जब संबोधित किया तो उस समय दो मिनट पर करतल ध्वनि होती रही। स्वामीजी ने अपना भाषण हिंदू धर्म से प्रारंभ कि या उन्होंने हिन्दू धर्म को सभी धर्मों का जनक बताया क्योंकि इसी ने संसार को सहिष्णुता और सार्वभौमिकता का पाठ पढ़ाया है। अपने मत की पुष्टि के लिए उन्होंने गीता के पर्दों के उद्धरणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि धर्म में सांप्रदायिकता, संकीर्णता, धर्मान्धता आदि के लिए कोई स्थान नहीं है। उन्होंने अमेरिका और इंग्लैंड आदि देशों को भारतीय दर्शन के मौलिक सिद्धांत की जानकारी दी-यह विश्व मानव के लिए एक नया संदेश था। 'स्वामीजी ने अमेरिका निवासियों को हिन्दुओं के बारे में बताया कि हिन्दू लोग तुम्हें पापी कभी नहीं कहते। तुम सब अमृत की सन्तान हो। इस पृथ्वी पर पाप के नाम की कोई चीज़ नहीं है। यदि कोई पाप है तो मनुष्य को पापी कहना। तुम सर्वशक्तिमान आत्मा हो शुद्ध मुक्त महान। उठो जागो और अपने स्वयं को प्रकट करने के लिए चेष्टा करो।' १ वास्टन इविनंग टेन्सकिस्ट ने लिखा था:

He is really a great man, noble, simple, sincere and l learned beyond comparison with most of our scholar's.[2]

स्वामीजी ने कहा कि वे ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करते हैं, जिसने महान जरथुष्ट्र जाति के अवशिष्ट अंश को शरण दी और जिसका पालन वह अब तक कर रहा है। उन्होंने कु छ पंक्तियाँ सुनाई जिसका अर्थ यों है- जैसे विभिन्न नदियाँ भिन्न - भिन्न 'स्त्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती है, उसीप्रकार हे

प्रभो भिन्न-भिन्न रुचि के अनुसार विभिन्न टेढे-मेढे अथवा सीधे रास्ते से जानेवाले लोग अन्त में तुझमें ही आकर मिल जाते हैं।

उनके अनुसार साम्प्रदायिकता, हठ धर्मिता और उनकी बीभत्स वंशधर धर्मान्धता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी है। वे पृथ्वी को हिंसा से भरती रही है, उनको बारम्बार मानवता के रक्त से नहलाती रही है, सभ्यताओं को विध्वंस्त करती और पूरे पूरे देशों को निराा के गर्त में डाली रही हैं। यदि ये बीभत्स दानवी न होती, तो मानवसमाज आज की अवस्था से कहीं अधिक उन्नत हो गया होता। पर अब उनका समय आ गया है।

हिन्दु जाति ने अपना धर्म श्रुति वेदों से प्राप्त किया है। उनकी धारणा है कि वेद अनादि और अनन्त हैं। वेदों का अर्थ है, भिन्न भिन्न कालों में भिन्न भिन्न व्यक्तियों द्वारा आविष्कृत आध्यात्मिक सत्यों का संचित कोष। जिस प्रकार गुरुत्वाकार्षण का सिद्धांत मनुष्यों के पता लगाने के पूर्व से ही अपना काम करता चला आया था और आज यदि मनुष्यजाति उसे भूल भी जाए, तो भी वह नियम अपना काम करता ही रहेगा। ठीक वही बात आध्यात्मिक जगत् का ासन करनेवाला नियमों के संबन्ध में भी है। एक आत्मा का दूसरी आत्मा के साथ जो नैतिक तथा आध्यात्मिक संबन्ध हैं, वे उनके आविष्कार के पूर्व भी थे, और हम यदि उन्हें भूल भी जाएँ तो भी बने रहेंगे। इन नियमों या सत्यों का आविष्कार करनेवाले ऋषि थे। वेद हमें यह सिखाते हैं कि सृष्टि का न आदि है, न अन्त। विज्ञान ने हमें सिद्ध कर दिखाया है कि समग्र विश्व की सारी उर्जा-समष्टि का परिमाण सदा एक सा रहता है। 'स्रष्टा और सृष्टि मानो दो रेखाएँ हैं, जिनका न आदि है, न अन्त और जो समानन्तर चलती है।

प्रत्येक आत्म अव्यक्त ब्रह्म है। बाह्य एवं अन्तः प्रकृति को वशीभूत करके आत्मा के इस ब्रह्मभाव को व्यक्त करना ही जीवन का चरम लक्ष्य है। विवेकानन्दजी ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करते हैं। जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति, दोनों की ही शिक्षा दी है। हमलोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते, वरन्, समस्त धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते है। स्वामिजी के शब्दों में- मुझे एक ऐसे देश का व्यक्ति होने का अभिमान है, जिसने इस पृथ्वी के समस्त धर्मों और देशों के उत्पीडितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया है। प्रागैतिहासिक युग से चले आनेवाले केवल तीन ही धर्म आज संसार में विद्यमान हैं। - हिन्दु धर्म, पारसी धर्म और यहूदी धर्म। वेद हमें यह सिखाते हैं कि सृष्टि का न आदि हैं, न अन्त। विज्ञान ने हमें सिद्ध कर दिखाया है कि समग्र विश्व की सारी ऊर्जा-समष्टि का परिमाण सदा एक सा रहता है। इस जन्म के पूर्व ऐसे कारण होने ही चाहिए, जिसके फलस्वरूप मनुष्य इस जन्म में सुखी या दुःखी हुआ करता है और ये कारण है, उसके ही पूर्वानुष्ठित कर्म।

हिन्दू का यह विश्वास है कि वह आत्मा है। हिन्दुओं की धारणा यह है कि आत्मा एक ऐसा वृत्त है, जिसकी परिधि कहीं नहीं है, किन्तु जिसका केन्द्र, शरीर में अवस्थित है। मृत्यु का अर्थ है, इस केन्द्र का एक ारीर से दूसरे शरीर में स्थानान्तरित हो जाना। यह आत्मा जड़ की उपाधियों से बद्ध नहीं है वह स्वरूपतः नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-स्वाभाव है। परन्तु किसी कारण से अपने को जड़ से बंधी हुई पाती है, और अपने को जड़ समझती है। मनुष्य की आत्मा अनादि और अमर है, पूर्ण और अनंत है। वर्तमान अवस्था हमारे पूर्वानुष्ठित कर्मों द्वारा निश्चित होती है और भविष्य वर्तमान कर्मों द्वारा।

स्वामीजी के अनुसार मनुष्य को इस संसार में पद्मपत्र की तरह रहना चाहिए। पद्मपत्र जैसे पानी में रहकर भी उससे नहीं भीगता, उसीप्रकार मनुष्य को भी संसार में रहना चाहिए - उसका हृदय ईवर में लगा रहे और उसके हाथ कर्म करने में लगे रहें। इहलोक या परलोक में पुरस्कार की प्रत्याा से ईवर से प्रेम करना बुरी बात है, पर केवल प्रेम के लिए ही ईश्वर से प्रेम करना सबसे अच्छा है, और उसके निकट यही प्रार्थना करना उचित है, "हे भगवान, मुझे न तो संपत्ति चाहिए, न संतती, न विद्या। यदि तेरी इच्छा है तो सहस्रों बार जन्म - मृत्यु चक्र में पडूँगा, पर हे प्रभो केवल इतना ही दे कि मैं फल की आशा छोड़कर तेरी भक्ति करूँ, केवल प्रेम के लिए ही तुझपर मेरा निस्वार्थ प्रेम हो।

स्वामी विवेकानन्दजी ने धर्म संसद में अपनी वाक्पटुता तथा ज्ञान से वेदान्तिक ओजस्वी भाषणों से अमेरिका निवासियों को भारत के प्रति प्रेम करने के लिए मज़बूर कर दिया। उन्हें यह सोचने के लिए विवश किया कि भारत भी हमारे जैसे एक देश है जहाँ हमारे जैसे मानव निवास करते हैं। उनका धर्म, ईश्वर और रीति रिवाज़ हमारे ही धर्म और ईश्वर के समान है। दुनिया के सभी प्राणी हमारे अपने ही संबन्धी है। अतः हमें उसे बराबर प्रेम करना चाहिए।

६ दिसंबर १८९५ में स्वामीजी ने इंगलैंड से पुनः न्यूयार्क पर्दापण कर फिर से प्रचार कार्य आरंभ कर दिया। वहाँ पर स्वामीजी ने कर्मयोग तथा सार्वभौमिक धर्म के आदर्षों पर अनेक व्याख्यान दिए। अमेरिका में स्वामीजी के भाषणों को लिपिबद्ध करने के लिए योग्य व्यक्ति का अभाव था इसलिए इंगलैण्ड से श्री.जे.जे.गुडविन नामक एक सांकेतिक ज्ञानकार न्यूयार्क आये जो स्वामीजी से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने उनका शिष्यत्व ग्रहण कर लिया तथा सांकेतिक लिपिबद्ध का कार्यभार अपने ऊपर लिया। 'राजयोग' पुस्तक उसीका एक प्रारूप है।

लॉस एंजीलस कैलिफोर्निया में दिया हुआ भाषणः संक्षेप में

स्वामीजी ने यो कहाः मैं शरीर हूँ, इस भावना से जब तुम अपनी ओर देखते हो तो 'मैं मन भी हूँ' यह भूल जाते हो और जब तुम अपने को मनोरूप देखने लगते हो, तो तुम्हें अपने शरीरत्व की विस्मृति हो जाती है। विद्यमान वस्तु केवल एक है और वह तुम हो। जन्म, जीवन, मरण ये सब भ्रम मात्र हैं। न कोई कभी मरता है और न कोई कभी जन्म लेता है, केवल मनुष्य एक स्थिति से दूसरी स्थिति में चला जाता है।

यदि तुम योगी बनना चाहते हैं, तो तुम्हें स्वतंत्र होना होगा, और अपने को ऐसे वातावरण में रखना होगा, जहाँ तुम एकाकी और सर्व चिंताओं से मुक्त होकर रह सको। जो भोग विलासपूर्ण जीवन की इच्छा रखते हुए आत्मानुभूति की चाह रखता है, वह उस मूर्ख के समान है। जिसने नदी पार करने के लिए एक मगर को लकड़ी का लट्ठा समझकर पकड़ लिया।

आध्यात्मिक जीवन का सबसे बड़ा सहायक 'ध्यान' है। ध्यान के द्वारा हम अपनी भौतिक भावनाओं से अपने आपको स्वतंत्र कर लेते हैं और अपने ईश्वरीय स्वरूप का अनुभव करने लगते हैं। ध्यान करते समय हमें कोई बाहरी साधनों पर अवलंबित नहीं रहना पड़ता। गहरे अंधेरे स्थान को भी आत्मा की ज्योति दिव्य प्रकाश से भर देती है, बुरी से बुरी वस्तु में भी वह अपना सौरभ उत्पन्न कर सकती है, वह अत्यंत दुष्ट मनुष्य को भी देवता बना देती है - और संपूर्ण स्वार्थी भावनाएँ, संपूर्ण शत्रुभाव नष्ट हो जाते हैं। शरीर का जितना कम ख्याल हो, उतना ही अच्छा, क्योंकि यह शरीर ही है, जो हमें नीचे गिराता है। इस शरीर से आसक्ति और उससे तादात्म्य ही हमारे दुःखों का कारण है।

लन्दन में दिया हुआ भाषणः- संक्षेप में

लन्दन में मुख्यतः 'माया और भ्रम' के संबन्ध में विवेकानन्दजी ने भाषण प्रस्तुत किया। उसके कु छ अंश इसप्रकार हैः-

इस संसार में मृत्यु रात-दिन गर्व से मस्तक ऊँचा किये घूम रही है, पर हम सोचते हैं कि हम सदा जीवित रहेंगे। किसी समय राजा युधिष्ठिर से यह प्रश्न पूछा गया, इस पृथ्वी पर सबसे आश्चर्य की बात क्या है? राजा ने उत्तर दिया, 'हमारे चारों ओर प्रतिदिन लोग मर रहे हैं, फिर भी जो जीवित हैं, वे समझते हैं कि वे कभी मरेंगे ही नहीं, बस यही माया है'।

'माया' संसार की वस्तु-स्थिति का वर्णन मात्र है - विरुद्ध भाव ही हमारे अस्तित्व की भित्ति है, सर्वत्र इन्हीं भयानक विरुद्ध भावों में से होकर हम जा रहे हैं। जहाँ शुभ है, वहाँ अशुभ भी है और जहाँ अशुभ है, वहीं अवय शुभ है। जहाँ जीवन है, वहाँ मृत्यु छाया की भाँति उसका अनुसरण कर रही है। जो हँस रहा है, उसीको रोना पडेगा। जोश रहा है, वह भी हँसेगा। यह क्रम बदल नहीं सकता।

इस संसार में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं जिसे एकदम शुभ या एकदम अशुभ कहा जा सके। एक ही वस्तु, जो एक व्यक्ति को दुःख करती है, दुसरी को सुखी बना सकती है। मृत्युहीन जीवन और दुःखहीन सुख, ये बातें परस्पर विरोधी हैं, इनमें कोई सत्य नहीं है, क्योंकि दोनों एक ही वस्तु की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ हैं।

मद्रास में दिया गया भाषण का संक्षेप

मद्रास में लगभग चार हज़ार श्रोताओं के सम्मुख उन्होंने जो भाषण प्रस्तुत किया उसका मुख्य विषय 'भारत का भविष्य' रहा। वह इसप्रकार हैः-

किसी भी दूसरे देश की अपेक्षा भारत की समस्याएँ अधिक जटिल और गुरुतर हैं। जाति, धर्म, भाषा, शासन-प्रणाली-ये ही एक साथ मिलकर एक राष्ट्र की सृष्टि करते हैं। यहाँ आर्य हैं, द्रविड़ हैं, तातार हैं, तुर्क हैं, मुगल है, यूरोपीय हैं-मानो संसार की सभी जातियाँ इस भूमि में अपना अपना खून मिला रही हैं। हम देखते हैं कि भारत में जाति, भाषा समाज संबन्धी सभी बाधाएँ धर्म की इस एकीकरण शक्ति के सामने उड़ जाती हैं। भविष्य के भारत निर्माण का पहला कार्य वह पहला सोपान, जिसे युगों के उस महाचल पर खोदकर बनाना होगा, भारत की यह धार्मिक एकता ही है। 'लडाई-झगड़े छोड़ने के साथ ही अन्य विषयों की उन्नति अवय होगा, यदि जीवन का रक्त सशक्त एवं शुद्ध है, तो शरीर में विषैले कीटाणु नहीं रह सकते। हमारी आध्यात्मिकता ही हमारा जीवन-रक्त है। यदि यह साफ बहता रहे, यदि यह शुद्ध एवं सशक्त बना रहे, तो सब कुछ ठीक है।

आगामी पचास वर्ष के लिए यह जननी जन्मभूमि भारतमाता ही मानो आराध्य देवी बन जाए। तब तक के लिए हमारे मस्तिष्क से व्यर्थ देवी-देवताओं के हट जाने में कुछ भी हानि नहीं है। अपना सारा ध्यान इसी एक ईश्वर पर लगाओ, हमारा देश ही हमारा जागृत देवता है।

जो शिक्षा हम अभी पा रहे हैं उसमें कु छ अच्छा अंश भी है और बुराइयाँ बहुत हैं। इसलिए ये बुराइयाँ उसके भले अंश को दबा देती है। सबसे पहली बात तो यह है कि यह शिक्षा मनुष्य बनानेवाली नहीं कही जा सकती। यह शिक्षा के वल तथा संपूर्णतः निषेधात्मक है। निषेधात्मक शिक्षा याा निषेध की बुनियाद पर आधारित शिक्षा मृत्यु से भी भयानक है। कोमलवती बालक पाठशाला में भर्ती होता है और सबसे पहली बात, जो उसे सिखायी जाती है, वह यह है कि तुम्हारा बाप मूर्ख है। दूसरी बात तो वह सीखता है, वह यह है कि तुम्हारा दादा पागल है। तीसरी बात है कि तुम्हारे जितने शिक्षक और आचार्य हैं, वे पाखंडी है। और चौथी बात हे कि तुम्हारे जितने पवित्र धर्मग्रंथ हैं, उनमें झूठी और कपोलकल्पित बातें भरी हुई हैं। इसप्रकार की निषेधात्मक बातें सीखते सीखते जब बालक सोलह वर्ष की अवस्था को पहूँचता है, तब वह निषेधों की खान बन जाता है। जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सकें मनुष्य बन सकें, चरित्र गठन कर सकें और विचारों का सामंजस्य कर सकें, वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है। इसलिए हमारा आदर्श यह होना चाहिए कि अपने देश के समग्र आध्यात्मिक और लौकिक शिक्षा के प्रचार का भार अपने हाथों में ले लें और जहाँ तक संभव हो, राष्ट्रीय सिद्धातों के आधार पर शिक्षा का विस्तार करें।

स्वामी विवेकानन्द आधुनिक मानव के आदर्श प्रतिनिधि है। 'वे भारतीय और विश्व इतिहास के उन कु छ गिने-चुने व्यक्तियों में से है जो राष्ट्रीय जीवन को एक नई दिशा देते हैं। स्वामीजी के व्यक्ति और विचारों में भारतीय परंपरा के सर्वश्रेष्ठ तत्व निहित है।'३ सबसे बढकर बात यह है कि स्वामिजी ने पाश्चात्य संस्कृति के गतिाील एवं रचनात्मक तत्वों को समझा, उन्हें आत्मसात किया और अपने देशवासियों का ध्यान उनकी ओर खींचा। भारत की आत्मा और पचिम का शरीर यह स्वामीजी का आदर्श था। के वल भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व स्वामीजी

समाज सुधार और स्वामी विवेकानंद

दिव्या वी.एच

सहस्राब्दियों से ही अनेक महान-पुरुषों ने इस भूमि पर जन्म लेकर हमारी मेदिनी को पुण्य एवं अलंकृत किए आ रहे हैं। वे अपनी वीर एवं मानविक करतूतों से धरती की ज़िन्दगियों का मूल्य बढ़ाते रहते हैं। उनमें अपने महत्वपूर्ण दर्शनों द्वारा अपने ही जीवन को एक संदेश बनाकर मातृभूमि का यश बढ़ानेवाला एक महान पुरुष है स्वामी विवेकानंद।

संपूज्य परिव्राजक श्री रामकृष्ण परमहंस के शिष्य विवेकानंद ने केवल एक परिव्राजक ही नहीं बल्कि दार्शनिक, लेखक, भाषक, शिक्षक, पर्यटक, देशप्रेमी, समाजसुधारक, आध्यात्मिक नेता आदि सभी रूपों में भारत को एक नवचेतना दिया है।

भारतीय नवोत्थान के सूत्रपात करनेवाले स्वामी विवेकानंद ने वेदों, इतिहासों एवं हैन्दव धर्म ग्रन्थों से प्रेरित होकर उन आशयों को जन-प्रियशैली में प्रस्तुत करके समाज में व्याप्त अन्धकार को दूर करने का प्रयास बड़ी गंभीरता से किया है।

उन्हें भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के अगाध ज्ञान था। वे भारत की सांस्कृतिक रुढ़ियों का सम्मान करते थे और भारत की आम जनता के प्रति प्रेम तथा इनायत भी करते थे। इन खासियतों से संपन्न उन्हें भारत ने 'संक्षिप्त भारत'[१] ऐसा विशेषण दिया है।

प्रतिभासम्पन्न स्वामी विवेकानंद ने विज्ञान विश्व इतिहास एवं दर्शन के क्षेत्र में अभूतपूर्व दक्षता हासिल की थी। उनके दर्शन प्रमुख रूप से आध्यात्मिकता पर अधिष्ठित थी। विवेकानंद का यह विश्वास था कि भारत में आध्यात्मिकता का लोप कभी नहीं हो सकता है। आध्यात्मिकता के माध्यम से धर्माडंबरों एवं अंधविश्वासों से भ्रमित भारतीय समाज को धर्म की मानवीयता एवं उसके मूल्य की पहचान दिलाना उनका लक्ष्य था। भारतीय समाज को संदेश देते हुए वे कहते हैं कि "भारत वर्ष की पहचान जिस दिन ख़त्म हो जाएगी उस दिन मानवीय जीवन ही ख़त्म हो जाएगा – क्या भारत मर जाएगा? तब तो संसार से सारी आध्यात्मिकता का समूल नाश हो जाएगा, धर्मों के प्रति सारी मधुर सहानुभूति नष्ट हो जाएगी, सारी भावुकता का भी लोप हो जाएगा और उसके स्थान में काम रुपी देव और विलासिता रूपी देवी राज्य करेगी। धन उसका पुरोहित होगा। प्रतारणा, पाशविक बल और प्रतिद्वन्द्विता, ये ही उनकी पूजा पद्धति होगी और मानवता उनकी बलि सामग्री हो जाएगी। ऐसी दुर्घटना कभी हो नहीं सकती।"[२]

स्वामी विवेकानंद ने भारत की प्रगति भारत के नौजवानों में देखा है। विवेकानंद का मानना है कि भारत के भविष्य और वर्तमान युवा में छिपे हैं। यदि उसको किसी तरह से जगा दिया जाय और उसको सही दिशा में लगा दिया जाय तो बहुत सारी समस्याओं का समाधान हो सकता है। उन्होंने युवकों को देश - निर्माण एवं सुधार का साधन माना है और इसलिए वह देश भर पर्यटन करके अपने दर्शनों का प्रचार किया है। वे युवकों से कहते हैं कि "एक बात विचार करके देखिए, मनुष्य नियमों को बनाता है या नियम मनुष्य को बनाते है? मनुष्य रुपया पैदा करता है या रुपया मनुष्यों को पैदा करता है? मनुष्य कीर्ति और नाम पैदा करता है या कीर्ति और नाम मनुष्य को पैदा करते है? मेरे मित्रो! पहले मनुष्य बनिए, तब आप देखेंगे कि वे सब बाकी चीज़ें स्वयं आपका अनुसरण करेंगी।"[३]

स्वामी विवेकानंद ने भारत के नवयुवकों के आत्मविश्वास पैदा करके यह आह्वान दिया है कि "आज हमारे देश को जिस चीज़ की आवश्यकता है वह है दृढ़ इच्छा-शक्ति, इस्पात जैसी मास-पेशियाँ और मज़बूत स्नायु-जिन्हें कोई भी ताकत रोक या झुका न सके, जो यदि ज़रूरी हो तो सागर की अतल गहराइयों में भी अपने लक्ष्य की पूर्ति केलिए मौत का मुकाबला करने को तैयार रहें।[४] स्वतंत्रचितन करने का उपदेश भी उन्होंने युवकों को दिया है। उनके अनुसार स्वतंत्र चिंतन व्यक्ति और समाज की उन्नति केलिए अति आवश्यक है।

स्वाभाविक रूप से उनके दर्शन भारत के नौजवानों के दिल में भी धीरे-धीरे बह गए और भारत भर इसका प्रभाव पड़ गया। कोलंबो से लेकर अलमोरा तक किए गए उनके उज्वल भाषण का प्रभाव भारत के कोने-कोने तक फैल गया। सुषुप्ति में पड़े हुए नौजवानों के देश प्रेम एवं प्रतिभा जाग उठे। अनेक कर्मवीरों को वे अपनी बोलियों, करतूतों, तहरीरों और पुस्तकों के ज़रिए कर्मपथ में ले आए। इस सिलसिले में भारत नवोत्थान की पहली सीढ़ी पर अपना पैर छुआ।

स्वामी विवेकानंद ने राष्ट्रसेवा को उचित ईश्वर सेवा मानी है। देश भक्ति एवं देशप्रेम से पूर्ण आपके जीवन एवं आह्वान ने देशीय स्वतंत्रता के स्फूर्तिदायी एवं विधायक विचारों द्वारा प्रचुर मात्रा में लाभान्वित हुआ है। कहने की आवयकता नहीं, स्वामी विवेकानन्द का के वल भारत ही नहीं, वरन् विश्व के धार्मिक एवं सांस्कृतिक इतिहास में बहुत उच्च स्थान है। स्वामीजी के संदेश का सार मर्म है - 'स्वयं पूर्ण बनो और दूसरों को भी पूर्ण बनाओ।'

संक्षेप में स्वामी विवेकानन्द के भाषणों में तत्कालीन परिवेश के प्रति 'अहसास' और उसकी समझ दोनों है। तत्कालीन परिस्थिति के प्रति गहरे लगाव और जटिल अराजकताओं के प्रति प्रतिक्रिया भी इन भाषणों की अन्तःसत्ता है। उनके भाषण भावात्मक स्तर पर नहीं बौद्धिक स्तर पर संयोजित है, उसकी प्रासंगिकता अक्षुण्ण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

१. सत्येन्द्रनाथ मजूमदार, विवेकानन्दं चरित, पृ.सं - ११०
२. स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, विवेकानन्द साहित्य संचयन, पृ.सं - १२४
३. राजेन्द्र प्रसाद गुप्त, स्वामी विवेकानन्द व्यक्ति और विचार, पृ.सं - १७०

जी.एच.एस.एस. कुलत्तूप्पुषा

संग्राम केलिए लड़ने केलिए भारतीयों को शक्ति एवं हिम्मत प्रदान की।

सेवा और शिक्षा के द्वारा भारत के पतित लोगों को उठाने का श्रम विवेकानंद ने किया है। आपको यह मालूम था कि गरीबी दूर किए बिना भारतीयों को नैतिक, बौद्धिक, धार्मिक आदि किसी भी रूप में खड़ा नहीं किया जा सकता है। भारतीयों की गरीबी को दूर करके उनके जीवन-स्तर को उन्नत करना रामकृष्ण मिशन के पहला उद्देश्य के रूप में उन्होंने देखा है । इस संदर्भ में उन्होंने लिखा है – "वे हमसे रोटी मांगते हैं, लेकिन हम उन्हें पत्थर देते हैं। भूख से पीड़ित जनों के गले में धर्म उंड़ेलना, उनका अपमान करना है। भूख से अधमरे व्यक्ति को धार्मिक सिद्धांतों की घुट्टी पिलाना उनके आत्म-सम्मान पर आघात करना है।"[५]

स्वामी विवेकानंद ने अस्पृश्यता, जाति-प्रथा, धार्मिक आतंक आदि बहुत सारी कमज़ोरियों की खुलकर निन्दा की है। जब वह बंगलूरु में थे तब श्री नारायणगुरु के शिष्य डॉ.पल्पू ने केरल के नीचे फिरके के लोगों की हृदयस्पर्शी कहानी सुनाई। केरल के 'तींडल'[६] (अस्पृश्यता) नामक अनाचार के बारे में सुनकर वे बहुत दुखी हुए। विवेकानंद के उपदेशानुसार ही डॉ.पल्पू ने श्री नारायणगुरु के आशीर्वाद से श्री नारायण धर्म परिपालनसंघ की स्थापना की। इस प्रकार केरल में एक नवयुग की श्रीगणेश हुआ।

मद्रास के युवकों द्वारा दिए-गए एक अगवानी के जवाब भाषण में उन्होंने केरलीयों की जाति-प्रथा के प्रति अपना विरोध खुलकर प्रकट किया। उन्होंने कहा कि "धर्म एवं जाति के नाम पर होड़ करके लड़नेवाली सब मलबारियाँ (केरलीय) बौरे हैं और उन लोगों के घर सब बौरे घर है। जब तक वे अपनी गलती सुधार नहीं करते तब तक उनसे सबको अमर्ष एवं विद्वेष के साथ व्यवहार करना चाहिए।"[७] उन्होंने भारतीय समाज के दलित-पीड़ित वर्ग को ऊपर उठाने का भरसक प्रयास किया है। पिछड़ों या निम्नजाति को ऊपर उठाने का आदेश देते हुए वे कहते हैं कि "एक ओर आदर्श है ब्राह्मण तथा दूसरी ओर आदर्श है चाण्डाल। चाण्डाल को उठाकर उसे ब्राह्मण स्तर तक ले आना ही संपूर्ण कार्य है।"[८]

समाज सुधारक के रूप में जन-साधारण को ऊपर उठाने के कार्य में जितनी सफलता विवेकानंद को मिली है उतनी सफलता और किसी को नहीं मिली है।

विवेकानंद पुरोहित कर्म और परंपरावादी ब्राह्मणों के पुरातन अधिकारवाद के घोर विरोधी थे। उन्होंने पुरोहित कर्म की कटुशब्दों में निन्दा की है। विवेकानंद की राय में सभी मनुष्य समान हैं। उनको समान रूप से आध्यात्मिक अनुभूति तथा परम ज्ञान प्राप्त करने का समान अधिकार है।

विवेकानंद समाज में नारी जाति के शोषण को देखकर कहते हैं कि "स्त्रियों को सही आदर देकर ही सभी राष्ट्र अपना महत्व दिखाया है। जो राष्ट्र स्त्रियों का सम्मान नहीं करते वे राष्ट्र कभी भी श्रेष्ठ राष्ट्र नहीं कह सकते।"[९]

विवेकानंद बाल विवाह के घोर-विरोधी थे। उनका कहना है कि बालविवाह से समाज में ढ़ेर सारी विसंगतियाँ फैल जाती हैं। बालविवाह पर अपना विरोध प्रकट करते हुए वे कहते हैं कि – "जिस प्रथा के अनुसार अबोध बालिकाओं का पाणिग्रहण होता है, उसके साथ मैं किसी किसी प्रकार के सम्बन्ध रखने में असमर्थ हूँ। बाल विवाह से असामयिक संतानोत्पत्ति होती है और अल्पायु में सन्तान धारण करने के कारण हमारी स्त्रियाँ अल्पायु की होती हैं, उसकी दुर्बल और रोगी संतान देश में भिखारियों की संख्या बढ़ाने का कारण बनती हैं। बालविवाह समाज में विधवाओं की संख्या बढ़ाने का भी कारण बन जाती है।"[१०] उन्होंने नारी-शिक्षा विधवा-विवाह आदि पर भी अपना विचार प्रकट किया है।

विवेकानंद सामाजिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तनों की अपेक्षा धीमी गति से सुधार के पक्षपाती हैं। उन्होंने भारत को अपनी ही प्रकृति के अनुसार विकसित करने पर बल दिया है। यूरोप के अंधानुकरण की कटु आलोचना करते हुए वे कहते हैं कि "हमारी अपनी परंपराएँ और हज़ारों वर्षों के कर्म हमारे साथ हैं, इसलिए संभवत: हम अपनी ही प्रकृति का अनुसरण कर सकते हैं, अपनी ही लकीर पर चल सकते हैं और हम वही करेंगे। हम पाश्चात्य नहीं बन सकते, इसलिए पश्चिम का अनुकरण करना निरर्थक है।"[११]

विवेकानंद ने अंधविश्वासों, रुढ़ियों आदि से स्वतंत्र होकर धर्म के सही स्वरूप को अपनाने का आदेश भारतीयों को दिया है। धर्म के बारे में विवेकानंद का विचार बुद्धिवाद एवं वैज्ञानिक दृष्टि पर आधारित है। उन्होंने धर्म को प्रबल शक्ति मानी है, क्योंकि मनुष्य केलिए धर्म सर्वस्व है। वह समाज में जागरूकता पैदा कर सकता है। उन्होंने धर्म के बाह्य आडंबरों की कटु निंदा की है। उन्होंने किसी धर्म का विरोध नहीं किया। वे सभी को अपनी दृष्टि में समा लेना चाहते थे।

विवेकानंद समाजवाद से इतने प्रभावित थे कि वे अपने को समाजवादी बतलाते हैं। वे अस्पृष्यता, श्रद्धा विहीनता, पाश्चात्य भौतिकवादी संस्कृति के प्रति अत्यधिक आकर्षण, बेईमानी, छात्र-भावना का अभाव, हीन समझने की मनोदशा, साहस एवं मौलिकता की कमी, संकीर्णता, आलस्य, धार्मिक भावना की उपेक्षा आदि को भारतीय समाज के पतन का कारण मानते हैं।

विवेकानंद ने समाज के व्यक्तियों से अपने दिमाग की खिड़कियाँ खोलने की बात की है। उनका विश्वास था कि निष्काम कर्तव्य करते जाने से अधिकारों की स्वयं ही प्राप्ति हो जाती है। अधिकारों के पीछे दौड़ना वे मूर्खता समझते हैं। विवेकानंद सत्य पर पूरा विश्वास करते हैं। वे समाज को यह संदेश देते हैं कि -"सतर्क रहो जो कुछ असत्य है उसे पास न आने दो। सत्य पर डटे रहो, बस तभी हम सफल होंगे। शायद थोड़ा अधिक समय लगे, पर सफल हम अवश्य होंगे।"[१२]

अब स्वामी विवेकानंद के १५० वाँ जन्म वार्षिक महोत्सव का सन्दर्भ है और १२ जनवरी २०१३ को इस महोत्सव का प्रारंभ हो चुका है। स्वाभाविक रूप से यह महोत्सव विवेकानंद के संदेशों का अनुसरण एवं उनके दर्शनों का आत्मविचिंतन करने का अपूर्व अवसर है। उन्होंने अनेक दिव्य उपदेश,

स्वामी विवेकानन्द की विश्व दृष्टि एवं भारतीय समाज का उत्थान

डॉ.श्रीचित्रा वी.एस.

गहन श्रद्दा एवं दार्शनिक अर्न्तदृष्टि के प्रभाव से सारे संसार को अपनी ओर आकर्षित करनेवाला अपूर्व व्यक्ति है स्वामि विवेकानन्द. उनका जन्म कलकत्ता के एक मध्यवर्ती परिवार से १९६३ में हुआ। स्कूल अध्ययन के दिनों मे ही वे राजा राम मोहन रोय द्वारा स्थापित ब्रह्मसमाज के आधुनिक विचारों की ओर आकृष्ट हुए। फिर उनकी भेंट श्री रामकृष्ण परमहंस के साथ हुई। वहाँ से श्री विवेकानन्द के जीवन को एक नई सार्थकता मिली। नये संदेश का प्रचार करना तथा जनता में नयी चेतना जगाना के उद्देश्य से रामकृष्ण परमहंस के मृत्यूपरान्त स्वामि विवेकानन्द ने सन् १८८६ में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। एक परिष्कृत धर्म के झण्डे के नीचे रामकृष्ण के शिष्यों ने सामाजिक सेवा के क्षेत्र में बहुत अधिक परिवर्तन लाया।

विवेकानन्द अत्यंत प्रतिभा संपन्न बुद्धिजीवि थे। उन्होंने आधुनिक विज्ञान और विश्व इतिहास तथा दर्शन में असाधारण क्षमता प्राप्त कर ली थी। रामकालीन विचार्धारा और नई पंजीवादी अवधारणाओं की ओर उनका हृदय आकर्षित हुआ। फ्रांसीसी क्रांती तथा कोलंबिया के स्वतंत्रता संग्राम को उन्होंने स्वागत किया। अपने विश्वदृष्टिकोण के कारण विवेकानंद यह मानते थे कि भारत की प्रगति समूचे विश्व की प्रगति के साथ संबन्ध है। उन्होंने यह व्यक्त किया कि - 'समूचा संसार जब तक एक साथ आगे ख्रतम नहीं बढाता, तब तक कोई प्रगति संभव नहीं है। जैसे-जैसे दिन बीतते है यह स्पष्ट होता जाता है कि संकीर्ण राष्ट्रीय दृष्टिकोण से कीसी भी समस्या का समाधान संभव नहीं है।'

रामकृष्ण परमहंस की मृत्यू के बाद विवेकानन्द ने पांच वर्ष तक समूचे देश का भ्रमण किया और जनता से प्राप्त भिक्षा पर गुजारा किया। इस अनुभव से उनको भारत में व्याप्त आश्चर्यचकित करनेवाली विवधता के पीछे अंतर्निहित एकता का ज्ञन मिला। उन्होंने भारतीय जनता की शक्ति और उसकी कमजोरियों को समझा उन्होंने देखा कि सामान्य जनगण का विशाल बहुसंख्यक भाग अब भी अज्ञान और अंधविश्वास के गर्त में पडा है। इन लोगों के व्यक्तित्व को ब्रिटीश उपनिवेशवादी और भारतीय समाज के उच्च वर्गों के लोग अपने पैरों तले रौंद रहे थे। उन्हें अनुभव हुआ कि कंगाली की समस्या को सुलझाये बिना, जनता को नैतिक और वौद्धिक रूप से सुदृढ बनाये बिना, और उन्हें ख्रुद उनके पैरों पर ख्रडा किये बिना, कोई भी धर्म कारगार नहीं हो सकता। एक मिक्षुक के रूप में अपने भ्रमण के दौरान ही विवेकानंद इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि गरीबों के रहन-सहन के स्तर को उन्नत

समाज सुधार और स्वामी विवेकानंद....

संदेश, प्रेरणा एवं आह्वान हमें दिये हैं। उन सबको व्यवहार में लाना हमारा कर्तव्य है। यह महोत्सव ज़रूर इसका अच्छी शुरुआत होगा। इसलिए उस महान पुरुष के आदर्शों एवं आदेशों को स्वीकार करके भारत की प्रगति केलिए हम एक साथ कदम बढ़ाएँगे।

संदर्भ:

१. स्वामी विवेकानंदन, विवेकानंदकेन्द्र, कन्याकुमारी, पृ.सं. ३५
२. युवाओं से - स्वामी विवेकानंद, पृ.सं. ५०
३. युवाओं से - स्वामी विवेकानंद, पृ.सं. ५०
४. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य, पृ.सं. १०२
५. वही
६. १८ वीं - १९ वीं सदी में केरल में विद्यमान एक अनाचार था। इसके अनुसार उच्च जाति के लोगों के पास या उसके घर, मंदिर आदि स्थानों में जाने से नीचे जाती के लोगों को मना किया था। उनके कुएँ, तालाब आदि का उपयोग से भी मना किया था।
७. केसरी, केरल के देशीय पत्रिका, ६ जनवरी २०१३
८. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य, पृ.सं. १०६
९. मलयालमनोरमा, ११ जनवरी २०१३
१०. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य, पृ.सं. १०८
११. लेटर्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृ.सं. ८३
१२. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य, पृ.सं. १०९

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

१. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य– डॉ. रामबीरसिंह शर्मा, साईन्टिफिक पठिलशर्स जोधपुर।
२. योद्धा सन्यासी विवेकानन्द –हंसराज रहबर, राजपाल एण्ड-सन्ज़ मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली -६
३. इतिहास के झरोख्रे से -दीपचन्द्र निर्मोही, बाल-साहित्य प्रकाशन कमल नगर, दिल्ली।
४. विवेकानंद –रोमां रोलां, लोक भारती प्रकाशन महात्मा गाँधी मार्ग इलाहाबाद।
५. कागद लेख्री मैं ने देख्री –देवेन्द्र नाथ ख्ररे, सुलभ प्रकाशन १७ अशोक मार्ग लख्रनउ।
६. हमारे युग की ऐतिहासिक झांकियाँ – स्वतन्त्रता सेनानी, शुक्ला प्रकाशन मथुरा।

पत्रिका

१. केसरी, केरल के देशीय पत्रिका ०६ जनवरी २०१३।
२. मलयाल मनोरमा, दैनिकी, ११ जनवरी २०१३।

शोध छात्रा, सरकारी महिला महाविद्यालय, तिरुवनन्तपुरम।

करना, उनके मिषन का सर्वप्रमुख कर्तव्य होना चाहिए। उनके अनुसार आम जनता का आध्यात्मिक उत्थान करने केलिए देश का आर्थिक और राजनीतिक पुनर्निर्माण करना भी अनिवार्य है।

इसके साथ ही उन्होंने जनता की कमजोरियों और दुर्बलताओं पर भी तीव्र निंदा की। उन्होंने अस्पृश्यता जाति-श्रेष्टता की भावना तथा पंडे पुरोहितों और धार्मिक आतंक की कटु समीक्षा की। उन्होंने घोषणा की, मैं आप लोगों को अंधविश्वासी मूर्खों के बजाये पक्के अनीश्वरवादियों के रूप में देखना ज्यादा पसंद करूँगा। उनके मत में जब अंधविश्वास जकड लेता है, तब तो मस्तिष्क ही मृतप्राय हो जाता है, बुद्धि जम जाती है और मनुष्य पतन के दलदल में अधिकाधिक गहरे डूबता जाता है। वह चाहते थे कि भारत की जनता में साहस और आत्मविश्वास पैदा हो। "मज़बूत बनो! कायर या लिबलिबे न बने रहो! साहसी बनो! कायर की जरूरत नहीं" - भारत के नौजवानों को यही उनका आह्वान था। आज हमारे देश को जिस चीज़ की आवश्यकता है वह है दृढ इच्छा शक्ति, इस्पात जैसी मांस्पेशिया और मज़बूत स्नायू - जिन्हें कोई भी ताकत या रोक था झुका न सके, जो यदि ज़रूरी हो तो सागर की अतल गहराइयों में भी अपने लक्ष्य की पूर्ती केलिए मौत का मुकाबला कराने को तैयार रहे। विवेकानन्द के इन उद्बोधनों ने तत्कालीन भारत के राष्ट्रीय जीवन की मूल धारा में नयी शक्ति का संचार किया और देशभक्ति को एक उन्नत आध्यात्मिक स्तर पर उडाया।

विवेकानन्द के मत में स्वतंत्रता उन्नति की पहली शर्त है, किन्दु उनकेलिए स्वतंत्रता सामाजिक स्वार्थ पूर्ती अथवा आर्थिक शोषण के मार्ग से बाधाओं का हट जाना नहीं था। हम अपने शरीर, अपनी बुद्धि और अपनी संपत्ती को बिकना दूसरों को कोई क्षति पहुँचाये जिस तरह चाहें अपनी इच्छानुसार उपयोग कर सकें और समाज के सभी सदस्यों को संपत्ति, शिक्षा अथवा ज्ञान प्राप्त करने को समान अवसर प्राप्त करना स्वतंत्रता है, इस तरह के प्रगतिशील विचारों का प्रतिपादन करते हुए उन्होंने रहस्यवाद जैसे पलायनवादी सिद्धांतों की खिल्ली उडाई।

विवेकानन्द केलिए धर्म अनुर्वर अथवा अमूर्त नहीं था। उनकेलिए यह एक व्यवहार की चीज था। उन्होंने इस धर्म पर ही चलने का आह्वान जनता को दिया जो बहुतों की भलाई करनेवाली हो, बहुतों की खुशहाली करनेवाली हो। जनता की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दशा कि उत्थान करनेवाली धर्म के साथ चलने का आह्वान विवेकानन्द ने जनता को दी। विवेकानन्द ने कहा - "व्यक्ति की स्वतंत्रता समुदाय की स्वतंत्रता में निहीत है, समुदाय से आलग व्यक्ति के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यह एक शाश्वत सत्य है और यह वह आधार शिला है जिस पर इस ब्रह्मांड की रचना की गयी है"। उनके मत में मनुष्यों का निर्माण करनेवाले, उन्हें सबल बनानेवाले धर्म पर विश्वास करना चाहिए, जो चीज हमें कमजोर बनाती है उसे विष समझकर अस्वीकार करना अनिवार्य है।

विवेकानन्द के अनुसार यह ब्रह्मांड असृष्ट, शाश्वत और स्वप्रकाशित है, उन्होंने किसी वैयक्तिक ईश्वर द्वारा इस संसार के सृजन के विचार का मजाक उडाया, उनके मत में यह ब्रह्मांड किसी ब्रह्माडेतर ईश्वर का बनाया हुआ नहीं है। यह अपनी सृष्टि स्वयं करता है। स्वयं विघटित होता है और स्वतं अभिव्यक्ति होता है। एक अपरिमित सत्ता है, ब्रह्म।

विवेकानन्द अपने धार्मिक विचारों के मूल आधार केलिए वेदों और उपनिषदों के साथ आधुनिक सभ्यता के मूल्यों को भी स्वीकार किया। उन्होंने सदैव अपने धार्मिक विचारों का सामंजस्य विज्ञान से की। विवेकानन्द स्वयं को वैदांती करते थे, उपनिषत के यह सिद्धांत - मैं वह हूँ और तू वह है उनकेलिए प्रेरणा के स्रोत थे। अद्वैत वेदांत केलिए उनके हृदय में विशेष आकर्षण था, वह यहाँ तक मानते थे कि अद्वैत ही सर्वाधिक वैज्ञानिक धर्म है, किन्तू उनके हाथों में पहुँचने पर शंकराचार्य के अद्वैत में आमूल परिवर्तन हो गया। शंकराचार्य का अद्वैत अपरिवर्तन शील, शाश्वत और अमूर्त था। किन्तु, विवेकानन्द केलिए अद्वैत निरंतर गतिशील और स्क्रिय था, विवेकानन्द ने भारतीय दर्षन और चिंतन की विविध प्रवर्तियों को समन्वय करने का प्रयत्न किया। वे समस्त संसार को अपनी दृष्टि परिधि में लेते थे, तथा किसी को अस्वीकार नहीं किया, दूसरों के मतों के प्रति उनमें भय अथवा असहिष्णुता नहीं थी। विवेकानन्द ने निसंदेह भारतीय धार्मिक विचारों और दार्शनों के पुराने और नये श्रोतों को संयुक्त कर एक वेगपूर्ण धारा का रूप देने का भगीरथ प्रयत्न किया। एक ऐसी धारा का जो अतीत की गलीज को और वर्तमान की असफलाताओं को बहाकर एक ओर फेंक दे। उनका वेदांत मानवता को ब्रह्म की अभिव्यक्ति के रूप में देखते का आह्वान था।

१८९३ में धर्मी की विश्व कोंग्रस में भाग लेने केलिए भारतीय प्रधिनिथी की हैसियत से वह संयुक्त राज्य अमरिका गये। अमरिका में आधुनिकता और गतिशीलता को देखकर वह बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने स्वतंत्रता की जन्मभूमि के रूप में उसका अभिनंदन किया। उन्होंने कहा कि अमरिका की भाँतिक सभ्यता और भारत की आध्यात्मिक सभ्यता दोनों को सम्मिश्रित किया जाना चाहिए। लेकिन साम्राज्यवादी देशों की लोलुपता और तृष्णा से विवेकानन्द के हृदय को बहुत दुख पहुँचा था। उन्होंने सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन का आवाहन किया, क्योंकि समाज के सभी सदस्यों को संपत्ति शिक्षा अथवा ज्ञान प्राप्त करने केलिए समान अवसर मिलना चाहिए और उन्होंने घोषणा की कि वे सामाजिक नियम, जो इस स्वतंत्रता के विकास में आडे आते हैं, हानिकार है और उन्हें शीघ्रशीघ्र ख्रतम करने केलिए कदम उठाया जाना चाहिए, उन संस्थाओं को प्रोत्साहन देना चाहिए, जिनसे मनुष्य स्वतंत्रता के मार्ग पर आगे बढते हैं।

विवेकानन्द का निधन १९०२ में हुआ। उस समय उनकी आयु उनतालीस वर्ष की थी। उनके जीवन काल में मज्दूर वर्ग का न तो कोई आंदोलन था और न संगठन, क्योंकि इस वर्ग का उदय अभी शुरू ही हुआ था तो भी एक महान क्रांतीकारि की ओजस्विता से उन्होंने अपनी अंतिम रचनाओं में मज्दूर वर्ग के प्रति अद्भुत श्रद्धा और आस्था व्यक्त की। उन्होंने अपनी मातृभूमि केलिए एक महान भविष्य की भविष्यवाणी की - केवल स्वतंत्रता में ही नहीं, बल्कि समाजबाद के अंतर्गत थी। इस अद्भुत व्यक्ति ने वास्तव में रूस की समाजवादी क्रांति से भी दो दशक पहले, भारत में समाजबाद का नारा उठाया था। कोई आश्चर्य नहीं कि हमारे देश की नई पीढी केलिए विवेकानन्द प्रेरणा का एक महान श्रोत बन गये।

असिस्टन्ट प्रोफेसर इन हिन्दी, एस.एन.कालेज, वर्कला

स्वामी विवेकानन्द के दर्शन

लक्ष्मी.एस.एस

विश्व का प्रत्येक साधक व महापुरुष अपनी साधना द्वारा प्राप्त महान् सत्य के प्रचार के लिए एक योग्य शिष्य की खोज में रहा है। संसार तक अपने दर्शन के प्रकाश को पहूँचाने के लिए हर सिद्ध महात्मा न किसी असाधारण शिष्य का सहारा लिया। जिसप्रकार श्रीकृष्ण ने अर्जुन को, महात्मा बुद्ध ने आनदं को, उसी प्रकार स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने अपनी महान साधनों व तपस्या से प्राप्त गहन अनुभूतियों को संसार के सामने प्रकट करने का कार्य नरेन्द्र को सौंपा था।

नरेन्द्र नामक वह युवक बाद में 'विवेकानन्द' के नाम से जाने लगे। पहले नरेन्द्र का मन भी बिना स्पष्ट प्रमाण के किसी बात पर विश्वास करने को तैयार न था, तो भी सत्य को जानने की एक तीव्र इच्छा उसके दिल में बेचैनी - सी पैदा कर रही थी। स्वयं रामकृष्णजी ने नरेन्द्र के प्रथम आगमन के सम्बन्ध में कहा था - 'नरेन्द्र कमरे में पश्चिमी दरवाज़े से आया। ऐसा लगा कि उसे अपने शरीर व कपड़ों की कोई परवाह नहीं है। बाहरी दुनिया के प्रति भी उसका विशेष ध्यान नहीं। कलकत्ता के भौतिकवादी वातावरण में से आते हुए इस आध्यात्मिक युवक को देख मुझे बहुत आश्चर्य हुआ।'(१)

नरेन्द्र स्वभाव से संन्यासी था। उनको विश्वास था कि उनका जन्म अन्य लोगों की तरह धन कमाने केलिए व परिवार को पालने के लिए नहीं हुआ है। गुरु रामकृष्ण जी के उपदेशानुसार नरेन्द्र को भारत जानने और भ्रमण करने की इच्छा हुई। गुरु के इच्छानुसार ही उसने मानवता व भारत माता की सेवा का व्रत ले लिया था। ऐसे एक भ्रमण में नरेन्द्र स्वामी विविदिशानंद का नाम स्वीकार किया। एक बार श्री जगमोहन लाल नामक व्यक्ति ने स्वामी जी से यह प्रश्न - "स्वामीजी। आप एक हिंदू सन्यासी है, पर आप एक मुसलमान के साथ आ रहे हैं?" इसपर स्वामी ने बताया कि - मैं एक सन्यासी हूँ पर सब सामाजीक बन्धनों से ऊपर हूँ। मैं तो एक भंगी के साथ भी खा सकता हूँ। मुझे भगवान व शास्त्रों से कोई डर नहीं, क्योंकि वे इसकी आज्ञा देते हैं। पर आप लोगों से डर हैं, जो न तो भगवान को जानते हैं, न शास्त्रों को। मुझे हर वस्तु में हर व्यक्ति में वही ब्रह्म नज़र आते हैं।'(२)

मूर्तिपूजा के सम्बन्ध में एक महाराजा ने स्वामी जी से एक प्रश्न किया - 'स्वामी जी। मुझे मूर्तिपूजा पर कोई विश्वास नहीं है।

एकबार स्वामी जी ने कमरे में लटके महाराजा के चित्र को उतखाकर समीप खड़े दीवान से कहा कि 'इस चित्र पर थूको'। दीवान परेशान हो गए। स्वामी जी फिर गंभीर होकर बोले 'अरे यह कागज़ का टुकडा ही तो है। इसमें महाराज स्वयं तो नहीं बैठे हैं। स्वामीजी महाराजा की ओर देखकर बोले - आप इस चित्र में स्वयं न थे, पर आपके चित्र में आपके नौकर आपको देखते हैं। इस पर थूकने से उन्हें लगता था कि वे महाराजा का ही अपमान करेंगे। ठीक यह स्थिति उन भक्तों की है जो भगवान की पत्थर की मूर्ति की पूजा नहीं करते, अपितु उस में भगवान को देखकर भगवान की ही पूजा करते हैं।'(३)

स्थान - स्थान पर घूमते हुए स्वामी जी को एक बात सबसे अधिक आश्चर्यचकित करती थी कि इतने बडे देश में बाहर के सैकड़ों भेद - भाव रहते हुए भी भारत के मूल में सब जगह एकता का भाव निहित है। स्वामी जी ने सब जगह सब प्रदेशों व संप्रदायों में बाहर की अनेकता में एक राष्ट्रीय व सांस्कृतिक एकता के दर्शन किए।

अपनी लम्बी भारत - यात्रा में स्वामी जी जहाँ राजाओं व विद्वानों से वार्तालाप किया वहाँ साधारण समाज की स्थिति भी अपनी आँखों से देखी। गुलामी की जंजीरों में कराहते हुए अपने समाज को व गरीबी में सिसकते अपने देशबंधुओं को देखा। उन्होंने एक ओर आकाश को छूनेवाले महलों में मौज़ उड़ाते धनिकों को देखा और दूसरी और फुटपाथों पर दाने - दाने के लिये तरसते - मरते भारतमाता के लालों को देखा। धर्म के ढोंग देखकर उनका हृदय चीत्कार कर उठा।

एक बार खेतड़ी के महाराज के निमंत्रण पर स्वामी जी खेतडी गए। खेतड़ी के महाराजा को स्वामीजी के अमेरिका जाने का पता चल गया था। स्वामीजी की विदाई में एक विशेष समारोह हुआ। इस समारोह में राजा के कहने पर स्वामीजी ने "विवेकानन्द" नाम स्वीकार किया।

११ सितम्बर, १८९३ में शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में विवेकानन्द को भारत के हिंदू धर्म के प्रतिनिधि के रुप में भाग लेने का अवसर मिला। वहाँ स्वामी जी ने अपना संक्षिप्त भाषण आरंभ करते हुए कहा "विभिन्न नदियाँ, विभिन्न स्थानों से निकलकर जिसप्रकार एक सिंधु में विलीन हो जाती हैं, उसीप्रकार विश्व के सभी धर्म विभिन्न मार्ग रखते हुए भी एक ही सत्य प्रभु की ओर ले जाते है। कोई किसी भी मार्ग (धर्म) से क्यों न जाए, यदि वह सच्चे दिल से प्रभु की कामना करता है तो प्रभु उसको अवश्य प्राप्त होता है।"(४)

स्वामीजी ने हिंदुत्व पर अपना प्रसिद्ध व्याख्यान देते हुए धर्म सभा में घोषणा की - "मेरा वेदान्त पाप की भाषा नहीं जानता। हिंदू आपमें से किसी को भी पापी नहीं समझते। आप तो उस परम पवित्र आनंद स्वरुप के पुत्र है। वेदान्त के अनुसार किसी को पापी कहना सबसे बडा पाप है....वेदान्त के अनुसार किसी ईसाई को हिंदू होने या किसी बौद्ध को ईसाई होने की कोई आवश्यकता नहीं है। अपना - अपने मार्ग से सब उस प्रभु तक पहूँचें यहीं वेदान्त का संदेश है।"(५)

स्वामीजी के अमेरिका में काफी प्रशंसक व शिष्य बन चुके थे। हार्वर्ड यूनिवार्सिटी के छात्रों के सामने स्वामीजी का भारतीय दर्शनशासत्र पर एक प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। सभ्यता के संम्बन्ध में वेदान्त का क्या विचार है - इस प्रश्न का उत्तर देते हुए स्वामीजी ने कहा - "वेदान्त के अनुसार मनुष्य के भीतर आध्यात्मिकता के प्रकृतीकरण

"स्वामी विवेकानंद के दार्शनिक विचार"

राखी एस.आर

भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर पहचान दिलानेवाले महापुरुष स्वामी विवेकानंद जी का जन्म १२ जनवरी १८६३ को हुआ। पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास रखनेवाले पिता विश्वानाथ दत्त ने अपने पुत्र को अंग्रेज़ी शिक्षा देकर पाश्चात्य सभ्यता में रंगाना चाहते थे। किंतु नियती ने तो कुछ खास प्रयोजन हेतु बालक को अवतरित किया था। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि भारतीय संस्कृति को विश्वस्तर पर पहचान दिलाने का श्रेय अगर किसी को जाता है तो वे हैं स्वामी विवेकानंद।

स्वामी विवेकानंद के चरित्र में जो भी महान है, वह उनकी सुरक्षित एवं विचारशील माता की शिक्षा का ही परिणाम है। बचपन से ही परमात्मा को पाने की चाह थी। डेकार्ट के अहंवाद, डार्विन के विकासवाद, स्पेंसर के अद्वैतवाद को सुनकर सत्य को पाने केलिए व्याकुल हो गये। अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु ब्रहमसमाज में गये, किंतु वहाँ उनका चित्त शान्त नहीं हुआ। रामकृष्ण परमहंस की तारीफ़ सुनकर, उनसे तर्क के उद्देश्य से उनके पास गये। किंतु उनके विचारों से प्रभावित होकर उन्हें गुरु मान लिया। परमहंस की कृपा से उन्हें आत्म-साक्षात्कार हुआ। स्वामी विवेकानंद परमहंस के प्रिय शिष्यों में से सर्वोपरि थे।

पुण्यभूमि भारत को पतनावस्था से ऊपर उठाने केलिए जिन महापुरुषों ने अथक प्रयास किया उनमें स्वामी विवेकानंद का नाम चिरस्मरणीय रहेगा। इस महापुरुष ने संसार के देशों को बताया कि राजनीतिक रूप में परतंत्र होने पर भी भारतीय संस्कृति ही विश्व के पथप्रदर्शन की क्षमता रखती है। उनके दिव्य संदेश चिर नवीन रहेंगे। उन्होंने धर्म की नवीन और विज्ञानसम्मत व्याख्या कर भारत की सुप्त धमनियों में नवीन रक्त का संचार किया। उन्होंने बाह्य कर्मकाण्ड तथा मतमतान्तरों से आछन्न धर्म को उज्ज्वल बनाया। आध्यात्मिकता के नाम पर फैली हुई अकर्मण्यता की प्रवृत्ति पर तीव्र प्रहार किया। उनके संदेश में भारतीय संस्कृति सम्मत ज्ञान और कर्म का तथा आध्यात्मिक जाग्रति एवं भौतिक विचार का अद्‌भुत समन्वय है।

स्वामी विवेकानंद का सुविचार है – "मानव देह ही सर्वश्रेष्ठ देह है एवं मनुष्य ही सर्वेच्च प्राणी है, क्योंकि इस मानव - देह तथा इस जन्म में ही हम इस सापेक्षिक जगत् से संपूर्णतया बाहर हो सकते हैं -

स्वामी विवेकानन्द के दर्शन....

का नाम ही सभ्यता है और सबसे अधिक सभ्य देश वह है जहाँ पर उच्चतम आदर्श व्यवहार में लाए गए हों।

इंग्लैड़ से कुमारी मुलर व श्री स्टर्डी के निमंत्रण पाकर स्वामी जी इंग्लैड़ पहूँचे। लदंन में स्वामीजी को अपनी प्रसिद्ध शिष्या कुमारी मार्ग्रेट नोबेल मिली, जो बाद में उनकी मानसपुत्री भर्गिन निवेदिता के नाम से भारत में विख्यात हुई। लंदन में आयोजित एक विदाई कार्यक्रम में स्वामी जी ने कहा - "मेरा यह शरीर कभी भी नष्ट हो सकता है। मैं कपडे की तरह इसे फेंक भी सकता हूँ। पर मैं मानवता की सेवा का महान कार्य तब तक करता जाऊँगा जब तक सारा विश्व उस परम सत्य को नहीं समझ लेता।"(६)

स्मावी विवेकानन्द ने अपने शिष्यों को उपदेश दिया कि - व्याक्तगत मुक्ति का विचार छोड़ो और मानवता की सेवा का व्रत रखो। हिंदू धर्म व बौद्‌ध धर्म के संबन्ध में एक बार स्वामीजी कहने लगे - बौद्ध धर्म व हिंदू धर्म का परस्पर सबसे बडा अतर इस बात में है कि बौद्‌ध धर्म का आदेश है इस बात का अनुभव करो कि यह सब माया है और हिंदू धर्म का आदेश है इस बात का अनुभव करो कि इस सारी माया के पीछे एक महान सत्य छिपा है। हिन्दू धर्म में सभी विश्वास धर्म, सम्प्रदाय, यहाँ तक कि बौद्ध धर्म का भी समावेश है। हिंदू धर्म सब धर्मों की जननी है। इसलिए हिंदू धर्म ने बुद्‌ध को अपने प्रमुख अवतार के रुप में स्वीकार किया।

स्वामीजी दमे रोग से पीडित होते हुए भी अपने कार्यों से कभी भी विश्राम नहीं लेते थे। विश्व - विजेता स्वामी इतने महान् करने के बाद केवल ३९ वर्ष ६ मास की छोटी आयु में ही स्वर्गवासी हो गये।

भारतमाता के एक योग्यतम पुत्र, एक युवा संन्यासी विवेकानन्द केवल तीस वर्ष की आयु में विश्व भर वेदान्त की दुंदुभि बजाने में सफल हुए। उन्होंने विश्व को एक रास्ता दिखा दिया था। उन्होंने भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन की भूमि तैयार की, भारत के वैभव का चित्र सारे विश्व के सामने रखकर उन्होंने यह प्रेरणा दी कि भारत किसीका दास बनने के लिए नहीं है। विवेकानन्द जी ने देशभक्ति की लहर फैलाकर बाद के स्वतंत्रता आन्दोलनों का मार्ग प्रशस्त किया।

सहायक पुस्तकें

१. स्वामी विवेकाननंद जीवन और दर्शन - मनोज कुमार सिंह
२. स्वामी विवेकाननंद जीवन और विचार - ए.एम. चाँद

ग्रंथ सूची:

१. पृ १९, स्वामी विवेकानंद जीवन और दर्शन
२. पृ ३९, स्वामी विवेकाननंद : जीवन और दर्शन
३. पृ ३८, स्वामी विवेकाननंद : जीवन और दर्शन
४. पृ ५२, स्वामी विवेकाननंद जीवन और दर्शन
५. पृ ५२, स्वामी विवेकाननंद जीवन और दर्शन
६. पृ ६५, स्वामी विवेकाननंद जीवन और दर्शन

गवर्णमेंट हायर शेकेंटरी स्कूल पुतक्कुलं, कोल्लम जिला

- निश्चय ही मुक्ति की अवस्था प्राप्त कर सकते हैं और यह मुक्ति ही हमारा चरम लक्ष्य है।"[१]

स्वामी विवेकानंद जी ने प्रेम एवं शोषित समाज के प्रति अपनी संवेदना का परिचय दे दिया था। उनका स्वराज्य-प्रेम कोई नहीं था और भारत के प्रति उनकी सहानुभूति नई सहानुभूति नहीं थी। भारत को मातृभूमि समझकर उन्होंने इसकी जीवन पर्यंत सेवा की।

स्वामी विवेकानंद मानवतावादी थे। अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम उनकी रस-नस में भरा था। वे जाति-पांति, छुआछूत, धनी-निर्धन और हिंदु-मुसलमान के भेद से ऊपर उठ गये थे। स्वामीजी की इच्छा थी कि विदेशों में जाकर भारत के गौरव को फिर से स्थापित करें। महान भारत की महान् संस्कृति का विदेशों में प्रचार करें।

स्वामी विवेकानंद का विचार है कि गुलामी की जंजीर को तोड़कर फेंकने के लिए ज़रूरी है छुआछूत और पाखण्डों की बीमारी को दूर करना। जो लोग जाति के नाम पर अपने ही भाइयों से नफरत करें उनका उद्धार कभी नहीं हो सकता। ऐसी नफरत पैदा करनेवाला पाखण्डी पाण्डो - पूजारियों को समाप्त करना होगा। तभी प्रगति के रास्ते खुल सकते हैं। उनका विचार है "धर्म यदि सच्चा धर्म है तो उसे कर्म-प्रेरक होना चाहिए।"[२] मानते हैं कि "सर्वोत्तम धर्म वह है जो मनुष्य मात्र में, विशेषतया दरिद्र मानव में शिव का उद्भव करे।"[३]

भारत के लोगों को शक्तिशाली बनाना होगा। दुनिया में कमज़ोर लोगों को कोई स्थान नहीं देता। गुलामी और अत्याचार सहना दोनों ही पाप हैं। इससे तभी छुटकारा हो सकता है जब हम सब भारतवासी मिलकर रहें और उन लोगों को समाप्त कर दें जो भेद-भाव को जन्म देते हैं। विश्वास, सहानुभूति और दृढ़ इच्छा-शक्ति से ही देश की दरिद्रता दूर हो सकती है। उनका विचार है – "शक्तिमान। उठो तथा सामर्थ्यशाली बनो, कर्म, निरन्तर कर्म; संघर्ष, निरन्तर संघर्ष! पवित्र और निस्वार्थ बनने की कोशिश करो... सारा धर्म इसी में है।"[४]

जब सन् १८९३ में 'शिकागो विश्व धर्म परिषद' में भारत के प्रतिनिधि बनकर गये तब स्वामीजी की भव्य आकृति, दमकते मुखमण्डल और ज्ञान की गरिमा ने – अमेरिकावासियों पर भारत की थाक जमा दी। सम्मेलन में जब उन्होंने अपना वक्तव्य आरंभ करने से पहले उपस्थित श्रोताओं को 'बहनो और भाईयो' कहकर संबोधित किया तो उनकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। 'भाईयो और बहनो' कहनेवाला यह पहला व्यक्ति जीवन में उन्होंने देखा था। स्वामीजी ने अपना वक्तव्य आरंभ किया तो श्रोताओं पर जैसे जादू हो गया हो। उस समय हॉल में अपूर्व शान्ति थी। भारत का यह महान सन्यासी गेरुए वस्त्र धारण किये अपने देश के दर्शन को उडेल रहा था। उन्होंने "वसुधैव कुटुम्बकम्" की व्याख्या लोगों के सामने रखी तो श्रोता गद्गद् हो उठे। उन्होंने कहा कि भारत पूरे विश्व को परिवार मानता है। दुनिया में भाईचारा बढ़ाने केलिए सब धर्मों की ध्वजाओं पर लिख देना चाहिए कि हम सहयोग चाहते हैं।

स्वामी विवेकानंद का आदर्श था, सहिष्णुता और विश्वधर्म। उनका विचार है कि भारत के महान धर्म, चिंतन और दर्शन को यदि अपनी खोयी हुई श्रेष्ठता और गतिशीलता प्राप्त करनी है और उसे पश्चिम के आवरण को भेद कर उसमें नया बीज बोना है तो हमें तत्काल उनका आद्यंत पुनसंगठन करना होगा। इसीलिए भारतीय तत्वचिंतन की परस्पर विरोधी दिखनेवाली मान्यताएँ (अद्वैतवाद, द्वैतवाद और द्वैताद्वैतवाद) जिनका उपनिषदों में असामंजस्य मिलता है, समन्वित करके उनके और पाश्चात्य तत्वचिंतन के मध्य एक सेतु बाँधना ज़रुरी था और उनका साधन था हिमालय के प्राचीनतम दर्शन की सृष्टियों एवं आधुनिक विज्ञान के विकृत सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन। स्वामीजी मानते थे कि हमें हिंदू चिंतन को यूरोपीय भाषा में अभिव्यक्त करना है। नीरस दर्शन, जटिल पुराण गाथा और अद्भुत मनस्तत्व में से अलग होकर ऐसा एक धर्म सामने लाना है जो सरल, सुगम और सुलभ। उनका विश्व-आदर्श निरन्तर गतिशील रहता था।

स्वामी विवेकानंद प्रतिभा सम्पन्न बुद्धिजीवी थे। उन्होंने अध्ययन करके आधुनिक विज्ञान एवं विश्व इतिहास और दर्शन के क्षेत्र में अभूतपूर्व दक्षता हासिल कर डाली थी। समकालीन विचारधाराओं, पूंजीवादी व्यवस्थाओं की ओर उनका ध्यान गया था। फ्रांसीसी क्रांति ने उनको प्रभावित किया था तो कोलम्बिया के स्वतंत्रता-संग्राम का उन्होंने आदर किया। इसप्रकार प्राचीन दर्शन के साथ-साथ समकालीन सत्यों का वे आदर करते थे। विवेकानंद का मानना था कि भारतीय प्रगति विश्व प्रगति के साथ ही है। उनकी दृष्टि विश्व को एक साथ लेकर चलनेवाली थी। उनका कहना था कि –"समूचा संसार जब तक एक साथ आगे कदम नहीं बढ़ाता, तब तक कोई प्रगति नहीं होती।"[५]

भारत दर्शन का प्रचार करने केलिए वे फ्रांस और इग्लैण्ड भी गये। चार वर्षों तक लगातार स्वामीजी ने विदेशों में प्रचार कार्य किया। वे दुर्बलता को पाप समझते थे।वे आदमी के द्वारा आदमी के शोषण के विरुद्ध थे। उनका कहना था कि दबे हुए लोग अपने ऊपर होनेवाले अत्याचारों को जब समझ लेंगे तो वे लोग उठ खड़े होंगे और अत्याचारियों को, शोषकों को अपनी फूंक से उड़ा देंगे। दूसरों की ठोंकरें खाते हुए जीने से मरना अच्छा है। गुलामी की ज़िदगी कोई ज़िदगी नहीं है। उनका सुविचार है – "ईर्ष्या तथा अहंकार को दूर कर दो.... संगठित होकर दूसरों के लिए कार्य करना सीखो।"[६]

स्वामीजी केवल संत ही नहीं देशभक्त, वक्ता, विचारक, लेखक एवं मानव प्रेमी भी थे। १ मई १८९७ को रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। यह दूसरों की सेवा और परोपकारों को कर्मयोग मानता है। ३९ वर्ष के संक्षिप्त जीवन-काल में स्वामीजी ने जो अद्भुत कार्य किये हैं, वे आनेवाली पीढ़ियों को मार्ग-दर्शन करते रहेंगे। ४ जूलाई १९०२ को स्वामीजी का अलौकिक शरीर परमात्मा में विलीन हो गया।

स्वामीजी का आदर्श है – "उठो, जागो और तब तक न रुको जब तक मंजिल प्राप्त न हो जाए।" यह अनेक युवाओं केलिए प्रेरक स्रोत है। स्वामी विवेकानंद जी का जन्मदिन 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रुप में मनाया जाता है। उनके विचार में सर्वोपरी विचार है – "मानव सेवा ही ईश्वर सेवा है।"

भारतीय नवोत्थान और स्वामी विवेकानन्द - डॉ० नरेन्द्र कोहली के परिप्रेक्ष्य में

रीजा.आर.एस.

भारत अब एक स्वतंत्र राष्ट्र है। कानून द्वारा संरक्षित स्वतंत्रता की सभी सुख्र सुविधाएँ आज हम महसूस करते हैं। लेकिन १९४७ अगस्त १५ के पहले भारत की स्थिति ऐसी नहीं थी। भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक स्तर पर अनेक हलचलें उत्पन्न हुईं। इस समय समाज में व्याप्त तत्कालीन विकृति, विद्रूपता, अंधविश्वास, जातिगत संघर्ष, चारित्रिक पतन जैसी विघटनशील स्थितियों में स्वामी विवेकानन्द ने आध्यात्मिकता का सहारा लेकर आगे बढ़ना चाहा।

भारत के आध्यात्मिक आदर्शों को विश्व भर में घोषित करने का सबसे प्रथम कार्य स्वामी विवेकानन्द ने ही किया। यही कारण से उनका नाम और यश भारत की सीमाओं को पार कर विश्व भर में फैल गया। पश्चिम के विचारकों को भारत के अतीत गौरव और उसके ऊँचे आध्यात्मिक आदर्शों का कोई ज्ञान नहीं था। स्वामी विवेकानन्द ने भारत के प्राचीन ऋषियों के ज्ञान और आध्यात्मिक आदर्शों को युगानुरुप संसार के सामने प्रस्तुत किया। भारत की गरिमा प्रकट करके स्वामी विवेकानन्द विश्व भर के मानव जातियों की आँखें खोल दीं। स्वामी विवेकानन्द जी के जीवन दर्शन से देश विदेश के सभी लोग प्रभावित हुए।

हिन्दी साहित्य जगत् में कालजयी कथाकार एवं मनीषी के नाम से विख्यात नरेन्द्र कोहली भी उनके जीवन दर्शन से प्रभावित एक प्रतिभाशाली सर्जक है। उन्होंने स्वामी विवेकानन्द के जीवन दर्शन को आधार बनाकर कई उपन्यास रचे, एक जीवनी भी। 'तोड़ो कारा तोड़ो' उनकी ख्याति प्राप्त रचना है, इसके छह भाग हैं - 'निर्माण' (१९९२), 'साधना' (१९९३), 'परिव्राजक' (२००३), 'निर्देश' (२००४), 'सन्देश' (२००८) और 'प्रसार' (२०११), 'न भूतो न भविष्यति' (२००४) ये औपन्यासिक जीवनियाँ हैं। इसके अलावा 'स्वामी विवेकानन्द' (२००४) नामक एक जीवनी भी कोहली ने लिख्री है। कोहली ने अपनी इन रचनाओं द्वारा यह व्यक्त किया है कि विवेकानन्द जैसे महान व्यक्तित्व का उदय न भूतकाल में हुआ है, न भविष्यत्काल में होने की संभावना है।

परिव्राजक के रूप में घूमते हुए स्वामी विवेकानन्द के सामने भारत की जटिल और गुरुतर समस्याएँ स्पष्ट हुई। भारत का उत्थान सदा धार्मिक और आध्यात्मिक मार्ग से ही हो सकता है। डॉ. नरेन्द्र कोहली ने स्वामी विवेकानन्द के शब्द 'साधना' उपन्यास में इस प्रकार व्यक्त किये हैं - "भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जिसके जीवन का आधार धर्म है। हमारा उत्थान हुआ था तो अध्यात्म के मार्ग से ही और हमारा पतन हुआ है तो अध्यात्म के त्याग के कारण ही। हम यदि अपना स्वार्थ त्याग सकें, अपने जीवन के आधार के रूप में अध्यात्म को स्वीकार कर सकें, तो हमारा चहुँमुख्री विकास होगा। ऐसे में मुझे लगने लगता है कि मेरा अध्यात्म अंततः मुझे देश भक्ति की ओर ले जाता है और मेरी देश भक्ति मुझे अध्यात्म की ओर प्रेरित करती है।"(१)

उस समय भारत का राजनीतिक वातावरण हिन्दू धर्म के अनुकूल नहीं था। अठारहवीं शताब्दी का काल विशाल मुगल साम्राज्य का अस्त और हिन्दू धर्म का पतन का था। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक पंजाब, अवध आदि राज्य अंग्रेज़ी राज्य में मिला दिये गये थे। हिन्दू-मुसलमान दोनों पराभूत हो गये। अंग्रेज़ी सत्ता के उदय के साथ ही ईसाई धर्म का प्रचार तथा प्रसार होने लगा। कुछ ईसाई धर्म प्रचारक हिन्दू धर्म के विचारों पर आघात करने लगे थे। वे हिन्दुओं को मूर्तिपूजा के कारण अन्धविश्वासी भी कहने लगे। इस पर डॉ.नरेन्द्र कोहली 'न भूतो न भविष्यति' उपन्यास में स्वामी विवेकानन्द का मत इस प्रकार व्यक्त करते हैं - "देखिए, इतना तो मूर्ति पूजक भी जानते हैं कि मूर्ति उनके आराध्य का प्रतीक है, वह स्वयं भगवान

"स्वामी विवेकानंद के दारर्शनिक विचार"....

संदर्भ:

१. हिन्दी साहित्य मार्गदर्शन (Blog, १५ नवंबर २०११)स्वामी विवेकानंद के वचन।
२. विवेकानंद : पृ.सं. १२३
३. वही
४. हिन्दी साहित्य मार्गदर्शन (Blog, १५ नवंबर २०११)स्वामी विवेकानंद के वचन।
५. सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य, पृ.सं. १०२
६. हिन्दी साहित्य मार्गदर्शन (एथ्दृढ़, १५ नवंबर २०११)स्वामी विवेकानंद के वचन।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

१. 'इतिहास के झरोख्रे से' दीपचन्द्र निर्मोही बाल साहित्य प्रकाशन, १९९०
२. 'सामाजिक चेतना और आधुनिक हिन्दी महाकाव्य' डॉ.रामबीरसिंह शर्मा साईन्टिफिक पब्लिशर्स इण्डिया, २००१
३. 'विवेकानंद' :मूल लेख्रक : रोमॉ रोलॉ अनुवादक : सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय। लोकभारती प्रकाशन, १९८९
४. Achhikhabar.com Posted on July ४, २०१२, अनिता शर्मा।
५. 'हिन्दी साहित्य मार्गदर्शन' (Blog) स्वामी विवेकानंद के वचन।

शोध छात्रा, सरकारी महिला महाविद्यालय,, तिरुवनन्तपुरम।

नहीं है। आप मुझे बताएं कि किस धर्म, संप्रदाय या उपासना पद्धति में प्रतीक नहीं है? किस देश का झंडा नहीं होता? कहाँ झंडे को सलामी नहीं दी जाती? मूर्ति झंडा नहीं है, प्रतीक है, जो एक निराकार अस्तित्व या भाव का प्रतिनिधित्व करता है। भक्त की साधना में बल हो तो वह उसी प्रतिमा में से भगवान को प्राप्त कर लेता है।"(२)

स्वामी विवेकानन्द जी का कहना है कि भारतीयों के पतन का मुख्य कारण उनका अपने बारे में अज्ञान है। कुप्रथा, अन्धविश्वास, रुढ़िवादिता और दरिद्रता के कारण हीन भावना से ग्रस्त भारतीय समाज विदेशी संस्कृति को अपनाने में गर्व कर रहा है। अंग्रेज़ी संस्कृति की बुराइयों से भारतीय संस्कृति ग्रस्त होती जा रही थी। इन बातों से स्वामी विवेकानन्द क्षुब्ध हुए। लेकिन वे ईसाई प्रचारकों से क्रुद्ध नहीं हुए। किन्तु उन भारतीयों के प्रति ही वे क्षुब्ध हुए जिन्होंने भारतीयता को न अपनाकर अंग्रेजियत को अपनाया। विवेकानन्द अपने गुरु श्रीरामकृष्ण परमहंस से धर्म का यह आदर्श पाया कि सभी धर्म सच्चे हैं। संसारवाले इस बात को नहीं समझते, इसलिए उनमें कलह होता है। किसी धर्म को तिरस्कार की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए क्योंकि सभी धर्म एक ही आदर्श का प्रतिपादन करते हैं। समाज की कुप्रथाओं को धर्म पर आरोपित करनेवालों पर डॉ.नरेन्द्र कोहली के उपन्यास 'निर्माण' में स्वामी विवेकानन्द जी का उत्तर है - "तुम समाज की कुप्रथाओं को धर्म पर आरोपित कर धर्म को कलंकित कर रहे हो। X X X अपने कृत्यों से तुम हमारे समाज के दोषों को हमारे धर्म के दोष बता रहे हो। अपने भिन्न दृष्टिकोण के कारण सत्य को देख नहीं रहे हो।"(३)

स्वामी विवेकानन्द जी व्यक्त करते हैं कि भारतीयों को आत्मज्ञान नहीं है। इसलिए वह मानसिक रूप से दास हो गए हैं। अपनी भाषा को वे हीनता की दष्टि से देखते हैं अतः वे मिश्रित भाषा का इस्तेमाल करते हैं। फलस्वरूप वे अपनी सभ्यता और संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं। स्वामी विवेकानन्द चाहते हैं कि भारतीयों के इन अवगुणों को दूर किया जाय, उन्हें हीन भावना से मुक्त किया जाय। वे भारतीयों को आह्वान करते हैं कि वे आत्मबल बढ़ाएँ और समस्त दुरबन्धनों को तोड़कर आगे बढ़ें। वे भारतीय संस्कृति का असली रूप जनता के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

अपने शिक्कागो भाषण में स्वामी जी ने वह कार्य किया जो तब तक किसी ने नहीं किया था। उन्होंने भारतीय संस्कृति से संबन्धित पाश्चात्यों की गलत धारणाओं को निर्मूल कर दिया। इस प्रकार धर्म चेतना की महत्ता को घोषित करके उन्होंने भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता प्रमाणित की।

जिन-जिन महती गुणों, निष्ठाओं और आदर्शों ने स्वामी विवेकानन्द जी को उक्त प्रकार की दृढ़ता प्रदान की वे निम्न लिखित है -

(१) भविष्यवाणी की सफलता

स्वामी विवेकानन्द के जन्म के अवसर पर बच्चे की जो कण्ठ ध्वनि सुनायी दी उसी के आधार पर बुआ ने भविष्यवाणी की थी, जो बाद में जाकर सफल भी सिद्ध हुई। भविष्यवाणी यों हैं - "स्वस्थ है, हृष्ट-पुष्ट। सुन्दर है। गोरा-चिट्टा। काला टीका लगाकर आई हूँ। उसका कंठ फूटा तो कैसा प्रबल चीत्कार किया उसने। नवजात शिशु की वाणी में इतनी शक्ति। मैं तो चमत्कृत रह गई विश्वनाथ। बड़ा होगा, तो जाने उसकी वाणी क्या करेगी।"(४) बुआ की इस भविष्यवाणी की सार्थकता देखकर सारे भारतीय गर्व से भर उठे।

(२) मातृभूमि के प्रति ममता

माता भुवनेश्वरी ने भगवान गणेश की कहानी सुनाकर बच्चे के दिल में भारत माता के प्रति ममता जगायी। तभी विवेकानन्द ने यह वादा किया - "मैं किसी को भी परेशान नहीं करूँगा माँ।"(५) उन्होंने आजन्म इस वादे का पालन भी किया। भारत माता की महत्ता को बढ़ाने में वे सतत लगे रहे।

स्वामी विवेकानन्द मातृभूमि को अपनी माता मानते हैं। 'माता' शब्द के स्थान पर कोई भी दूसरा शब्द न वैसा माधुर्य उत्पन्न कर पाता है, न वैसी ममता। भारत में माता ही स्त्री चरित्र का परम आदर्श है। मातृरूप में भगवान् की पूजा करने को हिन्दू लोग दक्षिणाचार या दक्षिण मार्ग कहते हैं। उस उपासना से हमारी आध्यात्मिक उन्नति और मुक्ति होती है। डॉ.नरेन्द्र कोहली अपने उपन्यास 'सन्देश' में स्वामी विवेकानन्द के विचारों पर प्रकाश डालते हैं - "उन्हीं जगदंबा का एक कण, एक बिन्दू है कृष्ण, एक कण बुद्ध और एक कण ईसा। हमारी पार्थिव जननी में उन जगत्माता का जो एक कण प्रकाशित रहता है, उसी की उपासना से महानता का लाभ होता है। यदि परम ज्ञान और आनन्द चाहते हो तो उस जगज्जननी की उपासना करो।"(६)

(३) सत्यवादी

स्वामी विवेकानन्द एक निडर सत्यवादी व्यक्ति थे। एक बार कक्षा में भूगोल के अध्यापक नरेन्द्र से संयुक्त राज्य अमरिका की राजधानी का नाम पूछते हैं तब नरेन्द्र वॉशिंगटन बताता है, लेकिन अध्यापक न्यूयोर्क बताते हैं। अध्यापक ने नरेन्द्र को डाँटा और मारा। नरेन्द्र अपने बात पर स्थिर रहा। जब अध्यापक किताब में सही जवाब वाशिंगटन देखते हैं तब अपनी गलती पहचानकर कहते हैं - "मुझे प्रसन्नता है कि तुम को अपनी बात पर इतना विश्वास था। इसलिए तुम सत्य पर अड़े रहे। तुम इतने दृढ़ न होते तो मुझे अपनी भूल का ज्ञान कभी न होता।"(७) नरेन्द्र यह घटना अपनी माँ को बताता है तो उन्हें अपने पुत्र पर बड़ा गर्व होता है।

(४) त्यागी

ठाकुर के कहने पर नरेन्द्र और उनकी युवा मंडली सन्यास की दीक्षा लेकर सन्यासी बन जाते हैं। नरेन्द्र अपने गुरु भाइयों के नेता बन जाता है। वह भगवान गौतम बुद्ध के त्याग, साधना, दया आदि से अत्यधिक प्रभावित होता है। अपने गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस जी के महत् वचनों से प्रेरित होकर सन्यास की साधना नरेन्द्र स्वीकार करता है। परमहंस की समाधि के बाद अपने गुरु भाइयों को मठों में बसाता है और देश भ्रमण केलिए निकल पड़ता है। तब के उसके शब्द हैं - "अपना मठ वह स्थान है, जहाँ हमारी साधना का अंकुर फुटा था। अब वह वृक्ष बढ़कर बहुत फैल गया है। सारा देश अपना मठ

है। हमारी कर्म भूमि सारा देश है। जब तक इसका भविष्य नहीं सुधर जाता, तब तक मठ में लौटने का कोई अर्थ नहीं है। हमें भारत माता का यही रूप नहीं रहने देना है। इसे सँवारना है, चाहे इसकेलिए हमें संसार के दूसरे छोर तक जाना पडे।"(८)

(५) गंभीर अध्येता

स्वामी विवेकानन्द धीर, गंभीर और मननशील व्यक्ति थे। वेदान्त और योग की पुस्तकें ही उनके अध्ययन का विषय थे। सन्यासी जीवन के नियमों का पालन करना ही उनकी चर्या थी। वे अपने सभी गुरु भाइयों में आदर्श माने गये हैं। अध्ययन पर डॉ. नरेन्द्र कोहली के 'निर्देश' उपन्यास में स्वामी विवेकानन्द का मत है - "सीखना मेरा धर्म है। मैं अपनी धर्म-पुस्तक को, आपकी पुस्तक के प्रकाश में अधिक अच्छी तरह पढ़ता हूँ। और जब मैं अपने धर्म प्रवक्ताओं से अपने ऋषियों की प्रकाशहीन भविष्यवाणियों से तुलना करता हूँ, तो उन में भी प्रकाश आ जाता है। सत्य सदैव विश्व व्यापी होता है।"(९)

(६) ईश्वरीय संगीत के उपासक

स्वामी विवेकानन्द भारतीय और पाश्चात्य संगीत और संगीतज्ञों के बारे में अच्छी जानकारी रखते थे। वे स्वयं संगीत सीख रहे थे। बेनी उस्ताद, अहमदखान, वजीरखान, जगन्नाथ मिश्र, काशी घोषाल आदि उनके गुरु थे। विवेकानन्द को गीत गाते समय अपूर्व आनन्द मिलता था। वे रवीन्द्रनाथ ठाकुर के रचे गीत तन्मयता से के साथ गाते थे। संगीत मन को शांति देता है। इसलिए वह एक उत्कृष्ट और उदात्त कला है। संगीत आत्मशुद्धि की एक साधना है। इसे अपनाने की प्रेरणा विवेकानन्द को माता से प्राप्त हुई। पुत्र को माता का उपदेश यह था - "तुम केवल ईश्वरीय संगीत सीखो।"(१०)

(७) वाणी की महत्ता

स्वामी विवेकानन्द एक अच्छे वक्ता थे। नरेन्द्र ने एक बार स्कूल में छात्रों के पुरस्कार वितरण समारोह में महाशय सुरेन्द्रनाथ बानर्जी बसु के सामने बड़ा प्रभावी भाषण दिया था। सुरेन्द्र बानर्जी ने बालक नरेन्द्र के बारे में कहा कि यह किशोर आगे चलकर निश्चित रूप से एक अत्यन्त प्रभावी वक्ता बनेगा और जब वह बोलेगा तो दुनिया न केवल उसे सुनेगी वरन् देखते ही रह जाएगी। आगे चलकर स्वामी पाश्चात्य देशों में और वापस लौटकर भारत में अपनी गंभीर संगीतमयी वाणी में जो कुछ कहा वह एक-एक शब्द सब की चेतना में अब भी स्मृति में अमर है। लगातार उन्होंने अपना वक्तव्य इस प्रकार शुरु किया - "मैं विवेकानन्द हूँ - एक हिन्दू सन्यासी। भारत से आया हूँ।"(११)

(८) हिन्दू धर्म के रक्षक

स्वामी विवेकानन्द हिन्दू धर्म के रक्षक तथा समाज सुधारक थे। 'होड़ो' तालाब के किनारे लोगों की भीड़ इकट्ठा करके एक पादरी हिन्दू धर्म की निंदा कर रहे थे, तब स्वामी विवेकानन्द अत्यन्त क्रुद्ध हो जाते हैं। ये सुनकर स्वामी जी ने पादिरी को उनकी गलती समझायी और स्पष्ट किया कि उनके विचार कहाँ-कहाँ गलत है, कहाँ-कहाँ सही। फिर उन्होंने हिन्दू धर्म के विचारों को भी स्पष्ट कर दिया। उस समय समाज में अनेक प्रकार के अनाचार फैले हुए थे। जैसे - पशुहत्या, जाली दस्तावेज बनाकर लोगों तथा विधवाओं को ठगना, कम उम्र में लड़की का विवाह करना, सुशिक्षित आदमी का अंग्रेज़ी और बंगला मिश्रित भाषा बोलना, लोकनाट्य-लोकसंगीत के प्रति नयी पीढ़ी की वितृष्णा, बंगाली पादिरियों का ईसाई धर्म प्रचार, बढ़ती हुई नास्तिकता, नवयुवकों का ईसाई बन जाना इत्यादि। फलस्वरूप स्वामी विवेकानन्द हिन्दू समाज में प्रचलित बुराइयों तथा कुप्रथाओं को दूर करना चाहते हैं। डॉ० नरेन्द्र कोहली के उपन्यास 'न भूतो न भविष्यति' में स्वामि विवेकानन्द यों कहते हैं - "हमारा धर्म अधिकांश धर्मों और सारे ईसाई संप्रदायों से प्राचीन है। ईसाई संप्रदायों को उनके आत्मविरोधी लक्षणों और उनके परस्पर दोष के कारण मैं धर्म नहीं कहता। ये सीधे हिन्दू धर्म से आए हैं। उसकी एक महत्वपूर्ण शाखा हैं। कैथोलिक धर्म ने भी अपने सारे रूप हम से ही प्राप्त किए हैं।"(१२)

स्वामी विवेकानन्द के आचरण में सिद्धान्त का समर्थन पाकर लोग उसकी तरफ खिंच जाते हैं। वे अपने अस्मिता बोध से उसे पाने को व्याकुल हो उठते हैं। इस प्रकार अंग्रेजों के प्रहार का प्रतिकार आत्मविकास के रूप में करते हुए स्वामी जी भारतीयों को सांसारिकता के मोह से जगाकर उनके बन्धनों को तोड़ने केलिए निरन्तर प्रयत्न करते रहते थे। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु अंत में वे अपने लक्ष्य के चरम बिंदु तक पहुँच जाते हैं।

संदर्भ सूची

(१) नरेन्द्र कोहली - साधना (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.२) - पृ.४२१
(२) नरेन्द्र कोहली - न भूतो न भविष्यति - पृ.३२७
(३) नरेन्द्र कोहली - निर्माण (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.१) - पृ.१७२
(४) नरेन्द्र कोहली - निर्माण (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.१) - पृ.७
(५) नरेन्द्र कोहली - सन्देश(तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.५) - पृ.१०८
(६) नरेन्द्र कोहली - सन्देश (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.५) - पृ.२४१
(७) नरेन्द्र कोहली - निर्माण (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.१) - पृ.१०८
(८) नरेन्द्र कोहली - परिव्राजक (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.३) - पृ.४००
(९) नरेन्द्र कोहली - निर्देश (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.४) - पृ.३०६
(१०) नरेन्द्र कोहली - निर्माण (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.१) - पृ.७१
(११) नरेन्द्र कोहली - निर्देश (तोड़ो कारा तोड़ो-भाग.४) - पृ.३०६
(१२) नरेन्द्र कोहली - न भूतो न भविष्यति - पृ.६६०

सहायक ग्रंथ सूची

(१) निर्माण (तोडो कारा तोड़ो - भाग.१), नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक: किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, आठवाँ संस्करण : २०१२
(२) साधना (तोडो कारा तोड़ो - भाग.२), नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक: किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, आठवाँ संस्करण : २०१२
(३) परिव्राजक (तोडो कारा तोड़ो - भाग.३), नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक: किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, छठाँ संस्करण : २०१०
(४) निर्देश (तोडो कारा तोड़ो - भाग.४), नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक: किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, तृतीय संस्करण : २००९

विवेकानन्द साहित्य में गुरु शिष्य की अवधारणा

नीरजा. वी.एस.

स्वामी विवेकानन्द आधुनिक युग के विश्वसिद्ध महापुरुष थे। वे वैदिक धर्म और भारतीय संस्कृति के ओजस्वी वक्ता भी थे। वे निष्क्रियता का विरोध करते थे और कर्म ही संसार को उनका संदेश था। स्वामी विवेकानन्द ने योग के जटिल पक्ष को सहज बनाकर उसकी व्यावहारिकता को सर्वमान्य बनाया। वेदान्त के और समस्त धर्मों के आधारभूत संदेश को पाश्चात्यों तक पहूँचाने में स्वामीजी ने अत्यंत परिश्रम किया। स्वामीजी ने संपूर्ण विश्व केलिए ज्ञान और शिक्षा की अनेक सामग्री प्रदान की है।

मन की चंचलता को वशीभूत कर इसकी बिखरी हुई शक्तियों को एकाग्र करने के अनेक उपाय का उल्लेख भारतीय दर्शन में मिलता है। इसकी प्राप्ति केलिए गुरु की आवश्यकता क्या है, गुरु और शिष्य के लक्ष्य क्या होना चाहिए, सच्चा गुरु कौन है - इन सब बातों का उल्लेख विवेकानन्द जी के योग संबंधी विचारों के अंतर्गत उल्लिखित किया है। सहयोग भी दर्शन की एक धारा है जिसमें मनुष्य के अंर्तजगत और वित्तवृत्तियों की एकाग्रता की साधना का वर्णन है।

गुरु की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुए विवेकानन्दजी कहते हैं कि प्रत्येक जीवात्मा पूर्णता प्राप्त करना चाहता है। पूर्णता प्राप्त करने केलिए जीवात्मा का बाह्य शक्ति की सहायता की आवश्यकता है। यह शक्ति पुस्तकों से प्राप्त नहीं होती। विवेकानन्दजी के मत में आत्मा केवल दूसरी आत्मा से शक्ति प्राप्त कर सकता है और किसी वस्तू से नहीं। आध्यात्मिक उन्नति पुस्तक पाठ करने से नहीं मिलती। पुस्तक पाठ से हमारी बुद्धि तेज़ होती है लेकिन अंतरात्मा का कोई लाभ नहीं होता। "जिस व्यक्ति की आत्मा से दूसरे की आत्मा को शक्ति मिले उसे गुरु कहते हैं और जिसकी आत्मा में शक्ति संचारित होती है, उसे शिष्य। सिर्फ गुरु आध्यात्मिक रुप से शक्तिमान होने से कोई लाभ नहीं होता"[१]। शिष्य को भी कुछ जानने की इच्छा होना चाहिए जैसे खेत और बीज दोनों की गुणवत्ता के आधार पर अच्छा फल मिलता है। जब शिष्य की अंतरात्मा को शक्ति पाने केलिए गुरु की आवश्यकता होती है तब गुरु अपने आप मिलता है। वैसे ही अगर व्यक्ति की धर्म पिपासा यथार्थ नहीं है तो गुरु के दर्शन नहीं मिल सकतें। इस अवस्था में हमको अपने भीतर देखना चाहिए कि धर्म पिपासा यथार्थ है यै नहीं। संसार के कई अज्ञानी लोग गुरु बनना चाहते हैं। मुण्डकोपनिषद् में यों कहा है "अज्ञान से आच्छादित अत्यंत निर्बुद्धी होने पर भी अपने को प्रकाण्ड पंडित समझनेवाले ऐसे लोग चारों ओर घूमते हैं"[२]। तो फिर गुरु की पहचान क्या है स्वामीजी कहते हैं जिसप्रकार सूर्य प्रकाश देखने केलिए दीया जलाने की ज़रुरत नहीं पडती उस प्रकार सच्चे गुरु को प्रमाणित करने केलिए दूसरे साक्षी की आवश्यकता नहीं होती।

अच्छे शिष्य के लक्षण बताते हुए स्वामीजी कहते हैं कि उसमें पवित्रता और सच्ची ज्ञान पिपासा होना चाहिए। अगर शिष्य की आत्मा अपवित्र है तो यथार्थ धार्मिक नहीं हो सकती। धार्मिक होने केलिए तन, मन और वचन की शुद्धता होनी चाहिए। धार्मिक पुस्तकें पढने से और धर्म संबंधी बातें सुनने से किसी को धर्म पिपासा नहीं होती। अच्छे शिष्य होने केलिए धर्म संबंधी सच्ची व्याकुलता होनी चाहिए। आध्यात्मिकता की प्राप्ति में एक महत्वपूर्ण वस्तु शिष्य की मनोवृत्ति है।

स्वामीजी के अनुसार परम सत्य प्राप्ति में निमिष मात्र लगता है अत: पलक झपने में जितनी देर लगती है, उतनी। यदि कोई परम सत्य की अनुभूमि किसी गुरु से प्राप्त करना चाहता है तो, उसे सच्चा शिष्य होना होगा। विवेकानन्दजी ने आदर्श शिष्य होने केलिए चार शर्तें रखी है।

पहली शर्त यह है कि जो शिष्य परम सत्य को जानना चाहता है वह भौतिक लोक में और आध्यात्मिक लोक में कुछ प्राप्त करने की सभी इच्छाओं को त्याग दें। जब तक किसी के मन में इच्छाएँ रहती हैं तब तक परम सत्य का उदय नहीं होगा। मनुष्य को आध्यात्मिक बनकर स्वर्ग पाने की इच्छा भी दूर रखनी होगी क्योंकि स्वर्ग में सुख्र सुविधाएँ अधिक होने के कारण आध्यात्मिक होने की संभावना कम है। इसलिए शिष्य को कुछ पाने की चाह वह किसी वस्तु, इंद्रिय सुख्र या स्वर्ग की इच्छा छोडनी चाहिए।

दूसरी शर्त यह है कि शिष्य को अपनी अंतरिंद्रियों और बहिरिंद्रियों को नियंत्रित करने में समर्थ होना चाहिए। नेत्र, कान, नाक आदि बाह्य इंद्रियों शरीर के विभिन्न भागों में स्थित दृश्य अंग है, उनसे संगत अंतरिंद्रियों अस्पृश्य है। मानव अंतरिंद्रियों बहिरिंद्रियों के इशारे पर नाचते हैं। इंद्रियों को अपने वश लाना बहुत कठिन बात है। जैसे किसी सुन्दर फूल देखते वक्त मन से कहना चाहिए कि मत सूँधो और मन गंध का अनुभव नहीं करता। जब कोई इसी अवस्था पर पहूँच जाते हैं तब वह शिष्य बनने योग्य होते हैं।

शिष्य की सहनशक्ति भी महान होनी चाहिए। उनको अपने शरीर को तुच्छ समझना चाहिए। अपने गुरुदेव श्री रामकृष्ण का उल्लेख्र करते हुए स्वामी जी कहते हैं जब उनके गुरु बीमार पडे तब एक ब्राह्मण ने सुझाव दिया कि रोग मुक्ति केलिए अपनी मानसिक शक्ति

(५) सन्देश (तोडो कारा तोड़ो - भाग.५), नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक: किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, तृतीय संस्करण : २०१२

(६) न भूतो न भविष्यति, नरेन्द्र कोहली, प्रकाशक: वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण : २००४.

***शोध छात्रा, केरल यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी, पालयम।**

नवजागरण और स्वामि विवेकानन्द

आशा देवी एम.एस.

अठारहवीं शताब्दी में विज्ञान और बुद्धिवाद का जो विकास हुआ, उन्नीसवीं शती के प्रारंभ में उसका प्रकाश चारों ओर फैल रहा था। इससे हमारे देश में नवजागरण की जो तरंग आई, उसके सबसे पहले उदित प्रमुख वक्ता श्री राजा राममोहन राय थे। पूरे हिन्दुस्तान में सभी धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन करनेवाले पहले व्यक्ति थे श्री मोहनराय। उन्होंने समाज में प्रचलित कुप्रथाओं के विरुद्ध आवाज़ उठाई और उत्साही नवयुवकों के साथ मिलकर अपने प्रयासों को पूर्णता भी प्रदान की। कानून द्वारा सती-दाह को बन्द करवाना, गंगा में संतानों को फेंकने की मनाही आदि उनके सफल प्रयास हैं। राममोहन राय बहुमुखी प्रतिभा के समाज सुधारक थे। वे धर्म और राजनीति दोनों को लेकर चले थे। उन्होंने असत्य और कुसंस्कार से कभी समझौता नहीं किया। जो कदम भी उठाया, दृढता और निडरता से उठाया। राममोहन राय स्वामी विवेकानन्द के सुयोग्य पूर्ववर्ती थे। विवेकानन्द जी ने उनकी शिक्षाओं के तीन मूल सूत्रों का निर्देश किया है- वेदान्त ग्रहण, स्वदेश प्रेम तथा हिन्दू और मुसलमान से समान प्रीति।

धुरंधर विद्वान, वेदान्त धर्म का प्रवर्तक, सर्वधर्म समन्वयकार एवं रामकृष्ण मिशन का संस्थापक स्वामि विवेकानन्द का जन्म १२ जनवरी १८६३ को संपन्न हुआ था जिन्होंने शिकागो के धर्म सम्मेलन में भाग लेकर भारत के धर्म और संस्कृति को विदेशों - विशेषकर पश्चिमी देशों में सम्मान दिलाया। इस साल आपके १५०वाँ जन्मदिवस धूमधाम से हरकहीं मनाया जा रहा है जो आपके प्रति आदरसूचक हैं।

स्वामि विवेकानन्द ने भारत के वास्तविक रूप को जानने केलिए सन् १८९० को भारत भ्रमण किया था। इस अवसर पर आपको अनेक परिस्थितियों से जूझकर अपने प्रस्ताव को सही स्थापित करने का मौका भी मिला। सन् १८९१ को वे अलवर पहुँचे। वहाँ के राजा मूर्तिपूजा के विरोधी थे। स्वामीजी की मूर्तिपूजा देखकर इसका औचित्य पूछा गया। अपनी बात को स्पष्ट करने केलिए स्वामीजी ने कक्ष में लगे महाराज के चित्र को उतरवाकर वहाँ उपस्थित दीवान और प्रजाजनों से इस कागज़ के टुकडे पर थूकने को कहा। किसी को न थूकते देख स्वामीजी ने कहा- जिस प्रकार कागज़ के टुकडे पर राजा का अस्तित्व है उसी प्रकार पत्थर या धातु की बनी प्रतिमाएँ भी भगवान की विशेष गुणवान मूर्तियाँ हैं।...भक्त मूर्ति के माध्यम से ही भगवान की उपासना करते हैं।

स्वामीजी जात-पांत, छुआ छूत, अंधविश्वास आदि के विरोधी थे। अपने अजमेर प्रवास के समय वे एक मुसलमान के घर पर मेहमान बनकर रहे और भोजन किये। लोगों ने इसपर आपत्ति उठाई तो उन्होंने कहा - "मैं सन्यासी हूँ। जो नियम-आचार आप पर लागू होते हैं वे एक सन्यासी पर लागू नहीं होते।...मेरेलिए कोई अस्पृश्य नहीं है। यह सब शास्त्र-सम्मत है।"

विवेकानन्द जी एक बार यात्रा के दौरान जब सुदूर दक्षिण में तीन समुद्रों के संगम स्थल पर स्थित तीर्थराज कन्याकुमारी पहूँचे, तब वहाँ सागर तट से दो फर्लांग दूर समुद्र के भीतर वह सिद्ध शिला दिखाई पडी जहाँ खडी होकर माता पार्वती ने शिवजी को पाने केलिए आराधना की थी। उस शिला से आकर्षित होकर स्वामीजी वहाँ पहूँचकर अखंड समाधि में लीन हुए। वहीं आपको भारत माँ का दरिद्र और मलिन वेश दिखाई पडा। फलस्वरूप उन्होंने अपनी मुक्ति का स्वार्थ छोडकर भारत के दरिद्र नारायण की सेवा का संकल्प लिया। इस प्रकार व्यक्ति

विवेकानन्द साहित्य में धार्मिक गुरु शिष्य की अवधारणा....

का उपयोग करें। श्री रामकृष्ण ने उत्तर दिया "क्या, जो मन मैं ने ईश्वर को दे दिया है उसे इस क्षुद्र शरीर केलिए नीचे उतारू"[३]। उन्होंने शरीर और बीमारी के विषय में सोचना अस्वीकार कर दिया।

शिष्य को तीसरी शर्त यह है कि उसमें मुक्त होने की आकांक्षा अत्यंत तीव्र हो। इसका मतलब यह है कि वासना से पूर्ण तरह से मुक्त होना चाहिए। मानव निरंतर उन उपायों और साधनों के पीछे भडकता रहता है। जिनसे हमारी उदर और काम की भूख़ की तृप्ति प्राप्त हो। परम सत्य की प्राप्ति का एक मार्ग है इंद्रियों और वासनाओं का परित्याग। इसकेलिए इच्छा को तीव्र एवं शक्तिशाली होना आवश्यक है।

चौथी और अंतिम शर्त शिष्यता की, उसे सत् और असत् का विवेक हो। ईश्वर के अलावा कुछ भी सत्य नहीं। यहाँ तक संसार भी मिथ्या है इसलिए शिष्य बनने केलिए मन केवल ईश्वर के प्रति समर्पित होना अनिवार्य हो। इन चारों शर्तों का पालन शिष्य बनने की इच्छा रखनेवाले को करना होगा। वे शर्तें पूरा करने केलिए गुरू की सहायता आवश्यक है। शिष्य को अपने गुरु में विश्वास रखना भी चाहिए। परम सत्य तक पहूँचने केलिए शिष्य को उपर्युक्त सभी बातों पर ध्यान रखना चाहिए।

आज के वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी युग में मनुष्य के सम्मुख सामाजिक, आत्मिक समस्याएँ है। उन समस्याओं से मुक्ति पाने केलिए स्वामी जी के मत में वेदान्त, भक्ति, योग आदि का मार्ग अपनाना चाहिए। देश की भावी पीढियों केलिए यही अमूल्य संदेश है।

(१) भक्तियोग - स्वामी विवेकानन्द

(२) कठोपनिषद्

(३) भक्तियोग - स्वामी विवेकानन्द

शोध छात्रा, युनिवेर्सिटी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम।

के मोक्ष की कामना समष्टि के मोक्ष की अभिलाषा में बदल गयी। उन्होंने पश्चिम के विज्ञान और वैभव को भारत लाने तथा भारत के अध्यात्म और त्याग को पश्चिम तक पहूँचाने के अतिरिक्त वेदान्त के आधार पर सर्व-धर्म समन्वय का लक्ष्य अपने सामने रखा।

देश में अंग्रेज़ व्यापारी शासक जनता के बीच अंतर्विरोधों को तीव्र बनाने केलिए तीन प्रकार के दलाल तत्व पैदा किए थे- व्यापार द्वारा दलाल पूंजीपति, कार्नवालिस के स्थायी बंदोबस्त द्वारा दलाल सामंत और मैकाले की शिक्षा द्वारा दलाल बुद्धिजीवि। इनमें मुस्लिम काल के उक्त विदेशी और देशी तत्व भी सहज में घुलमिल गए। वे अपने वर्ग स्वभाव से जन विरोधी और परंपरा विरोधी थे। इन लोगों ने अंग्रेज़ शासकों के आगे संपूर्ण रुप से आत्म समर्पण कर दिया और गोरे प्रभुओं के सामने अपने को साफ-सुथरा बनाकर पेस करने केलिए सुधारक बन बैठे। ये विवेकानन्द ही थे जिन्होंने जनसाधारण का पक्ष धारण करके अंग्रेज़ शासकों और उनका अंधानुकरण करनेवाले इन लोगों को एक साथ फटकारा।

जो अंग्रेज़ शासक हमें सभ्य बनाने की डींग हांकते थे, उनसे विवेकानन्द ने कहा कि हमारे महान राष्ट्र के दो गुण हैं- एक जिज्ञासा और दूसरा काव्यमय अंतर्दृष्टि। हमारे राष्ट्र ने अपूर्व जिज्ञासा के साथ अपनी यात्रा आरंभ की और उसने गणित शास्त्र, रसायन शास्त्र, चिकित्सा शास्त्र, संगीत शास्त्र एवं धनुष विद्या के आविष्कार में, यहाँ तक कि आधुनिक यूरोपीय सभ्यता के निर्माण में किसी भी अन्य प्राचीन अथवा अर्वाचीन जाति से कहीं अधिक योगदान किया है। अपनी दूसरी विशोषता से अपना धर्म, दर्शन, इतिहास,नीतिशास्त्र, राज्य-शास्त्र सबको काव्यमयी कल्पना के पुण्यकुंज से सजा दिये हैं। यह सब चमत्कार संस्कृत भाषा की है, अन्य किसी भाषा में उन्हें अच्छी तरह व्यक्त करना संभव न था, न है। इन्हीं दो विशेषताओं के बल पर हमारी यह जाति आज भी जीवित है। अंग्रेज़ों का अंधा अनुकरण करनेवालों पर भी आपने प्रहार किया है। उनका कहना है कि, यदि जगत में कोई पाप है, तो वह है दुर्बलता। अतः उसे त्यागने का आह्वान भी करता है- 'अपने बल पर खडे रहिए - चाहे जीवित रहिए या मरिए'।

सन् १८९३ को शिकागो के विश्व-धर्म-सम्मेलन में अपने ऐतिहासिक भाषण से वे सर्वश्रेष्ठ धर्मव्याख्याता बने थे। उस विश्व धर्म सभा में न केवल वेदान्त के आधार पर 'वसुधैव कुटुंबकम्' तथा सर्वधर्म समभाव का आदर्श रखा बल्कि हिन्दू धर्म की ऐसी सशक्त व्याख्या की कि सभी श्रोता उसकी श्रेष्ठता स्वीकार करने को बाध्य हो गये। बाद में न्यूयार्क, इंग्लैंड, फ्रांस, ग्रीस, टर्की जैसे अनेक देशों में हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता प्रतिपादित की और वेदान्त के आधार पर सर्व-धर्म समन्वय का संदेश दिया।

भारतवासियों के सामने मुख्य प्रश्न सुधार का नहीं, देश को विदेशी दासता से मुक्त करने का था। मज़दूर, किसान तथा विद्यार्थी शोषण और दमन के विरुद्ध आवाज़ उठा रहे थे। उभरते हुए राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग और साम्राज्यवाद में वर्ग संघर्ष तेज़दार होता जा रहा था। इन सब आघात-प्रतिघातों से नव-जागरण की वह भव्य तरंग उत्पन्न हुई, जिसका उल्लेख विवेकानन्द जी ने स्वदेश लौटने पर अपने कलकत्ता के भाषण में किया और उसमें लीन होकर ये छोटी-छोटी तरंगें अप्रत्यक्ष हुई।

स्वामी विवेकानन्द नवजागरण की इस तरंग के उत्कट प्रतीक और राजा राममोहन राय के सही उत्तराधिकारी थे। उन्होंने राजा राममोहन राय की शिक्षाओं को भली-भांति समझा और उन्नीसवीं सताब्दी के अन्त तक की परिस्थिति में उन्हें आगे बढाया। इसके अलावा उनकी तीक्ष्ण दृष्टि ने पूर्वक्षितिज पर अरुणोदय देखा और नये भारत का श्रीगणेश किया।

सन् १८९७ को मानव मात्र की शारीरिक, मानसिक एवं परमार्थिक उन्नति केलिए 'रामकृष्ण मिशन' नामक संस्था की स्थापना की जिसकी सैकडों शाखाएँ आज देश-विदेश में स्थित हैं। सर्व धर्म समभाव और दरिद्रनारायण की सेवा इसके प्रमुख लक्ष्य हैं। स्वामीजी ने दक्षिणेश्वर मंदिर के द्वार पतितों और अछूतों केलिए भी खोल दिये। आपत्ति उठाने पर उन्होंने स्पष्ट घोषणा की - "समस्त जातियों के पीडित-दुःखी, दीन-दरिद्र नररुपी नारायण ही मेरा विशिष्ट आराध्य देवता है।" पश्चिम और पूर्व का समन्वय उनका सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य था। वे आद्यात्मिकता की नींव पर विज्ञान का प्रासाद खडा करना चाहते थे ताकि विश्व संस्कृति का उदय हो और 'वसुधैव कुटुंबकम्' का सपना साकार हो। इस बात की प्रतीक्षा में कि आगे बहुत कुछ घटित होनेवाला है कि वे चल बसे। आज भी स्वामी विवेकानन्द मानसतल पर अमर रहते हैं।

संदर्भ स्रोत:

योद्धा सन्यासी विवेकानन्द, हंसराज रहबर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, प्र.व. १९९४

हमारे पथ प्रदर्शक, डॉ. गार्गीशरण मिश्र मराल, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्र.व.२००२

शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, तिरुवनन्तपुरम

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य बने (१०९)

नाम : **डॉ. बिनु पयट्टुविला**

जन्म : १०-०५-१९७८

शिक्षा : एम.ए., बी.एड., पी.एच.डी

विषय : हिन्दी कहानी साहित्य में व्यवस्था विरोधी स्वर (आठवें दशक के सन्दर्भ में)

पत्नी : सुजा आर.

पता : एच.एस.एस.टी जूनियर सरकारी हाईस्कूल, पुत्तूर, कोल्लम

फोन : 9446205791

ई-मेल : binupulari.d@gmail.com

स्वामी विवेकानन्द: एक देश भक्त नवजागरणकार युवा परिव्राजक

डॉ. महेष एस.

अपनी तेज और ओजस्वी वाणी के ज़रिए पूरे विश्व में भारतीय संस्कृति और आध्यात्म का डंका बजाने वाले स्वामी विवेकानन्द ने उद्घोषणा दी उठो, जागो, स्वयं जागकर औरों को जगाओ। अपने मानव जन्म को सफल करो और तब तक नहीं रुको जब तक कि लक्ष्य प्राप्त न हो जाए। स्वामी विवेकानंद को देश और युवाओं से काफी प्यार था और उन्होंने युवकों को प्रेरित करने के लिए काफी कुछ कहा। विवेकानंद का मानना था कि विश्व मंच पर भारत की पुनः प्रतिष्ठा में युवाओं की बहुत बड़ी भूमिका है। स्वामी विवेकानंद ने एक बार कहा था कि युवकों को गीता पढ़ने के बजाय फुटबाल खेलना चाहिए। क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है।

जन्म तथा बचपन:

स्वामी विवेकानंद का जन्म १२ जनवरी १८६३ को कलकत्ता में हुआ था। स्वामी जी के पिता श्री विश्वनाथ कलकत्ता उच्च न्यायालय के प्रसिद्ध वकील थे तथा माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों वाली महिला थीं। काशी विश्वनाथ से काफी वर्ष प्रार्थना करने का फलस्वरूप उन्हें पुत्रलाभ हुआ था। इसलिए इनके बचपन का नाम वीरेश्वर रखा और इनकी माता जी इन्हें "विले" कहकर पुकारती थी तथा इनके पिता द्वारा इनका नाम नरेन्द्रनाथ रखा गया था। बचपन में कुशाग्र बुद्धि व नटखट नरेन्द्र का सपना एक ऐसे राष्ट्र निर्माण का था जिसमें जाति, धर्म के आधार पर भेदभाव न रहे। विवेकानंद पढ़ाई लिखाई में बहुत तेज थे। स्कॉटिश चर्च कॉलेज के प्राचार्य डॉ. विलियम हस्टी ने उनके बारे में लिखा है "मैं ने काफी भ्रमण किया है लेकिन दर्शन शात्रों के छात्रों में ऐसा मेधावी और संभावनाओं से पूर्ण छात्र कहीं नहीं देखा यहाँ तक कि जर्मन विश्वविद्यालयों में भी नहीं देखा।" स्वामी विवेकानंद ने धर्मग्रंथों के अलावा विविध साहित्यों का भी गहन अध्ययन किया।

श्री रामकृष्ण परमहंस से भेंट:

२५ वर्ष की आयु में नरेंन्द्र ने गेरुवे वस्त्र धारण कर सम्पूर्ण भारत वर्ष की पैदल यात्रा की। यह ब्रह्म समाज से जुडे लेकिन वहां उनका मन नहीं रमा। एक दिन वह अपने मित्रों के साथ स्वामी रामकृष्ण परमहंस के यहाँ गए। जब नरेंन्द्रनाथ ने भजन गाया तब परमहंस बहुत प्रसन्न हुए। कर्मशील नरेंद्रनाथ ने परमहंस से पूछा, "क्या आप ईश्वर में विश्वास करते है? क्या आप उन्हें दिखा सकते हैं?" परमहंस ने उनके सवालों का हँसी में जवाब दिया। हालांकि विवेकानंद ने प्रारंभ में परमहंस को अपना गुरु नहीं माना लेकिन काफी समय तक उनके संपर्क में रहकर वह उनके प्रिय शिष्य बन गए। नरेंद्रनाथ अपने गुरु के आदेश से विवेकानंद बने। परमहंस के आध्यात्मिक संपर्क से उनके मन की अशांति जाती रही। परमहंसजी ने अपनी सारी शक्तियाँ अपने प्रिय शिष्य को प्रदान कर दी और केवल एक फकीर बनकर रहे। १८८६ अगस्त १६ को परमहंस जी की महासमाधी हुई। स्वामी विवेकानंद ने रामकृष्ण के नाम पर रामकृष्ण मिशन और मठ की स्थापना की। वे नर सेवा को ही नारायण सेवा मानते थे।

शिकागो भाषण:

१८९३ में शिकागो में विश्व धर्म संसद का आयोजन किया गया। शिकागो के प्रथम गिरिजाघर के वरिष्ठ पादरी जान हेनरी बेरोज (Jaun Henary Beroj) के नेतृत्व में इसका आयोजन किया गया था। जिसका मूल उद्देश्य कहीं न कहीं ईसाई धर्म को श्रेष्ठ बताना ही था। बाद में स्वामी जी ने अपने पत्र में लिखा, "ईसाई धर्म का अन्य सभी धार्मिक विश्वासों के ऊपर वर्चस्व साबित करने हेतु विश्व धर्म महासभा का संगठन किया गया था।" अपने एक साक्षात्कार में भी स्वामी जी ने कहा, "मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह विश्व धर्म महा सभा जगत के समक्ष अक्रिस्तियों का मजाक उड़ाने हेतु आयोजित की गई है।" वहाँ के लोगों ने बहुत प्रयास किया कि विवेकानंद को सर्व धर्म परिषद् में बोलने का समय ही ना मिले, मगर एक अमेरिकी प्रोफेसर के प्रयास से उन्हें थोडा समय मिला। स्वामी जी भाषण अमेरिका के भाइयों और बहनों से प्रारंभ किया तब काफी देर तक तालियों की गड़गड़ाहट होती रही। उनके विचारों ने अमेरिका में शोर मचा दिया। वहाँ के मिडिया ने उन्हें, "साइक्लोनिक हिन्दू" का नाम दिया। "अध्यात्म विद्या और भारतीय दर्शन के बिना विश्व अनाथ हो जायेगा" कहकर स्वामी जी ने पुनः भारत को विश्व गुरु पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। उनके तर्कपूर्ण भाषण से लोग अभिभूत हो गए। उन्हें निमंत्रणों का तांता लग गया। स्वामी विवेकानंद ने देश और दुनिया का काफी भ्रमण किया।

नवजागरण केरल में:

उस समय केरल के एक प्रमुख नवजागरणकार तथा सन्यासीवर थे श्री नारायण गुरु। समकालीन होने पर भी स्वामी जी तथा नारायण गुरु आपस में कभी नहीं मिले। लेकिन वे एक दूसरे को प्रेरणादायक रहा। प्रस्तुत घटना इसका एक दृष्टान्त है - मैसूर राजा ने स्वामिजी को डॉ.पल्पू से मिला दिया। डॉ.पल्पू जी ने स्वामी जी से केरल के पिछडे वर्ग के लोगों की स्थिति समझायी। उस समय केरल के समाज में प्रचलित एक भीषण अनाचार थी अस्पृश्यता। यह सब जानकर स्वामिजी अत्यधिक दुःखी और चिन्तित बने। कहने लगे तुम लोग क्यों उच्चवर्ग की ओर ताकते रहते हो? तुम लोगों के बीच में से ही एक महात्मा को ढूँढ निकालो और उनकी नेतृत्व में आगे बढो। इस बात का सटीक पालन डॉ.पल्पू ने किया। केरल वापस आकर उन्होंने श्रीनारायण गुरु से जा मिले। गुरु का आशीर्वचन लेकर उनकी अध्यक्षता में श्रीनारायण धर्म परिपालन संघ की स्थापना की। प्रस्तुत घटना ने भारतीय नवोत्थान

नवती मनानेवाले गुरुजी

जस्टीस एम.आर.हरिहरननायर

मैं इसे अपना भाग्य समझता हूँ कि मुझे इस कार्यशाला का उद्घाटन करने का अवसर प्राप्त हुआ। बहुत कम पूर्व विद्यार्थियों को यह अवसर प्राप्त होता है, और आज मैं धन्य हुआ हूँ। मुझे इस आनन्द-प्रद कर्तव्य के लिए बुलाया गया, इसके लिए मैं धन्यवाद अदा करता हूँ।

उन्नीस सौ अठावन से उन्नीस सौ इकसठ् (१९५८-१९६१) तक महात्मागाँधी कॉलेज में मुझे प्रो.चन्द्रशेखरन नायरजी ने पढ़ाया है, मैं तब भौतिक शास्त्र का, द्वितीय-भाषा का छात्र था। कॉलेज छोड़ने के बाद अब करीब पचास वर्ष तक हम एक-दूसरे से नहीं मिल पाए। दो महीने पहले, मैंने इन्हें एक बार फोन किया, पूर्व विद्यार्थियों की एक बैठक के लिए, इन्हें बुलाने केलिए। इन्होंने हमारे निमंत्रण को हार्दिक रुप से स्वीकार किया। जब मुझे मालूम हुआ कि, नूरउल्ल् इस्लाम विश्वविद्यालय (Noorul Islam University), इनके नाम से एक अध्यक्ष पद (chair) स्थापित करने जा रहे हैं, तो मैं उस सम्मेलन में भाग लेने पहुँचा। इस सम्मेलन के भवन में, इनके द्वारा लिखित, करीब साठ (६०) से ज्यादा पुस्तकों को देख कर, मुझे आश्चर्य हुआ। सर! आपके कारण, आपकी संस्था और हम सब सम्मानित हुए हैं।

कोई जन्म में महान होता है, कोई स्वयं अपने महत्व आर्जित करता है, और महानता किसी पर थोपी जाती है। इनमें से दूसरे वर्ग को प्यार और प्रशंसा अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। प्रो.चन्द्रशेखरन नायर भी इस दूसरी श्रेणी में आता है - उस का स्कूली जीवन सातवाँ कक्षा तक है। संयोगवश, वे हिन्दी पठन की ओर मुड़े। भारत के स्वतंत्र होने के तेईस साल पहले, तबभी इनके रगों में, स्वतन्त्रता के लिए राष्ट्रीय-संघर्ष का स्पन्दन था। राष्ट्रीय नेताओं के प्रति आकर्षित इसलिए हुए, और हिन्दी पठन की ओर मुड़े, क्योंकि उन नेताओं की भाषा हिन्दी थी।

अगर महात्मा-गाँधी ने वकालत छोड़ दी, तो इसलिए, वे झुठ का सहारा नहीं लेना चाहते थे, प्रो.नायरजी ने भी, अपनी नौकरी छोड़ दी, कि वे बाज़ार जा के, केले बेचने पर जान गए कि, व्यापार में मुनाफे के लिए, व्यापार-तन्त्रों का होना, और सच के रास्ते से हट कर, टेढ़े रास्तों को अपनाना पडता है। ऐसे एक सच्चे व्यक्ति को, वर्तमान स्थिति तक पहुँचना, कितना मिश्किल है, इस का अनुमान लगाया जा सकता है। उन्होंने अपना मेट्रिकुलेशन, मद्रास विश्वविद्यालय से ली, और उसके बाद उन्होंने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। पर उपाधियाँ इनकी राह में आती गयीं। हाँ, ऐसे एक विद्यामोही के मार्गदर्शन में, आधे-दर्जन स्नातकोत्तर (P.G.) विद्यार्थियों को, शोध की डाक्टरल उपाधि मिली।

प्रो.नायरजी बहुरुपिया हैं। वे एक चित्रकार, एक कवि, लेखक और इन सब से ऊपर एक करुणामय व्यक्ति है। अपनी आत्मकथा में उन्होंने कहा है कि, उनका पहला स्कूल-शास्तांकोट्टा वर्णाक्युलर मिडिल स्कूल, उनकेलिए ज्ञान की देवी और एक यथार्थ विश्वविद्यालय है। शास्तामकोट्टा में जन्मे बालक चन्द्रशेखरन जी का विकास आज जो है वह असामान्य और दूसरों के लिए स्पर्धापूर्ण है!

उन्नीस सौ अठावन-इकसठ् (१९५८-६१) में, जब मैं महात्मागाँधी कॉलेज में पढ़ रहा था, तब इस कॉलेज के प्रिन्सिपल, प्रो.मन्मथनजी थे। मैं हॉल में ही, उनके यादगार में बनी ट्रस्ट का भागीदार बना, क्योंकि, मैं उनके ऊँचे नैतिक-मूल्यों का आदर करता हूँ, जिनका उन्होंने हमेशा पालन किया। वे एक सच्चे गाँधीवादी थे, और जैसे गाँधीजी अपने

स्वामी विवेकानन्द: एक देश भक्त नवजागरणकार युवा परिव्राजक...

में एक नया अध्याय रचा। श्री नारायण गुरु के प्रिय शिष्य महाकवि कुमारनाशान ने विवेकोदय नामक एक पत्रिका भी चलायी उस मसय।

केरल के एक और महात्मा जिससे स्वामिजी मिले वे और कोई नहीं श्रीमद् चट्टंपी स्वामी जी हैं। जिन लोगों ने स्वामी विवेकानन्द से चट्टंपी स्वामी को उधर बुलाने की बात कही उनसे विवेकानन्दजी ने कहा महात्माओं को उनकी जगह जाकर मिलना चाहिए। स्वयं स्वामी विवेकानन्द ने श्री. शंकर मेनोन के गृह पहुँचकर पच्चंपी स्वामी जी से मिले। दोनों संस्कृत भाषा के पण्डित थे। उनके बीच बहुत देर तक अध्यात्मिक विषयों में चर्चा हुई, उनमें एक है चिन्मुद्रा के बारे में हुई चर्चा। विवेकानन्द जी ने अपनी राय प्रकट की कि भारत के एक श्रेष्ठ योगवर्य है श्रीमद् चट्टंपी स्वामीजी।

अपने पाश्चात्य पर्यटन के बाद मदिराशी में एक भाषण देते हुए स्वामिजी धार्मिक रोष से कहने लगे-मलबार में मैंने दुनिया की सबसे बडी बेवकूफी देखी। ऊँच जात के एक व्यक्ति जिस सडक से चलता है उसमें एक निम्न वर्गीय नहीं चल सकता। लेकिन विचित्र बात यह है कि वही एक क्रिस्तीय नाम या मुस्लिम नाम स्वीकार करने पर वह इन सारी मुसीबतों से बाहर आ सकता है।। ये सारे मलबार वाले पागल हैं, उनके घर पागलख्राने हैं।

स्वामीजी की महासमाधि:

४ जूलाई १०९२ को उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद कि व्याख्या की और कहा "एक और विवेकानंद चाहिए, यह समझने के लिए कि इस विवेकानंद ने अब तक क्या किया है।" शायद उन्हें अपनी मृत्यू का पूर्वाभास हो गया था। उसी दिन बेल्लूर मठ में अपने गुरुभाई स्वामी प्रेमानंद को मठ के भविष्य के बारे में निर्देश देने के बाद महासमाधि ले ली। दुनिया में हिन्दू धर्म और भारत की प्रतिष्ठा स्थापित करने वाले स्वामी विवेकानंद ने एक आध्यात्मिक हस्ती होने के बावजूद युवाओं के दिलों में अमिट छाप छोड़ी। यह सच है कि इतने वर्ष बीत जाने के बावजूद आज भी इस देशभक्त नवजागरणकार युवा परिव्राजक द्वारा कहे गए शब्द सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रेरणादायी है।

असिस्टन्ट प्रोफसर, हिन्दी विभाग, एस.एन.कॉलेज, चेम्पष्न्ति,

हिन्दी पत्रकारिता की दिशा और दशा

राजेन्द्र परदेसी

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व पत्रकारिता जन-जागृति और स्वतंत्रता के संघर्ष को गति प्रदान करने का साथन था। समाचार पत्रों के प्रकाशकों और सम्पादकों का एक पैर जेल में रहता था और दूसरा पैर बाहर। राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, महामना मदनमोहन मालवीय, बाबू बालमुकुन्द गुप्त, पं. पद्मकान्त मालवीय, पं.अम्बिका प्रसाद बाजपेयी, श्री. मूलचन्द अग्रवाल, श्री. शिवपूजन सहाय, पं.बनारसी दास चतुर्वेदी, श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर, महात्मा गांधी, श्री.गणेश शंकर विद्यार्थी, पं.रमाशंकर अवस्थी, पं.रमाशंकर त्रिपाठी, पं.द्वारका प्रसाद मिश्र प्रभृति महापुरुषों ने पत्रकारिता के माध्यम से जनमानस को शिक्षित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। पत्रकारिता को चरित्र निर्माण और जन जागरण का हथियार बनाया। परन्तु आज भौतिकता की चमक-दमक में वही हथियार कुंद होता जा रहा है।

१७ मई, १८७८ को कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले भारत मित्र के प्रथम अंक के प्रथम सम्पादकीय में पत्रकारिता के महत्व को इस प्रकार रेखांकित किया है-

समाचार पत्रों से जो उपकार होता है... इस विषय में बहोत लिखने का कुछ प्रयोजन नहीं है, क्योंकि जबतक जिस देश में, जिस भाषा में और जिस समाज में समाचार पत्र का चलन नहीं हैं, तब तक उसकी उन्नति की आशा भी दुराशामात्र है... समाचार पत्र प्रजा का प्रतिनिथि स्वरूप होता है और मुख्य तो हृदय संस्कार करने को जैसा ये समर्थ हैं वैसा तो कोई भी नहीं है।

देश के स्वाधीन होने के पूर्व के समाचार पत्र भारतीय जनता के मन-प्राणों में राष्ट्रीय चेतना के संस्कार आरोपित करने के मिशन से सतत सम्बद्ध रहे। इसके लिए उनके संपादकों को कष्ट भी उठाने

नवती मनानेवाले गुरुजी...

वचन पर अड़िग थे, वैसे ही प्रो.मन्मथनजी ने भी, वही किया, जो उन्होंने कहा। उन्होंने प्रो.चन्द्रशेखरनजी को, अपना दामाद बनाया, जिससे दोनों लाभान्वित हुए। एक लायक ससुर का लायक दामाद! उन दोनों में एक और समानता है-अगर प्रो.मन्मथनजी ने, कालेज के काम त्याग दिया, क्योंकि, वे अपने कॉलेज के प्रशासन में ही अडिग रहे राजनीतिक दखल को, सह नहीं पाए। प्रो.चन्द्रशेखरनजी ने भी अपने स्कूल की नौकरी छोड दी, क्योंकि उन्होंने धैर्यपूर्ण मैनेजमेंट के सारे बन्धनों को अनदेखा करते हुए, उस स्कूल में पहला स्वतन्द्रतादिवस मनाया।

जब मैं महात्मागाँधी कॉलेज में था, तब वहाँ के सारे अध्यापक जो मुझे पढ़ाते थे, मेरे लिए आदरणीय थे। तब विद्यार्थियों में ट्यूटर, लक्चेरर और प्रोफसर आदि के बीच भिन्नता का एहसास नहीं होता था। कम-से-कम मेरे लिए तो, जो भी कक्षा में ज्ञान बाँटते थे, वे मात्र अध्यापक ही थे। प्रो.नायरजी की आत्मकथा से मुझे ज्ञात हुआ कि, जिस समय वे वहाँ ट्यूटर के पद पर नियुक्त थे, उनके पास स्नातक की उपाधि नहीं थी। हाल में ही मैंने उनकी आत्मकथा-अनन्तपुरियुम ज्ञानुम पढ़ी और उसमें जो कुछ बातें विस्तार पूर्वक लिखी गई हैं, वह सब, वर्तमान विद्यार्थियों के लिए लाभदायक हैं।

अपनी मूर्खता पर हँसने वाले लोग बहुत कम परिमाण में मिलते हैं। प्रो.नायरजी के किताब में, उन्होंने इस बात का ज़िक्र किया है, कि, कैसे उन्होंने अपनी वेश-भूषा-धोती को, पतलून में बदला जो कि दिल्ली में एक बस यात्रा के दौरान हुआ था। वे कैसे एक नायन (Lion) बने, मेरा मतलब, लायन्स क्लब के मेम्बर बने, कैसे वे एक शेयर-होल्डर बने, कैसे उन्होंने एक चोर का पीछा किया, आदि इस किताब में विस्तार से जो लिखे हुए हैं, मजा देने वाले, विवरण हैं। प्रो.नायरजी उनमें हैं, जो कड़ी मेहनत से हिचकिचाते नहीं, और न ही चुनौतियों से भागते हैं। जब उनके शोध-कार्य के पंजीकरण को, ख़ारिस करने की धमकी बिहार वि.वि. से मिली, तो उन्होंने अपनी थिसिस (Thesis) केवल छह महीनों में पूरा करने का निश्चय किया। यह विश्चय, उन्होंने मनोयोगपूर्वक सफल बना दिया और निश्चित समय के भीतर, थीसिस प्रस्तुत की। और शोध उपाधि, पा ली।

उन दिनों सुबह पुस्तकालय के खुलते ही, उसमें सबसे पहले प्रवेश करने वाले, और उसके बन्द होने पर, सबसे अन्त में वहाँ से निकलने वाले, प्रो.नायरजी ही थे। हम सब के लिए उनका जीवन एक नमूना (Model) है।

यह बहुत ही अच्छी बात है कि, विश्व-साहित्य के लिए, उनके जीवन भर की, जो साहित्यिक देन है, उसका मूल्यांकन यहाँ किया जा रहा है।

आदरणीय प्रोफसर! उन्नीस सौ अठावन में डिग्री केलिए मैंने द्वितीय-भाषा के रुप में, हिन्दी पढा था, फिर इसका उपयोगि नहीं किया। इसलिए हिन्दी में मेरा ज्ञान सीमित है! यहाँ बैठे, विशिष्ट हिन्दी विद्वान, आपकी कृतियों का, मूल्यांकन करेंगे। मैं इतना कह सकता हूँ, कि केवल हिन्दी-साहित्य के ही नहीं, बल्कि आपके विद्यार्थी और केरल के लोग जो पाठक हैं जो भी, आपको गर्व और आराधना की दृष्टि से देखेंगे।

प्रोफसर साहेब, मैं जानता हूँ, कि आप की उम्र अठासीयों में है। यह ऐसे दिन हैं, जब ईश्वर द्वारा दिये गये स्वास्थ्य को दवाईयों के सहारे और आगे धकेला जाता है और यह इम्र मनुष्य के कारयित्री क्षमता या सेवा प्रबलता का मानदण्ड नापने केलिए, नहीं होता। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ, कि आप को, स्वास्थ्य और लम्बी उम्र दें और आप हिन्दी-साहित्य को और अधिक कृति प्रदान कर सकें।

इन शब्दों के साथ, में इस महती कार्यशाला का उद्घाटन करता हूँ।

धन्यवाद-जय हिन्द! ●

पड़े। वे अंग्रेजी शासन के कोप भाजन बनते रहे। उनसे जमानत मांगी जाती रही। न देने पर समाचार पत्र को बन्द करने को विवश भी होना पड़ता था। समाज को संस्कारिता करनके समाज एवं राष्ट्र को समर्पित होने का पावन मिशन स्वतंत्रता के पश्चात् समाप्त प्राय हो गया। आज पत्रकारिता दिसभ्रमित है। उसके सम्मुख कोई सार्वभौमिक मिशन नहीं है। मिशन है भी तो ख्रण्डित और अल्पजीवी। बाजारवादी युग में व्यवहार, व्यस्था या व्यक्तिगत स्वार्थ पहले आ गया है, फिर भावनाएँ, ऐसे में पत्रकारिता भी एक लाभकारी प्रोफेशन के रूप में पढे लिख्रे लोगों के सम्मुख्र प्रकट हुआ है।

भारतीय मनीषा स्थापित मूल्योतं को ख्रण्डित होते या अपसंस्कृति से समाज को प्रभावित सहजता से देख्र नहीं पाती। वह द्रवित होती है। क्योंकि मूल्यों से वह बहुत अपेक्षाएँ रख्रती है। इसी कारण वह वर्तमान पत्रकारिता का बदलाव स्वरूप देख्रकर दुःख्री होता है। ऐसी दशा में पत्रकारिता से अपेक्षा की जाती है कि वह जीवन मूल्यों की अक्षुणता के प्रति सतत सचेष्ट रहे।

पत्रकारिता के वर्तमान स्वरूप के पीछे व्यावसायिकता के प्रति आग्रह है। स्वतंत्रता के पूर्व अख्रबार निकालना व्यवसाय था और नहीं भी था। उसके अधिकांश संचालक उससे भौतिक लाभ अर्जित करने के प्रति उदासीन रहा करते थे। वे साधनारत रहा करते थे। वास्तव में वह पत्रकार ही थे। इसी कारण वे विद्वानों का समादर करते थे। उनके विचार एवं सम्मति को उच्च प्राथमिकता देते थे। परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त पत्रकारिता के क्षेत्र का व्यावसायिककरण हो गया। भावनाओं का लोप हो गया। पत्रकार से लेकर संचालक तक किसी-किसी गुट का साथ पकड़कर राजनीतिक संरक्षण प्राप्तकर आर्थिक लाभ उठाने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि समाचारों की तथ्यपरकता का स्थान पक्षपातपूर्ण प्रशस्तिगान ने लिया।

आज अधिकाँश समाचार पत्र किसी न किसी बड़े औद्योगिक घराने या व्यवसायी-राजनीतिज्ञ द्वारा संचालित होने के कारण जनमानस की प्रतिबद्धता से हट गये हैं। पत्र के समाचारों का चयन जन जागरण और जन समस्याओं से हटकर अपने मालिकों के हित को पोषित करना आधार होता है। जिसके कारण पत्रकारिता की गौरवशाली अनुकरणीय परम्परा समाप्त हो गयी है।

समाचार पत्रों के सम्पादक इसी कारण अपने पत्रों का सम्पादन कार्य भूलकर उसको चलाने का प्रबंधन देख्रने लगे हैं। इसके कारण पत्रकारिता का उद्देश्य ही बदल गया। पत्रों में समाजापयोगी समाचार और साहित्य के स्थान पर सम्पादक अपने व्यावसायिक घरानों के हित की सामग्री परोसने लगे हैं। अधिकाधिक आय हेतु विज्ञापनों को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। ऐसी दशा में उनका निष्पक्ष रह पाना कठिन हो गया है।

पत्रकारिता का मूल उद्देश्य है सूचना, ज्ञान और मनोरंजन प्रदान करना। किसी समाचार पत्र की जीवित रख्रने के लिए उसमें प्राण होना आवश्यक है। पत्र का प्राण होता है विज्ञापन, लेकिन बढ़ते बाजारवाद और आपसी प्रतिस्पर्द्धा के कारण विज्ञापन इतना महत्वपूर्ण हो गया है कि पत्रकारिता का वास्तविक स्वरूप ही बदल डाला। राष्ट्रीय स्तर के समाचारों के लिए सुरक्षित पत्रों के प्रथम पृष्ट पर भी उर्द्धनग्न चित्र विज्ञापनों के साथ आ गये है।

समाचार पत्रों का सम्पादकीय जो समाज के बौद्धिक वर्ग को उद्धेलित करती थी जिनसे जनमानस भी प्रभावित होता था। आज अपने प्रतिद्धन्दी को नीचा दिख्राने में उपयोग किया जा रहा है, जिसने पत्रकारिता के गिरते स्तर और उसकी दिशा को लेकर अनेक सवाल ख्रड़े कर दिये है।

इधर इलेक्ट्रानिक मीडिया के प्रभाव ने समाचार पत्रों को भी सत्य के नाम पर इतनी तेजी से दीड़ा दिया है कि समाचार संवाहक को स्वयं ही समाचार सर्जक बना दिया है। फिल्म अभिनेत्रियों की शादी और रोमांस के सम्मुख्र आम महिलाओं की मौलिक समतस्याएं, उनके रोजगार, स्वास्थ्य उनके ऊपर होने वाले अत्याचार का स्थान नहीं पा पाता। यदि होता है तो बेमन, केवल दिख्राने के लिए।

पत्रकारिता का इतिहास देख्रें तो हम पाते हैं कि पत्रकारिता सदैव समाज के आम आदमी से जुड़ी रही है। वर्तमान में बाजार के प्रभाव ने उसे भी प्रभावित कर लिया। जिसके कारण उसके लिए सामाजिक हित का समाचार गौण हो गया। आदमी की प्राथमिकता बदलने लगी है। उसकी सोच में भी बदलाव आने लगा है। पहले जहाँ बाजार समाज के अनुसार लगता था आज वही समाज बाजार के अनुसार चलने लगा है। इसके पीछे बाजारवादी पत्रकारिता का बड़ा हाथ है।

वैश्वीकरण ने भी आज की पत्रकारिता को काफी प्रभावित किया है। सभी समादार पत्र अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय समाचारों के बीच झूलने लगे हैं। एक ओर विदेशी पत्रकारिता की नकल कर आज अधिकांश पत्र सनसनी तथा उत्तेजना पैदा करने वाले समाचारों को सचित्र छापने के दौड़ में जुटे है। इन्टरनेट से संकलित समाचार कच्चे माल के रूप में जहाँ इन्हे सहजता से मिल जा रहा है, वहीं प्राद्योगिकी का उपयोग कर अनेक संस्करण निकालकर अपने पत्रों को क्षेत्रीय रूप दे रहे हैं, जिसके कारण प्तरकारिता का सार्वभौमिक स्वर ही विलीन होने लगा है।

पत्रकारिता के कुछ विशेषज्ञ इसके लिए इलेक्ट्रानिक मीडिया को अधिक दोषी मानते हैं। परन्तु वास्तविकता यही है कि बाजारवाद के लाभ से लाभान्वित होने के प्रयास में अन्य के ऊपर दोषारोपण करके स्वयं को मुक्त नहीं किया जा सकता। प्रमाण है कि इलेक्ट्रानिक मीडिया के काफी विस्तार होने के बाद भी महानगरों से लेकर छोटे शहरों तक लोग रात में सोते समय भी टी.वी. पर समाचार देख्रने और सुनने के बाद भी सुबह होते ही सबसे पहले अख़बार में समाचार पढ़ने बैठ जाते है। फिर किस आधार पर समाचार पत्र के प्रचार-प्रसार को इलेक्ट्रानिक मीडिया प्रभावित कर रहा है।

समाचार पत्रों को ख्रतरा उसकी गलत दिशा की ओर कदम बढ़ाने से है। पहले उसे बाजारवादी आकर्षण से मुक्त होकर पुनः पुरानी परम्परा का अनुसरण करना ही होगा। तभी पत्रकारिता की विस्वसनीयता बढ़ेगी और उसे तथा पाठकों को सही दिशा प्राप्त हो सकेगी।

पत्रकारों और पत्रों के संचालकों को पीत पत्रकारिता और सत्ताभोगी

प्रगतिवादी आलोचक : डॉ. रामविलास शर्मा

श्रीदेवी एस.

डॉ. रामविलास जी ने अंग्रेज़ी, संस्कृत और हिन्दी कविता के मर्म का मंथन कर हिन्दी आलोचना क्षेत्र में पदार्पण किया। आलोचक कवि की संवेदना लेकर वे इधर आये और निराला उनकी काव्यलोचन दृष्टि के निर्माण के लिए प्रेरक धुरी सिद्ध हुए, उसी तरह जैसे आचार्य शुक्ल के लिए तुलसी का काव्य आदर्श प्रतिमान बना। उनका प्रथम प्रकाशित आलोचनात्मक लेख 'निराला जी की कविता' १९३४ में चाँद के अक्तूबर अंक में पाठकों को दृष्टिगत हुआ। यहाँ शर्मा जी की चेष्टा निराला के इस काव्य-सौन्दर्य को उद्घाटित करने की ओर रही है जिसे दुरूहता और अर्थहीनता के आक्षेपों से मलिन किया जा रहा था। यद्यपि इस लेख में शैली और कीट्स के उद्धरण देकर निराला जी के यौवन-श्रृंगार के चित्रण की स्वाभाविकता की उजागर किया गया है और 'लाक्षणिक कविता' के प्रतिमान पर उनकी कविता की ऊँचाई का समर्थन किया गया है। तथापि इस लेख से यह बात ध्वनित होती है कि निराला के पाठक और आलोचकों का 'स्वाद' तब तक कवि - बोध से अधिक नीचा और हीनथा। उसकी सामर्थ्य का पता लगाने के लिए घिसे - पिटे प्रतिमानों की अक्षमता काम नहीं आ सकती थी। यह चुनौती रामविलास जी के सामने थी। यही कारण है कि 'निराला की साहित्य साधना' लिखते हुए एक ओर उन्होंने कवि की रचना का जीवन वृत्तीय अध्ययन करने की प्रेरणा दी और दूसरी ओर जातीय परम्परा के परिप्रेक्ष्य में कविता के अध्ययन की नींव डाली। हिन्दी के विकास और स्वरुप की सही पहचान कर जातीय भाषा में जातीय चेतना के निहित रुप की पकड़ और उसके आधार पर राष्ट्रीय जनवादी साहित्य का निर्माण भारतेन्दु से पूर्व हिन्दी तो क्या, किसी भी भारतीय भाषा में न हुआ था। डॉ. शर्मा जी ने इस स्थिति का विलेषण करते हुए लिखा था-साहित्य में जो रीतिवाद विरोधी क्रान्ति शुरु हुई उसका पहला चरण है द्विवेदी युग और उसी का विकास छायावाद और प्रगतिवाद में होता है। ये तीनों युग एक- दूसरे से भिन्न है, साथ ही एक - दूसरे के पूरक भी। नवजागरण की यह स्थापना ही वह आधार है जिस पर शर्मा जी ने रामचन्द्र शुक्ल, प्रेमचन्द्र और निराला के साहित्य का मूल्यांकन किया और उनके कलासाहित्य के सृजन की श्रेष्ठता प्रतिपादित की।

''हिन्दी प्रदेश में एक ' शक्ति शाली नवजागरण' की चिन्ता रामविलास जी को पहले से ही रही है।' निराला को उन्होंने पहली बार त्रासदी का कवि बताया। त्रासदी झेल कर भी जिजी विषा न मरने देनेवाला योद्धा बताया और कहा कि निराला अपने काव्योदय से लेकर जीवन की अंतिम संध्या तक अपराजित मन के अस्तित्व का अनुभव करते रहे। शर्मा जी के अनुसार भारतेन्दु से लेकर निराला तक का साहित्य लोकजागरण का विकास है। यह जागरण कुछ मौलिक विोषताओं के साथ प्रत्येक प्रदो में भिन्न हैं। समाज के मूल ढाँचे में परिवार के बिना जागरण सम्भव न था।

''नवजागरण के साथ ही रामविलास जी की मुख्य चिन्तन है परम्परा की रक्षा।" भारतेन्दु और प्रेमचन्द पर प्रगति और परम्परा की दृष्टि से उन्होंने विस्तृत समीक्षाएँ लिखी हैं। शर्मा जी ने पहली बार 'भारतेन्दु युग और जनसाहित्य' शीर्षक उसे 'कवि वचन सुधा' में प्रकाशित १९७९ की उस विज्ञप्ति की ओर ध्यान आकृष्ट किया, जिसमें ग्राम साहित्य की आवयकता पर बल दिया गया था और जिसका सुखद परिणाम यह हुआ कि साहित्य दरबारी संस्कृति के चारण- चरण से निकल कर जनता को नये आन्दोलन से जोड़ने के लिए खड़ा हो सका।

''साहित्य के शिल्प और रुप - पक्ष को भी डॉ. शर्मा सामाजिक विकास से प्रभावित मानते हैं।" डॉ. शर्मा के पास मौलिक आलोचना दृष्टि है। यही कारण है कि प्रेमचन्द सम्बन्धी आलोचना का जो व्यापक आधार उन्होंने प्रस्तुत किया, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक और सार्थक है। यह कार्य उन्होंने तब किया जब प्रेमचन्द्र का जीवन वृत्तीय अध्ययन नहीं हुआ था। प्रेमचन्द की शक्ति, अक्षमता, संगति, असंगति सबकी परख प्रेमचन्द में की गयी है। शर्मा जी का सूत्र यह है कि प्रेमचन्द ने जिन सामाजिक कुरीतियों की आलोचना की है, उनकी जड़ भी उन्होंने सामाजिक व्यवस्था में ही खोज निकाली है। इसीलिए प्रेमचन्द का विश्लेषण छिछला और सुधारवादी न होकर क्रान्तिकारी और सामाजिक व्यवस्था की जड़ पर ही आघात करने वाला हो जाता है।

''आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. शर्मा के 'आर्दा समीक्षक' है।" इसलिए शुक्ल जी की तरह शर्मा जी भी केवल समाज विज्ञान परक समीक्षादर्श प्रस्तुत नहीं करते, वे रचनाओं की निर्माण प्रक्रिया और रुप तथा भावगत संवेदनाओं और कलात्मक प्रस्तुतियों का भी विवेचन करते है। 'लोक जीवन और साहित्य' में उन्होंने साहित्य शास्त्र की उपयोगिता इस बात में मानी है कि उसमें साहित्य और जीवन के अटूट सम्बन्ध की पहचान होनी चाहिए। वास्तविक जीवन संघर्ष के चित्रण के अभाव में साहित्य नहीं हो सकता। संघर्ष चेतना का कलात्मक चित्रण साहित्य का आत्मतत्व है। इसी की व्याख्या उन्होंने भारतेन्दु, प्रेमचन्द और निराला की रचनाओं के मूल्यांकन के प्रसंग में की है।

रचना के मूल्यांकन केलिए एक और आधार 'राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य' का भी है। शर्मा जी की स्थापना है कि भारत बहुजातीय राष्ट्रीयतावाला देश है। यहाँ के साहित्येतिहास का लेखन और मूल्यांकन तभी सम्भव है जब सभी भाषाओं के साहित्य को एक दूसरे के परिपार्श्व में रखकर पढ़ा- समझा जाये। शर्माजी का सुझाव है कि भाषा के साहित्य के

नेताओं के प्रशस्तिगान के बजाय, जनमानस के दुःख दर्दों का निराकरण, माज एवं राष्ट्र के उन्नयन के लिए निःस्वार्थ भाव से कर्त्तव्य का पालन करना होगा, तभी वे लोकतंत्र में चौथे स्तंभ का अस्तित्व बनाये रखने में सफल हो सकेंगे।

भारतीय पब्लिक अकादमी,
चांदनरोड, फरीदीनगर, लखनऊ-२२६०१५

एस प्लेट सैलाब: नारी विमर्श के सन्दर्भ में

शालिनी जी.एस.

आधुनिक युग के नये कहानीकारों में श्रीमती मन्नू भंडारी का उल्लेखनीय स्थान है, मन्नूजी एक प्रभावी वक्ता, कहानीकार, उपन्यासकार, अध्यापिका, अन्याय के प्रति विद्रोही, संवेदनशील, उत्साही, स्थितियों को सूक्ष्म दृष्टि से देखनेवाली महिला है। मन्नूजी का रचना-संसार वैविध्य की दृष्टि से आकर्षण का केन्द्र है। नारी हृदय के अनकहे मूक सच को पूरी तटस्थता और ईमानदारी से मुखर करनेवाली मन्नूजी की कहानियों में आत्मा के विस्तार के साथ संवेदना का फैलाव भी है।

मन्नूजी की कहानी अपने परिवेश के विविध अनुभवों, मानवीय पीडा, मानवीय दृष्टि अपने खुलेपन और अकृत्रिम भाषा के कारण सार्थक और प्रभावशाली बन पडी है। इन में पुरुष पात्रों की अपेक्षा नारी पात्रों की समस्याओं को प्रमुख स्थान मिला है। डॉ. ममता शुक्ला की राय में - "अन्य कहानी लेखिकाओं की तुलाना में आपका कथा-वस्तु फलक विस्तृत है। वस्तुत : अपने भावुकता से हट कर बदले हुए जीवन - संदर्भ में खुले दिमाग से नारी-जीवन की वास्तविकता को देखा-परखा है और उसे बडी सादगी के साथ व्यक्त किया है।"[1]

मन्नूजी के पूर्व जो महिला साहित्यकार साहित्य-जगत में आई उन्होंने 'आँचल में दूध और आँखों में पानी' वाली नारी को कोमल तथा गरिमामय प्रतिमा अधिक चित्रित की। मन्नूजी को इस प्रतिमा से विशेष लगाव नहीं था और इस कारण उन्होंने नारी मन की घुटन, टूटन तथा आक्रोश अपनी कहानियों में चित्रित किया। उन्होंने अपनी कहानियों में नारी मन की अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है।

स्त्री विमर्श में मन्नूभण्डारी का नाम अपनी एक अलग पहचान है। मन्नूजी ने नारी विमर्श में अपनी लेखनी चलाकार स्त्री को एक नया आयाम प्रस्तुत कर समाज में उनके अस्तित्व को बोध कराया है। तीव्र गति से बदलती जा रही युगीन स्थिति में नारी की यथार्थ जीवन परिस्थिति को पहचानते का प्रयास उन्होंने किया है। नारी जो अनादिकाल से बाह्य या आन्तरिक रूप में किसी न किसी प्रकार के बन्धन में बन्धित रही थी, आज अपने व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता केलिए संघर्ष करने लगी है। मन्नूजी ने इन संघर्षों को ही अपनी कहानियों में शाब्दिक अभिव्यक्ति दी है। पुरुष नारी को अपने स्वार्थ की पूर्ति का साधन मात्र समझ बैठा है। उसके इस स्वार्थ के कारण नारी का नाम हमेशा कुठित रहता है। आज कल शिक्षा के विभिन्न साधनों ने नारी को खूब समझदार बना दिया है। अब वह अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व चाहनेवाली बन गयी है।

मन्नूजी का चौथा कहानी संग्रह है "एक प्लेट सैलाब"। इस कहानी संग्रह की 'नई नौकरी', 'बन्द दराज़ों का साथ', 'एक बार और', 'संख्या के पार', 'बाँहों का घेरा', 'कमरे', कमरा और कमरे', 'ऊँचाई' आदि कहानियों में स्त्री जीवन के विविध पहलुओं को दर्शाया है। विविध पहलू अर्थित् स्त्री जीवन की विविध समस्याएँ ही दिखाई देती हैं। इन कहानियों की विशेषता यह है कि इसमें समाज के सभी स्तर की स्त्रियों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

एक शिक्षित नारी की दयनीय दशा, तनाव और खण्डित व्यक्तित्व का यथार्थ और मनोवैज्ञानिक परिचय देनेवाली कहानी है "नई नौकरी"। इतिहास की प्राध्यापिका रमा साढ़े दस साल तक नौकरी करती रही। पति कुंदन ऑफिस जाते समय रमा को कॉलेज छोड़कर आगे बढ़ता है। दोनों हमेशा साथ रहते हैं। उनका बेटा बंटी पढ़ाई में अच्छा है। सब खुश हैं। कुंदन को डॉ. फिशर ने नई नौकरी दी जिससे सारी जिन्दगी का पैटर्न ही बदल गया। कुंदन अपनी पत्नी को सिर्फ पैसा, घर, बच्चे देने में तथा उसे सुखी रखने में अपने कर्तव्य की परिपूर्णता समझता है। लेकिन इसके अलावा पत्नी की कुछ अंतरतम इच्छाएँ हो सकती हैं इसकी वह चिन्ता नहीं करता।

पुरुष प्रधान समाज में नारी-जीवन की कई दुर्गतियाँ हो सकती हैं। पति के प्रति पत्नी का प्रेम-त्याग और पति के अधिकार को स्वीकार करना ही उसका दायित्व हो जाता है। प्रस्तुत कहानी में रमा का चित्र इसी बात को गहरा रहा है। नई नौकरी के कारण कुंदन के व्यक्तित्व में निखार आया, उसके अहं-बोध का विकास हुआ और पारिवारिक दायित्व उसकी दृष्टि में हेय होने लगा। पुरुष अपनी आकांश-पूर्ति में पत्नी का साथ चाहता है पर पत्नी की इच्छाओं के अलग अस्तित्व की कल्पना भी वह नहीं कर सकता। शिक्षित पत्नी उसके जीवन में एक 'शोपीस' है।

प्रस्तुत कहानी में लेखिका ने ऐसी नारी का चित्र उपस्थित किया है जो अपने अपने क्षेत्र में स्वच्छन्द और स्वतन्त्र बना रखना चाहता है, पुरुष प्रधानता के कारण नारी मन पर जो आघात होता है उसको सहनेवाली और आक्रोश करनेवाली रमा का चित्र इस भाव की पुष्टि करता है। उसे कालेजीय नौकरी छोड़नी पड़ती है और कुंदन केलिए परछायी सी जीवन बिताना पड़ता है।

"बन्द दराज़ों का साथ" एक ऐसे पति-पत्नी (विपिन-मंजरी) की कहानी है जिन्होंने एक छोटी-सी शंका के कारण तलाक ले लिया था। प्रस्तुत कहानी का एकमात्र नारी-पात्र है मंजरी। स्त्री के स्वभाव में संशय की भावना सहज रहती है। मंजरी के मन की भावना तक अधिक प्रबल हो गयी, जब वह अपने पति विपिन के मेज़ मे एक स्त्री और एक बच्ची की तस्वीर देख लेती है। उस तस्वीर को देखने के बाद उसको ज़रा भी चैन नहीं था। मंजरी का अन्तर्द्वन्द इन शब्दों में प्रकट हुआ है - "सिर थामकर वह घंटों वही बैठी रही थी। फूट-फूटकर रोती रही थी। उसे बराबर लगा रहा था कि जिसे धरती समझकर उसने पैर रखा था, वहाँ शून्य था, कि जैसे वह एकाएक बेसहारा हो गई है। उसे अपने घर की छत और दिवारें

व्यापक परिप्रेक्ष्य निर्माण के लिए विभिन्न भाषाओं के साहित्य के आकलन का काम चाहिए और फिर उनमें अन्विति की तलाश तटस्थ किन्तु दायित्व के साथ होना चाहिए। **शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, केरल विश्वविद्यालय, पालयम्, तिरुवनन्तपुरम**

सब हिलती नज़र आने लगी थी।"[२] यहाँ मंजरी के मन की निस्सहायता, उसकी तीव्र मानसिक पीडा आदि सफल रुप में देख्र सकते हैं।

फिर विपिन से संबन्ध तोडने का निश्चय करते समय भी उसके मन में द्वन्द्व मच गया है। कुछ साल तक अकेले जीवन बिताने के बाद उसने दिलीप से विवाह कर लिया। दिलीप के साथ आरंभिक दिनों में वह बहुत संतुष्ट थी। लेकिन वह सन्तोष भी स्थायी नहीं रहा। अब रात में या दिन में लेटते समय मंजरी को विपिन की याद आने लगी और ये यादें अब पहले की तरह उतनी बुरी नहीं लगती। वह सोचती है कि विपिन ने केवल अपनी जिन्दगी को ही नहीं उसकी जिन्दगी को भी टुकडों में काट दिया है और उसे जीवन भर यह संघर्ष झेलना पडा है। आधुनिक युग में पति-पत्नी सम्बन्धों में काफी परिवर्तन आ गया है। उसके बीच दम घुटनेवाली नारी की मानसिकता का सूक्ष्म विश्लेषण मन्नूजी ने मंजरी के माध्यम से किया है। मंजरी में चरित्र की दृढता है। पति के पराये संबन्ध का पता चलते पर वह उसका साथ छोड देती है और अपना जीवन दूसरी ओर मोड देती है।

"एक बार और" कहानी का प्रमुख्र नारी-पात्र है बिन्नी। कहानी के आरंभ से लेकर अन्त तक मन्नूजी ने बिन्नी के मानसिक द्वन्द्व को शब्दों में बाँधने का प्रयास किया है। बिन्नी को जब मालूम हुआ कि उसके प्रेमी कुंज ने मधु से विवाह कर लिया है तब उसका मन बूरी तरह व्यथित हो गया। बिन्नी अपनी सख्री सुषमा के घर पहूँच पाती है। सुषमा के यहाँ रहते हुए बिन्नी का परिचय नन्दन से हो जाता है। वह चाहती है कि जैसी भी हो वह अपनी जिन्दगी को नया मोड देगी, अपने को कुंज के मोह से मुक्ति करेगी। परन्तु नन्दन की ओर आकृष्ट होने का प्रयत्न करते समय भी कुंज की यादें उसे सताती रहती है। वह पूर्ण रुप से अपने को असमर्थ महसूस करती है। अंत में जब नन्दन भी गुडबाई करके चला जाता है जब वह पूरी तरह मानसिक द्वन्द्व का शिकार बन जाती है। उसका अन्तर्द्वन्द्व चरम सीमा तक पहूँच जाता है। नारी-मन की इसी नाजुक भावना को मन्नूभंडारी ने इस कहानी में बडे रोचक ढंग से पकडा है।

"संख्या के पार" भावना-प्रधान कहानी है इसमें संतान केलिए छिपी ममता का सुन्दर चित्रण किया गया है। इस कहानी का मुख्य नारी पात्र प्रमिला कॉलेज में पढती है। बचपन में उसे पिताजी मर गये। उसे अपनी माता की याद नहीं है। लोग कहते हैं कि विधवा होने के बाद प्रमिला की माँ प्रमिला का नाना-नानी के घर छोड़कर भाग गयी। प्रमिला नाना और नानी के पास रहती है।

फिर एक दिन प्रमिला की माँ घर आती है। प्रमिला के वहाँ पहूँचने पर माँ उसे निहारती रही और सहसा खींचकर सीने से लगा लिया। बाबा वहाँ आये तो प्रमिला झटके से माँ से दूर हो गयी। अचानक माँ ने प्रमिला का सिर छाती से चिपकाकर बालों पर हाथ फेरा और पाँच रुपये का नोट प्रमिला के हाथों में रख्रकर, झटके से बाहर चली थी। प्रमिला को जब होश आया, तब हाथ में पाँच का नोट था और बाबा का माँ को दिया हुआ दस हज़ार का चैक, इस संख्या के परे कुछ शाख्रत बना रहा। पाँच रुपये जैसी छोटी संख्या और दस हज़ार की बडी संख्या इनके परे जो शाश्वत वात्सल्य भाव है, जिसका कोई मूल्य नहीं, ऐसी शाख्रत अमूल्य अनुभूतियो का सूक्ष्म चित्रण लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से किया है। नाना ने दस हज़ार देकर पुत्री से ममत्व दिख्राना चाहा और माँ ने पाँच रुपये देकर अपनी बेटी से वात्सल्य दिख्राना चाहा। लेकिन यह तो एक निर्विवाद सत्य है कि वात्सल्य, ममत्व आदि भावों का मूल्य शाश्वत व अमूल्य अनुभूतियाँ हैं जिनके सामने पैसा कुछ भी नहीं है।

बाँहों का घेरा नारी मन की अतृप्ति और मानसिक द्वन्द्व की कहानी है। इस कहानी की नायीका कम्मो के मन में बचपन से ही यह अदम्य आशा थी कोई उसे बाहों में भरकर प्यार करे। लेकिन कभी भी उसकी यह आशा पूर्ण नहीं हुई। बचपन में माताजी से प्यार नहीं मिला। फिर प्रेमी या बाद में पति के द्वारा भी वह चाह पूर्ण नहीं हुई। पति मित्तल हमेशा अपने व्यवसाय में व्यस्त था। पती की अनुपस्थिति में उसे अपने पूर्व प्रेमी का ध्यान आता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात कहानियों में नारी के ऐसे रुप मिलते हैं जहाँ उसे पत्नी और प्रेमिका दोनों की भूमिका का निर्वाह करना पडा है। विवाह-पूर्व नारी के प्रेमी से सम्बन्ध होने के कारण एक ओर उसे पति की इच्छाओं की पूर्ती करती पडी है तो दूसरी और वह प्रेमी को भी नहीं छोड़ पाती। एक और उसका अतीत है तो दूसरी ओर असका वर्तमान। इस कारण वह द्वन्द्व एवं तनाव का शिकार बन जाती है। इस कहानी में नारी की पत्नी और प्रेमीका की भूमिका में द्वन्द्व एवं तनाव की स्थिति देख्री जा सकती है।

नारी मन का विश्लेषण करनेवाली कहानी है "कमरे, कमरा और कमरे", इस कहानी की नायिका नीलू है। नीलू की अम्मा बीमार रहती है अतएव घर की व्यवस्था नीलू ही संभालती है। नीलू अपने जीवन को भिन्न-भिन्न कमरों नें बनती-बिगडती महसूस करती है। नीलू अपने व्यक्तित्व विकास में उपस्थित बाधाओं के बीच संघर्ष का अनुभव करनेवाली है। एम.ए. प्रथम श्रेणी में वह पास हो गयी, अपने को मुक्ति दिलाने केलिए वह कॉलेज की नैकरी स्वीकार कर दिल्ली चली गयी। लेकिन इन सबके बावजूद उसे एक नयी अपुर्णता का बोध होने लगा।

आख्रिर उस अपूर्णता को पूर्णता में बदलने केलिए उसने श्रीनिवास के साथ संबंध स्थापित किया। वह अपनी नौकरी छोडकर श्रीनीवास के बँगले में पहूँच गयी। अब फिर से उसका जीवन कमरों में बिख्ररने लगा। कॉलेज में रहते वक्त वह बहुत कुछ लिख्रा करती थी। लेकिन अब श्रीनीवास के आफिस के काम में वह इतनी व्यक्त हो गयी कि उसे कुछ लिख्रने का अवसर भी नहीं मिलता था। नीलू अपने व्यक्तित्व को घटते देख्रकर मानसिक संघर्ष का अनुभव करती है। उसकी अपनी अलग पहचान ही मिट गई। अपने 'स्व' की तिलाजली देख्रर, अपने ही व्यक्तित्व को क्षत-विक्षत होते देख्रते रहना नीलू कि विवशता है।

"उँचाई" मन्नूजी की कहानियों में अपना अलग अस्तित्व रख्रनेवाली एक रचना है। नारी और पुरुष से संबन्धित, समाज में स्थित मूल्यों के नया- जीवन-मूल्य स्थापित करने की चेष्टा इस कहानी में मिलती है। शिवानी "उँचाई" कहानी की नायिका है। उसे एक ओर विद्रोहात्मक प्रवृत्ति रख्रनेवाला पात्र कह सकते हैं तो दूसरी और वह तीव्र मानसिक

हिन्दी उपन्यास साहित्य को भीष्म साहनी जी की देन

मंजुषा के.

साठोत्तर हिन्दी उपन्यासकारों में भीष्म साहनी जी अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनका जन्म ८ अगस्त १९१५ को रावलपिण्डी में हुआ। ८८ की अवस्था में ११ जूलाई २००३ को वे भगवान को प्यारे हो जाए।

भीष्म साहनी जी प्रेमचंद परंपरा के सामाजिक चेतना संपन्न प्रगतिशील उपन्यासकार माने जाते हैं। यथार्थ जीवन पर आधारित उनके उपन्यासों में उन्होंने आम आदमी की दुःख दर्द को वाणी दी है। अनुभूत सच्चाइयाँ और आँखों देखे यथार्थ पर खडे होने के कारण पाठक उनके उपन्यासों के दीवाने बने।

भीष्म साहनी के उपन्यासों का सामान्य परिचय

(१) झरोखे (१९६७): अपने प्रथम उपन्यास में लेखक ने अपने बाल्यकाल की अनुभूतियों को वाणी दी है साथ ही अपने समकालीन परिवेश को भी प्रभावपूर्ण ढंग से विकसित किया है। बच्चों के सामने घटनेवाली प्रत्येक घटना का प्रभाव उन पर कैसे पडते है इसकी ओर भी लेखक ने प्रकाश डाला है।

(२) कड़ियाँ (१९७०): परिवारिक विघटन की समस्या को उजागर करनेवाला प्रस्तुत उपन्यास पति पत्नी और प्रेमिका के अंतः संबंधों को लेकर लिखा गया है।

(३) तमस (१९७३): 'तमस' भीष्म साहनी जी का बहुचर्चित उपन्यास है। यह उपन्यास विभाजन और उससे उत्पन्न सांप्रदायिकता को चित्रित करता है। भारत विभाजन की पीड़ा भीष्म साहनी जी ने स्वयं भोगा था। इसी पीड़ा को उन्होंने तमस में वाणी दी है। प्रस्तुत उपन्यास के उद्देश्य पर अपनी दृष्टि से प्रकाश डालते हुए डॉ.चमनलाल जी ने लिखा हैः तमस का उद्देश्य है, हमारे देश की सांप्रदायिक शक्तियों व उसके घिनौते परिणामों का उद्घाटन करना। लेखक यद्यपि रचना, विभाजन पूर्व संदर्भ में रची है लेकिन लेखक और हमारे दुर्भाग्य से इस रचना के संदर्भ विभाजनोपरान्त भारत में भी वैसे ही देखे जा सकते हैं जैसे विभाजन पूर्व में थे।[१]

(४) बसंती (१९८०): निम्नवर्गीय जीवन का अत्यंत यथार्थ अंकन करनेवाला उपन्यास है 'बसंती'। बसंती, 'बसंती' उपन्यास की मुख्य नायिका और उस पीढी या वर्ग की प्रतीक है जो गाँव में ही पैदा होकर रोजगार की तलाश में निकले माँ-बाप के साथ महानगरों के फुटपाथों, पार्कों, खोलियों और झुग्गी-झोपडियों में पलकर बडी होती है। यह उपन्यास नारी जीवन की त्रासदी को भी उजागर करता है।

(४) मय्यादास की माड़ी (१९८८): मय्यादास की माडी एक लंबी कलावधि में फैला हुआ सशक्त उपन्यास है। ब्रिटिश साम्राज्य में कैसे सिख अमलदारी टूटती है, कैसे नए अंग्रेज परस्त जमींदार पैदा होते हैं, कैसे वे जनता के शोषण करते हैं, कैसे इनके स्थान पर महाजनों का आना होता है और फिर कैसे शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाती हुई नई पीढी उभरती है इसका प्रस्तुत उपन्यास में सजीव चित्रण हुआ है।

एस प्लेट सैलाबः नारी विमर्श के सन्दर्भ में...

द्वन्द्व झेलनेवाला पात्र भी है। शिवानी नर-नारी संबन्धों के बीच के परंपरागत नैतिक मूल्यों को अधिक महत्व नहीं देती। इसलिए ही विवाहित और दो बच्चों की माँ होने के बाद भी वह अपने पुराने प्रेमी अतुल से शारीरिक संबन्ध रखने से नहीं हिचकती। पति शिशिर जब संबन्ध तोडने की बात करता है तो शिवानी साधारण स्त्रियों की तरह न रोई, न कटे पेड़ की तरह गिर पडी। उसने केवल इतना ही कहा- "यदि हमारे सम्बन्धों का आधार इतना छिछला है, इतना कमज़ोर है कि एक हल्के से झटके को भी सँभाल नहीं सकता, तो सचमुच उसे टूट ही जाना चाहिए"[२]

यद्यपि शिवानी विद्रोहात्मक विचार रखती है तो भी उसके मन नें काफी द्वन्द्व चलता है। वास्तव में अपने पूर्व प्रेमी का अकेलापन उसके जीवन की रिक्तता आदि को देखकर अपने को इसका उत्तरदायी समझने के कारण ही वह उसके पास गयी थी। उसमें पत्नी और कामिनी रूपों के बीच संघर्ष चलता है। उसके मन में पति को धोख देना का विचार ज़रा भी नहीं है और वह ऐसी नारी भी नहीं। वह पति और प्रेमी के साथ अपना कर्तव्य निभाने केलिए ही प्रयत्नशील थी।

निःसन्देह मन्नू भण्डारी ने हिन्दी साहित्य जगत में कथा, उपन्यास आदि के माध्यम से महिलाओं की पीड़ा, उनके शोषण और उनकी दबी हुई इच्छाओं को बड़े ही सशक्त ढंग से व्यक्त किया है। उनके शक्तिकरण केलिए अपनी रचनाओं में एक-एक शब्द, एक-एक वाक्य से मजबूत दिशा देने की कोशिश की है। नारी जीवन की सभी पहलुओं को देख समझकर ही मन्नूजी ने अपनी रचनाओं में कथात्मक अभिव्यक्ति दी हैं। यद्यपि मन्नू भंडारी की कहानियों में पुरुष एवं नारी पात्रों का चित्रण मिलता है फिर भी नारी पात्रों के चित्रण में ही कहानीकार को विशेष सफलता मिली है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. डॉ. ममता शुक्ला : मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन पृ. ९३.
२. मन्नू भंडारी - एक प्लेट सैलाब - पृ. २३.
३. मन्नू भंडारी - एक प्लेट सैलाब - पृ. १२४.

सहायक ग्रन्थ सूची

१. डॉ. ममता शुक्लाः मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, १९८९.
२. मन्नू भंडारी-एक प्लेट सैलाब राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली - १९६८.

शोध छात्रा, यूनिवार्सिटी लाईब्रेरी, तिरुवनन्तपुरम

'कम्यूनिस्ट कहानी' - एक मूल्यांकन

डॉ. सविता प्रमोद

अमरकान्तजी यथार्थवादी लेखकों में अपना अग्रगण्य स्थान रखते हैं। उनके द्वारा समाज का नग्न चित्रण 'कम्यूनिस्ट' कहानी में हुआ है।

आत्मसमर्पण और खून बहाव के ज़रिए जो आज़ादी प्राप्त हुई है उसका दुरुपयोग हमने कितना, किस प्रकार किया इसे बखूबी अमरकान्तजी ने अपनी कृतियों में व्यक्त किया है। आज हर राजनीतिज्ञ की करनी कुछ कुछ और होती है। इस कहानी के द्वारा कहानीकार ने राजीनीति के टूटते मूल्यों पर करारा व्यंग्य किया है। यह कहानी ठाकुर घराने में जन्मे तीन भाइयों की है जो पिता की मृत्यू के बाद एक दूसरे के शत्रु बन बैठे थे। लेकिन तीनों ठाकुर अपनी निश्चित विचारधाराओं के अनुरूप राजनीतिक कार्य ही करते रहे।

बडा ठाकुर विशाल सिंह अपनी दयालुता, धार्मिकता, और ज्ञान के कारण गाँधीजी कहलाता था। एक चींटी को भी मारने की क्षमता न रखता था। यह उसका ऊपरी चरित्र था जिसतरह हाथी के दाँत दिखावे के अलग और खाने के अलग होते है। भीतर-भीतर वह बिलकुल विपरीत क्रूर, अधार्मिक और अज्ञान था। कामलोलुपता के कारण घर में काम करनेवाली हलवाहे भोलू की पत्नी सुनरी के प्रति आकृष्ट हो जाता है। उसे अपना कमरा साफ करने को बुलाता है और शीघ्र अंदर-बाहर लोगों की अनुपस्थिति निश्चित करता है।

"बडे ठाकुर का हृदय काबू में नहीं था, वह गीता के अनासक्ति योग से हटकर वात्स्यायन के कामसूत्र की ओर लपक रहे थे।"

दूसरों के सम्मुख साफ सुथरा खादी वस्त्र पहनना और अपनी बत्तीसी दिखाते हुए बात कर लोगों को अपने जाल में फँसाना यही तो एक वर्ग राजनीतिज्ञों का लक्ष्य है। 'जनता न जान पाए कि हमारे द्वारा क्या अन्याय हो रहा है' - यही इन गाँधीवादी कहलाने वाले राजनीतिज्ञों का भी एकमात्र ध्येय है। जब सुनरी डर के मारे थर-थर काँपती हुई जाने की विनती करती है तब ठाकुर कहता है-

"कोई देखता थोडे है?"

इनका मान-अभिमान सबाल केवल बाहरी जगत के उजालेपन तक ही निहित है।

छोटे ठाकुर ने भी वही जूते पहन रखे थे जो बडे भाई ने, बस नाम अलग था। सार यह है कि बडा गाँधीवादी तो छोटा समाजवादी।

'वह खद्दर पहनते, तो यह महीन धोती तथा सफेद दूधिया तंजेब और मलमल का कुरता डाटते। वह निरमिष भोजी थे, तो इनके यहाँ हफ्ते-दो हफ्ते पर नियमित रूप से खसी कटता। वह नशाबन्दी के पक्ष में थे, तो यह सिगरेट-पान के शौकीन।'

उनका कहना था -

'जनता अपने नेताओं पर विश्वास करे। एक रोज कल्याणकारी राज्य की स्थापना अवश्वम्भावी है। हम उसी में तो लगे हैं।'

मँझला ठाकुर दोनों भाइयों से कुछ कम न था। वह दोनों भाइयों को ढोंगी और कमीना समझता था। उसने गाँव के नवयुवकों को संगठित किया था और उन्हें बलवान बनने का उपदेश दिया।

उनके अनुसार - 'हिन्दुओं पर चारों ओर से जुल्म हो रहे हैं। धर्म

हिन्दी उपन्यास साहित्य को भीष्म साहनी जी का देन...

(६) कुंतो (१९९३): कुंतो मूलत: कथा नायिका कुंतो और जयदेव के जीवन वृत्त पर आधारित उपन्यास है।

(७) नीलू नीलिमा नीलोफर (२००२): भीष्म साहनी जी का अंतिम अन्याय नीलू नीलिमा नीलोफर भी सांप्रदायिकता की गोद में जन्मा है। नीलिमा और नीलोफर नामक दो सहेलियों के जीवन चरित के द्वारा धर्म मैत्री के भीतर छिपे धर्म विरोध की वर्तमान खतरनाक स्थिति का चित्रण इस उपन्यास में है।

भीष्म साहनी जी के उपन्यासों पर दृष्टिपात करे तो हमें मालूम हो जाते हैं कि उन्होंने प्रेमचन्द जी के समान अपने उपन्यासों में समाज के उपेक्षित और अभावों से त्रस्त पात्रों के चित्र ही अधिक खींचा है। डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा के अनुसार - मानवीय पीडा पूर्ण मुक्ति का बीडा सबसे पहले प्रेमचन्द ने उठाया। उनके बाद की पीढी आज भी उस दायित्व का निर्वाह कर रही है। उपन्यासकार भीष्म साहनी उन्हीं कथाकारों में से एक हैं जिन्होंने मानवीय क्तित्व की संपूर्णता केलिए निरंतर अनेक जोखिमों को उठाया है, और साभ ही संघर्ष भी किया है।(२)

भीष्म साहनी जी उपन्यास सृजन में शिल्प पक्ष पर अधिक ध्यान नहीं दिया है। वे विचार तत्व को अधिक प्रधानता देनेवाला है। उनके उपन्यासों की भाषा सरल और सहज है पर सपाट नहीं।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि भीष्म साहनी जी हिन्दी के अशक्त यथार्थवादी उपन्यासकारों में श्रेष्ठ है। उनके उपन्यास समकालीन युग की संवेदना का सफल अभिव्यंजना है। अनुभूति की प्रमाणिकता, कथ्य की विविधता, शिल्प सौष्ठत की सहजता, व्यापक दृष्टिकोण जैसे गुमों से सपृक्त और समृद्ध उनके उपन्यास समकालीन उपन्यास साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता हैं।

संदर्भ ग्रंथसूचिका:

१. भीष्म साहनी व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डॉ.भारत कुचेकर - पृ.५१-५२

२. हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष - सं.डा.रामदरश मिश्र - पृ.३७९

हिन्दी विभाग, केरल वि.वि. कार्यवट्टम कैंपस

समकालीन कविता के प्रमुख हस्ताक्षर- मंगलेश डबराल

डॉ.बिनु पयट्टुविला

समकालीन शब्द का अर्थ है - वर्तमान समय का। हर एक कवि अपने समय का समकालीन होता है। समकालीन कविता अपने युग, देश और समाज से जुडा है। यहां कवि वर्तमान में रहते हुए अतीत और भविष्य की ओर चला जाता है। वे अपने काल की समस्याओं और चुनौतियों का मुकाबला करते हैं।

समकालीन कविता के विकास में मंगलेश डबराल का योगदान विशेष महत्वपूर्ण माना जाता है। उनका संपूर्ण काव्य साहित्य मानव-जीवन की बुनियाद पर खड़ा है। उनकी जीवनी व्यक्तित्व एवं कृतित्व सब में काव्य एक अभिन्न तत्व के रूप मे उपस्थित होता है।

मंगलेश डबराल की कविताएँ शताब्दी-नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। मंगलेश जो भी काम करते थे बडी मेहनत और लगन के साथ करते थे। इसके बारे में मंगलेश कहते हैं - "मैं ने यही से काम सीखा, बहुत काम किया, यदि परिश्रम नहीं करेंगे तो नमक का एक दाना भी नहीं मिलता।"[१] वे कुछ समय तक पूर्वाग्रह के सहायक संपादक तथा अमृत प्रभाव के संपादक रहे। मंगलेश संगीत प्रेमी व्यक्ति थे। उनकी कविताएँ संगीत के गुणों से भरपूर हैं।

मंगलेश डबराल एक सफल पत्रकार हैं। कवि और पत्रकार दोनों उनके व्यक्तित्व के साथ इस तरह जुड गए हैं कि उन्हें अलगाव करके समग्र मूल्यांकन असंभव है। पत्रकार और संपादक के रूप में मंगलेश की मुख्य अभिलाषा यही है कि "साहित्यिको सामाजिक मूल्यों से जोड़कर पत्रकारिता को कैसे अधिकाधिक सर्जनात्मक और प्रासंगिक बनाए जाए।"[२] एक सक्षम पत्रकार के रूप में उन्होंने हिन्दी पत्रकारिता को पूर्णता, गंभीरता, गरिमा और ओज प्रदान किया है। मंगलेश डबराल कवि के रूप में सन् १९८१ में परिचित हुए। उनका पहला काव्य-संग्रह 'पहाड पर लालटेन' बहुचर्चित हुआ। उन्होंने वर्तमान समाज में व्याप्त विसंगतियों को उजागर करने केलिए कविताओं का माध्यम चुना। उनकी प्रमुख रचनाएँ हैः

'कम्यूनिस्ट कहानी' - एक मूल्यांकन...

पर चारों ओर से हमले हो रहे हैं। सत्य और अहिंसा की बात करने वाले ढोंगी और कमीने हैं। वास्तविक किसान मज़दूर राज्य की स्थापना करना चाहते हैं और इसके लिए ज़रूरी है कि भारत में हिन्दू राज्य की स्थापना की जाए।'

नारा लगाना और उपदेश देना कितना आसान होता है लेकिन उसे जीवन में अपनाना कितना विरोधाभास-सा लगता है।

जब सुनरी का पति भोलू अपनी पत्नी पर हुए जुल्म के बारे में पूछने विशालसिंह के यहाँ आता है तो वह अपमान के भय से उल्टे भोलू पर चिल्लाता है इतने में मँझला वहाँ पहुँचकर उसे ज़मीन पर पटक देता है और लात जमाता है। न जाने पल भर में इनके आदर्श कहाँ लुप्त हो जाते है। छोटा इनसे अलग न था बिना कारण जाने ही भोलू पर टूट पड़ता है। इतना ही नहीं रास्ते से गुजरते पंडितजी ने जब कारण पूछा तो बिना किसी हिचक झट से कारण गढ़ता है, और अंत में कहता है-

'यह साला कम्यूनिस्ट हो गया है। मैं अभी इसे पुलिस के सुपुर्द करता हूँ....।'

इस कहानी की मुख्य धारा राजनीति पर करारा व्यंग्य ही है। इसके साथ ही साथ समाज व्यवस्था का भी स्पष्ट और सटीक चित्रण हुआ है। समय का चक्र सदा गतिशील है - यहां कई तरह के आंदोलन हुए लेकिन समाज की व्यवस्था कहाँ तक बदली यह विचारणीय है। प्रेमचंद की कहानियों को पढ़कर जो समाज का चित्रण दिखाई देता है वही आज की कहानियों को पढ़कर भी। केवल अंतर है कि बस तौर-तरीके बदले है, परिस्थिति में कुछ बदलाव आया है। पहले जहाँ नीच जात और धनहीन पर अन्याय और अत्याचार होता था आज भी धनहीन लोगों की दशा कुछ बदली नहीं है। पुलिस भी तो धनवानो की ही सुनती है। यह मान्य है कि धन के सहारे कुछ भी डुबाया जा सकता है।

भोलू जब विशाल सिंह से टक्कर लेता है तो उसकी आवाज़ निकल नहीं पाती। पल भर में जग के सम्मुख वह निःशब्द कर दिया जाता है। उलटा चोर कोतवाल को डाँटे वाली प्रवृत्ति दिखती है अंत में भोलू को पुलिस के हवाले करवाने की बात छिडती है।

धर्म का ढोंग रचने वाले, अपने को दूसरों से इस नाम पर अलग बताने वाले, अपने काम-वासना की तृप्ति मात्र के लिए इस पर विश्वास नहीं करते। वहाँ किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रह जाता। आयु, धन, जाति आदि समस्या के रूप में खडी नहीं हो पाती है। स्त्री को मात्र काम वस्तु मान उपयोग कर फेंकने की प्रवृत्ति आज भी दीख पडती है।

आज अपनी स्थिति और अपने अधिकारों का ज्ञान सबको है।

भोलू ठाकुर को याद दिलाता है -

'तुम्हारा खाते हैं तो छाती फाड़कर काम भी करते हैं। जन्म भर की गुलामी तो नहीं लिखा ली है? आखिर हमारी भी इज़्जत-आबरू है...।'

लेखक ने यह खुलकर स्वीकार किया है कि आज हर किस्म का व्यक्ति यथार्थ स्थिति से परिचित है। लेकिन सामाजिक व्यवस्था में बदलाव नहीं आ पा रहा कारण एक वर्ग आज भी केवल शोषण करने और जेब भरने में लगे हुए हैं। अपने और अपने परिवार वालों की चिन्ता से परे उनकी आँखों के समक्ष कुछ नहीं दिखता। उलटे उँगली उठाने वालों की जड़ उखाड़ फेंकने में तुले है। नेताहीन समाज में यथार्थ का स्वाद चखने की हिम्मत आज किसी में नहीं है। **डी.बी.पम्पा कालेज**

राजेन्द्र परदेसी की कहानियाँ
वर्तमान समाज का आईना

ओमप्रकाश कादयान

राजेन्द्र परदेसी भारत के उन अग्रणी साहित्यकारों में से एक हैं जो पत्र-पत्रिकाओं में निरन्तर छपत रहते हैं। उन द्वारा लिये गये वरिष्ठ साहित्यकारों के साक्षात्कार हों या कविताएं, कहानियां, हाइकू, लघुकथाएं या अन्य विधाओं की रचनाएं, अवसर पत्रिकाओं या समाचार पत्रों में छपते रहते हैं। ये एक अच्छे कलाकार भी हैं। शायद ही कोई स्तरीय पत्रिका या पत्रिकाओं के विशेषांक हो जिनमें इनके रेखांकन न छपे हों। यायावार प्रवृत्ति वाले 'परदेसी' स्वभाव से जितने शालीन व्यवहारिक, मृदुभाषी व सहयोगी हैं, कर्म से भी उतने ही। इनकी करनी व कथनी में अनतर नहीं है। इसलिए इनके आन्तरिक गुण इनके साहित्य में भी झलकते हैं। सदा दूसरों का ख्याल रखने वाले साहित्यकार राजेन्द्र परदेसी की विभिन्न विधाओं-कहानी, कविता, साक्षात्कार, हाइकू, लघुकथा, निबन्ध आदि पर आठ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं तथा हजारों रेखांकन छप चुके हैं।

देश की अनेक सरकारी, गैर सरकारी साहित्यिक व सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्मानित हो चुके राजेन्द्र परदेसी की कहानी 'सांचि परितिया हमार' पर भोजपुरी फिल्म भी बन चुकी है। राजेन्द्र परदेसी एक संवेदनशील लेखक हैं तथा समाज व अपने लेखकीय धर्म के प्रति सजग रहते हैं। इसलिए समाज की छोटी-छोटी घटनाएं भी उन्हें प्रभावित करती हैं और इनके अन्दर का लेखक कलम उठाकर उन घटनाओं को कहानी का रूप दे देता है। इनकी चेतना गहरी है तथा ये यथार्थ का चित्रण करने में सक्षम हैं। ये विसंगतियों और सामाजिक कुसंस्कारों का चित्रण भी करते हैं। इनकी कहानियों में शहर की घुटन, व्यवस्ताओं, स्वार्थ परायणता के साथ-साथ गांव की जमीन, उनके विखण्डित होते मूल्यों तथा बदलते परिवेश का सजीव चित्रण है। इनकी कहानियां राजनीति, समाज व दफ्तरों में फैला भ्रष्टाचार, कुव्यवस्था, अनैतिकता की पोल खोलती हैं। कहानियों में समाज का हर तबका अपनी-अपनी समस्याओं से जूझता नज़र आता है। लेखक न समाज की कड़वी सच्चाईयों के साथ दार्शनित अवधारणाओं मिथकों सांस्कृतिक

समकालीन कविता के प्रमुख हस्ताक्षर-मंगलेश डबराल...

१. पहाड पर लालटेन - कविता संग्रह - १३८१
२. घर का रास्ता - कविता संग्रह - १३८८
३. हम जो देखते हैं - कविता संग्रह - १९९५
४. अवाज़ भी एक जगह है - कविता संग्रह - २०००
५. एक बार आयोबा - गद्यरचना - १९९६
६. लेखक की रोटी - गद्यरचना - १९९७

(१) पहाड पर लालटेन: 'पहाड पर लालटेन' मंगलेश का प्रथम कविता संग्रह है। इसमें जीवन के अंतर्विरोधों को सामने लाते हैं। इसमें जीवन को भार समझने की मानसिकता, भूख, उदासी-बाढ, अकाल जैसी प्राकृतिक आपदा के बीच जैसे-जैसे मुँह बिना खोले जीने-जाने की दास मनोवृत्ति की आलोचना की गयी है।

(२) घर का रास्ता: इसमें प्रेम को विषय बनाया गया है। इसमें 'प्रेम', 'प्रेमीजन', 'प्रेम-सफलता' की कुँजी ऐसी कविताएँ है। मंगलेश प्रेम-विहीन निर्मम संसार के खिलाफ सख्त विरोध प्रकट करते हैं।

(३) हम जो देखते हैं: इस कविता संग्रह की कविताएँ मंगलेश ने उस दौर में लिखी, जिसमें उत्तर आधुनिकतावाद भारतीय संस्कृति में एक उथल-पुथल की तरह प्रवेश हुआ। इसमें राजनीति की विडम्बनाओं एवं वामपंथ की सिद्धान्तों की आलोचना मिलती है। साथ-ही-साथ प्रवास जीवन का अनुभव भी व्यक्त हुआ है।

(४) आवाज़ भी एक जगह है: इसमें संगीत को विषय बनाकर लिखी गयी अनेक कविताएँ है। इसमें सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य उजागर हुआ है।

(५) एक बार आयोबा: एक बार आयोबा मंगलेश की प्रथम गद्य रचना है। इसमें अमेरिका के बारे में, उसके दैनिक जीवन, सांस्कृतिक और सामाजिक वातावरण के बारे में कुछ प्रामाणिक रचनाएँ भी होती है। यह यात्रावृत्तान्त एक रोचक विश्लेषणात्मक एवं ज्ञानवर्द्धक यात्रा-वर्णन है।

(६) लेखक की रोटी: यह मंगलेश का आलोचनात्मक गद्य-लेखन है। इसमें कवि शमशेर तथा रघुवीर सहाय दोनों पर मंगलेश ने लिखा है। साथ ही साथ अज्ञेय के योगदान के बारे में कहा है। लेखक की रोटी में लेखकों की समस्याओं पर बडे शान्त और तर्कसम्मत सोच मिलते हैं। मंगलेश डबराल पिछले पच्चीस वर्षों से उभरकर आयी हिन्दी कविता के प्रतिनिधी हस्ताक्षरों में से एक है। मंगलेश अपनी कविताओं में शोषक तथा शोषितों का चित्र खींचते हैं और एक नई संस्कृति का निर्माण करना चाहते हैं। मंगलेश वर्तमान शोषण मूलक व्यवस्था के खिलाफ आक्रोश नफरत और उसे पलटकर एक नई मानवीय व्यवस्था का निर्माण करना चाहते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ:

१. समकालीन कविता -एक विश्लेषण - आशोकसिंह
२. पहाड पर लालटेन - मंगलेश डबराल
३. हम जो देखते हैं - मंगलेश डबराल
४. आवाज़ भी एक जगह है - मंगलेश डबराल
५. लेखक की रोटी - मंगलेश डबराल
६. समकालीन प्रतिनिधी कवि - अनंत कीर्ति तिवारी
पत्रिका, दैनिक भास्कर

पुलरी, पुलियूरकोणम, पयट्टुविला पी.ओ.

कविता

जीवन धारा

रमा उण्णित्तान

बहती है...
निरन्तर बहती रहती है...
जीवन की धारा वहती है।

कभी अबड़-खाबड़ पत्थरो पर टक्कराकर,
कभी पठान समतल पर मन्द्र-मन्द्र होकर,
शत-दिन दिन व दिन,
निरन्तर बहती रहती है,
जीवन की बारा बहती है।

कभी मलिन होती है, कभी पवित्र,
निर्भय निराश न होकर
जीवन की धारा बहती है।।

न मिला नहीं सहारा,
न मिला कही मदद,
फिर भी,
निर्भय निराश न होकर,
बहती रहती है
जीवन की धारा बहती है।

रुकती कहीं पता नहीं,
टिकती कहीं पता नहीं,
शरुआत कहाँ पता नहीं,
अन्त होगा कहाँ पता नहीं,
बहती रहती यह धारा,
न सूखना, लक्ष्य तक पहुँचना।
तब तक बहना।

बहती रहो वहती रहो...
जीवन की धारा बहती रहो...
न रुका, न सूखो
बहती रहो... बहती रहो...

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य बने (१०८)

नाम : **शालिनी जी.एस.**

पता : श्री शैलम,
हाउस नंबर-१७,
प्रियदर्शिनी नगर,
पेरुरक्कडा पी.ओ.,
तिरुवनन्तपुरम-६९५००५

शैक्षित योग्यताएँ : एम.ए., एम.फिल., बी.एड.

संप्रति : शोध छात्रा,
यूनिवर्सिटी लाईब्रेरी, तिरुवनन्तपुरम

निदेशक : डॉ.के. सुकुमारन

पति : डॉ. श्रीराज वी.एस.

प्रतीकों के साथ अपने समय का खूब सामंजस्य बिठाया है। नैतिक व सांस्कृतिक विघटन, मूल्यहीनता, मनुष्य का मनुष्य के प्रति बढ़ता दुर्व्यवहार, छल-कपट, धन हमोह में होते अत्याचार अपनों में बढ़ती दूरी, सत्ता का बेथाह मोह समाज को किस तरफ ले जा रहा है, इन सभी की चिन्ता व चिन्तन इनकी कहानियों में है। कहानियों में आम आदमी का रोटी व अपने हक के लिए संघर्ष है। रचनात्मकता, नामकरण की सार्थकता, कलात्मकता की दृष्टि से स्तरीय कहानियां हैं तथा ये अपने समय के समाज का आईना है।

परदेसी जी ने स्वयं अपनी कहानियों के बारे में कहा है, "जीवन संघर्ष में किसी का कुछ पल का साथ ही आत्मविश्वास को बढ़ा देता है। अपने आसपास के लोगों के बीच उनके साथ होने का आभास देना ही मेरी कहानियों का मूल स्वर है। स्वर की सत्यता यथार्थ में भी परिलक्षित हो, मेरी कहानी सृजन की यात्रा इसी ध्येय के साथ चल रही है। लेखनी जितनी दूर तक जा सकेगी, वही नियति द्वारा निर्दारित उपलब्धि होगी। इसी स्वीकृति के साथ अपनी भावनाओं को सतत व्यक्त करना मेरा लक्ष्य बन रहेगा।"

यहां हम चर्चा करते हैं परदेसी की कुछ कहानियों की-

'दूर होते रिश्ते' कहानी में कथाकार ने बताया है कि रोजी-रोटी की तलाश में मनुष्य कभी-कभार इतना व्यस्त व स्वार्थी हो जाता है कि अपनों के बीच रिश्तों में दूरियां बढ़ती जाती हैं और धीरे-धीरे रिश्ते हमसे इतने दूर हो जाते हैं कि रिश्ते, रिश्ते नहीं रहते। इस कहानी के मुख्य नायक 'दशरथ' भोला-भाला, किन्तु व्यवहारिक किसान है। जब उसके लड़के 'राम' को शहर में नौकरी मिल जाती है तो वह बड़ा खुश होता है। यह सूचना और प्रसाद पूरे सांव में जगह-जगह लोगों को देता है। वह श्वाब देखने लग जाता है कि जीवन में ढेर सारी तकलीफें सहनकर राम को पढ़ाना काम आया तथा अब घर की स्थिति सुधरेगी। खेत जोतने के लिए दूसरा बैल उधार मांगने की जरूरत नहीं पड़ेगी। वह दूसरा बैल भी ले आएगा तथा अकेला खेत जोत लेगा। एक-एक बीघा करके कुछ बीघे जमीन और खरीद लेगें। दशरथ 'ख्याली पुलाव' पकाते रहे, किन्तु कुछ दिन बाद 'राम' अपनी पत्नी को भी शहर ले जाता है तथा वहीं रहने लगता है। बहु-बेटा और बूढ़े मां-बाप अलग हो जाते हैं। रिश्ते दूर होते चले गये। दशरथ एक बैल से खेद जोतता रहा।

'मोहभंग' कहानी का कथानक भी 'दूर होते रिश्ते' की तरह है। दशरथ अपने बेटे को पढ़ा लिखाकर विदेश भेजने के लिए अपनी जमीन तक बेच देता है, किन्तु लड़का प्रकाश जैसे ही पढ़-लिखकर अधिकारी बनता है, माँ-बाप को भूल जाता है। माँ-बाप रह जाते हैं तनहा, उपेक्षित और तंगहाल।

'वह' एक मार्मिक कहानी है साथ ही हमारे समाज की व्यवस्था की पोल खोलती है। वह व्यवस्था, जहां मनुष्य केवल अपना ख्याल रखता है, दूसरों का नहीं। ये वो समाज है जहां आर्थिक तंगी वाले अच्छे खासे आदमी को पागल समझ लिया जाता है। कहानी का मुख्य पात्र 'पागल' और 'मुरगी चोर' कहे जाने वाला एक भिखारी है। बच्चे उसके पीछे मुरगी चोर कह पीछे पड़ जाते हैं। शेष लोग उसे पागल समझ कर दूर से ही निकल जाते हैं। लेखक ने उसकी पीड़ा को समझा और उससे बातें की, उसे पानी, खाना दिया। उस भिखारी से बातें होने पर पता चला कि वह पागर नहीं, मात्र परिस्थितियों का मारा हुआ है। गरीबी से भिखारी बना इन्सान है और कुछ नहीं, जिसे लोगों ने पागल घोषित कर दिया। पता नहीं इस तरह की कितनी घटाएं हैं जो सिर्फ हमारे समाज में फैली कुव्यवस्था और स्वार्थ के दुश्परिणामों को उजगार करती है। (शेष अगले अंक में)

स्वामी विवेकानंद: सच्चे देशभक्त

प्रो.डॉ.पंडित बन्ने

१२ जनवरी, २०१३ को स्वामी विवेकानंद की १५० वीं जयंती मनाई जा रही है। भारत की गौरवशाली परंपरा एवं संस्कृति के सच्चे संवाहक स्वामी जी का जन्म १८६३ में कोलकत्ता के निकट बेलूर मठ में हुआ था। युवा संन्यासी और युवा हृदय सम्राट स्वामी विवेकानंद ने युवाओं का आह्वान किया था - गीता पढ़ने की बजाय फूटबॉल खेलो। रवीन्द्रनाथ डैगोर स्वामी जो के संबंध में कहते हैं - "अगर भारत को जानना है तो विवेकानंद को पढ़िए। युगदृष्टा स्वामी विवेकानंद का उद्घोष था - उठो, जागो और तब तक मत रुको, जब तक लक्ष्य को न प्राप्त कर लो. स्वामी जी वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपने जीवन में बहुत महत्व देते थे। स्वयं ही विज्ञान का अध्ययन करने वाले स्वामी जी पश्चिमी विद्वानों से कहते थे - "हमें आपसे धर्म की नहीं विज्ञान और टेक्नोलॉजी की शिक्षा की आवश्यकता है। वे शिक्षा और ज्ञान को समाज के उत्थान की कुँजी मानते हो।

स्वामी जी लगभग सारे भारत की यात्रा कर चुके थे। इस यात्रा में उन्होंने राष्ट्र के सामने मातृभूमि के उत्थान का मार्ग रखा। इन्होंने भारतवासियों के सामने उनकी महान संस्कृति व धर्म के उज्ज्वल सिद्धांतों को खोलकर रखा। इन्होंने यह घोषणा की कि भारत के राष्ट्रवाद का महल प्राचीन महानता की नींव पर रखना होगा। भविष्य का महान भारत बनाने के लिए हमें भारत के भूतकाल में डुबकी लगाकर कुछ छिपे हुए रत्न खोज निकालने होंगे। उन्होंने कहा कि समाज एक-एक व्यक्ति से मिलकर बनता है। इसलिए एक-एक व्यक्ति का शुद्ध चरित्रवान व साहसी होना सारे समाज के लिए आवश्यक है। विदेशों में भारतीय संस्कृति, धर्म, अध्यात्म एवं परंपरा का ध्वज फहराने वाले स्वामी जी ने १८९३ में जब प्रसिद्ध शिकागो विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लिया तो उनके महज एक वाक्यांश से मानो समूचा अमेरिका उनका मुरीद बन गया। उन्होंने अमीरिका के मेरे भाइयों और बहनों से अपने संबोधन की शुरुआत ही की सारा सभागार तालियों से गुँज उठा।

संस्कृत, हिन्दी, बांग्ला के अलावे अँग्रेजी और फ्रेंच बोलने में भी सिद्धहस्त बहुभाषी विद् स्वामीजी ने कई विशिष्ट ग्रंथों की भी रचना की थी. रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी जी गौतम बुद्ध को अपना आदर्श मानते थे। परंपरा और आधुनिकता दोनों को साधकर चलनेवाले स्वामीजी के बारे में पं. नेहरु ने लिखा है - वे एक तरह से प्राचीन और वर्तमान भारत के बीच की कड़ी थे। भारत में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी। मजदूर, किसान और मोहनतकश लोगों के लिए उन्होंने दरिद्रनारायण शब्द गढ़ा और कहा कि ये लोग ही समाज की रीढ़ है इसलिए ये ईश्वर का रूप है। श्रम की महिमा को वे गहराई से समझते थे। देशवासियों के सम्मुख बड़े स्पष्ट शब्दों में उन्होंने कहा - "आनेवाले पचास वर्षो के लिए यह जन्मभूमी ही तुम्हारी आराध्य देवी बन जाए। इस समय तक अन्य देवी-देवताओं को दिमाग से निकाल दो। अपना ध्यान इसी एक ईश्वर की ओर लगाओ। देश को जगाओं, जाति को जगाओं और इसी में उस परम ब्रह्म को देखो सबसे पहले ईश्वर के इस विराटस्वरुप समाज की पूजा को जिसे तुम चारों ओर देख रहे हो। उनका देहावसान ४ जूलाई, १९०२ को हुआ।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, भारत महाविद्यालय,
जेऊर, तह-करमाया, जि.सोलपुर(महाराष्ट्रा)

समीक्षा

आओ चलो सैर करें

श्रीमती रजनी सिंह

मूल्य 200.00 प्राप्तिस्थलः रजी प्रकाशन, रजनीविला. डिमोई-२०२ ३९३. फोनः ९४१२६५३९८०

प्रख्यात कवयित्री श्रीमती रजनी सिंह जी का नवीन याने ग्यारवाँ ग्रंथ है **"आओ चलो सैर करें"।** यह ग्रंथ उनका कविता संकलन नहीं है, प्रत्युत उनका यात्रा-विवरण ग्रंथ है। इस पुस्तक के माध्यम से कवयित्री ने विभिन्न देशों के नगरों तथा विदेशों की सैर का वर्णन किया है। कवयित्री होने के बड़पन का सुन्दर चित्र यह ग्रंथ प्रस्तुत करता है। जापान (टोकियो), अमेरिका, इटली, दक्षिण आफ्रिका, दुवई, आस्ट्रेलिया, सिक्किम, ले-लद्दाख, खजुराहो-साँची, गंगोत्री-यमुनोत्री इन देशों की यात्रा का वर्णन अत्यंत आकर्षक रीति से प्रस्तुत किया है. वहाँ-वहां के प्राकृतिक विवरण, याने दर्शन करने योग्य अद्भुत विवरण पाठकों को प्रदान करती है। दर्जनों काव्य ग्रंथों द्वारा मनुष्य मन को हठात् उद्बुद्ध कर चुकी है महाकवयित्री श्रीमती रजनी सिंह जी। इस ग्रंथ में उन्होंने यात्रावर्णन के अनेक पहलुओं की ओर आकर्षित होकर तदनुसार अपने प्रतिपादन में आकर्षण ला कर सकी हैं।

हाल में २०१३ में रजनी सिंह जी तिरुवनन्तपुरम वाली केरल हिन्दी साहित्यश्री के ३२वें वार्षिक समारोह में पधारी थीं और अकादमी का श्री मूकांबिका पुरस्कार से वे अलंकृत थी जा चुकी है। हम अकादमी के प्रवर्तक उनसे उऋण नहीं हो सकते। प्रस्तुत ग्रंथ संसार के पाठक अपनायेंगे यही अकादमी की शुभ कामना है।

श्री अक्षरगीता

(चौदहवां अध्याय)

डॉ.वीरेन्द्रशर्मा, डी-११३, इला अपार्टमेंट्स,
बी-७, बसुंधरा एन्कलेव, दिल्ली-९६

श्रीभगवान बोले-

पुनः कहूँगा परम ज्ञान मैं
ज्ञानों में अति उत्तम को
परमसिद्धि पा गए सभी मुनि
हो भवमुक्त जान जिसको।

जो मेरा साधर्म्य पा गए
इसी ज्ञान का ले आश्रय
जन्म न लेते महासर्ग में
व्याकुल करती नहीं प्रलय।

मेरी योनि प्रकृतिरूपा है
जिसमें गर्भ धरा करता
सभी प्राणियों का ही जिससे
अर्जुन, है उद्‌भव होता।

समुद्‌भूत तन जितने भी हैं
अर्जुन, सर्वयोनि में ही
जननी उनकी मूल प्रकृति है
पिता बीजप्रद हूं मैं ही।

रज तम सत्व तीन गुण जानो
प्रकृतिजन्य इन तीनों को
पार्थ सभी बांधा करते वे
तन में अव्यय देही को।

निर्विकार गुण सत्व प्रकाशक
उन सब में निर्मल होता
ज्ञान तथा सुख की संगति से
अनघ, वही बांधा करता।
काम तथा आसक्ति जन्य जो
रागरूप गुण रज जानो
कर्म संग से बांधा करता
पार्थ वही ऐसा मानो।

जानी तुम अज्ञान जन्य तम
अर्जुन मोहे जो सबको
निद्रा आलस तथा भ्रांन्ति से
बांधा करता है सबको।

सुख में सत्व, कर्म में गुण रज
लगा, विजित जन को करता
आवृत्त करके ज्ञान, पार्थ, तम
जन में आलस भर देता।

रज तम दबा सत्व बढ़ता है
दबा सत्व तम, रज बढ़ता
दबा सत्व रज पार्थ तथा है
वैसे ही हैं तम बढ़ता।

इस शरीर में सब द्वारों को
आलोकित जब जब जानो
ज्ञान तथा विद्या से तब तब
बढ़ा सत्वगुण यह मानो।

होता लोभ, प्रवृत्ति होती है
कर्मारम्भ तथा होता
चंचलता लालसा पनपती
अर्जुन, जब रज बढ़ जाता।

तम के बढ़ जाने पर अर्जुन
मोहवृत्ति बढ़ जाती है
अप्रकाश हो जाता एवं
अप्रवृत्ति हो जाती है।

सत्ववृद्धि होने पर प्राणी
देहत्याग है जब करता
उत्तमवेत्ताओं के निर्मल
लोकों को है वह पाता।

रजोवृद्धि में लीन हुआ जन
मानवयोनि जन्म लेता
तमोवृद्धि में देह त्यागकर
मूढ़योनियां है पाता।

श्रेष्ठ कर्म का कहा गया है
होता सात्विक फल निर्मल
राजस का फल होता दुःख है
वृत्ति मूढ़ता तामस-फल।

ज्ञान सत्वगुण से होता है
होता लोभ रजोगुण से
मोह प्रमाद मूढ़ता एवं
होते सभी तमोगुण से।

सत्वगुणी जाते हैं ऊपर
मध्य लोक में राजस हैं
नित्य तमोगुण वृत्ति लीन जन
पाते सभी अधोगति हैं।

नहीं गुणों से अन्य किसी में
दृष्टा, देखे कर्तृ-स्वरूप
गुण से परे तत्त्व जाने जब
पा लेता वह मेरा रूप।

उल्लंघन कर तीन गुणों का
देह सृजन जिससे होता
जन्म मृत्यू वृद्धत्व व्याधि से
मुक्त पुरुष अमृत पाता।

अर्जुन बोले-

त्रिगुणातीत पुरुष के लक्षण
होते हैं क्या है भगवन!
क्या आचार तथा कैसे हो
गुण तीनों का उल्लंघन।

श्रीभगवान बोले-

जब प्रकाश एवं प्रवृत्ति भी
मोह प्रवृत्त अर्जुन होते
द्वेष न करता, तथा न इच्छा
जब निवृत्त वे हो जाते।

उदासीन की भांति अवस्थित
विचलित नहीं गुणों से हो
गुण ही गुण व्यवहार कर रहे-
भावस्थित जो अविचल हो।

लोष्ट, उपल, कंचन में सम जो
स्वस्थ भाव सुख दुःख में हो
अपनी निंदा स्तुति में सम
तुल्य शुभाशुभ जिसको हो।

मान तथा अपमान जिसे सम
मित्र शत्रु हों सम जिसको
कर्मारम्भ-परित्यागी जो
गुणातीत कहते उसको।

पूर्ण समर्पण भक्तियोग से
करता जो मेरा पूजन
गुण तीनों का उल्लंघन कर
होता ब्रह्मप्राप्ति-भाजन।

अव्यय एवं अमृत की मैं
निश्चय ब्रह्म प्रतिष्ठा हूँ
आश्रय धर्म सनातन का हूँ
ऐकान्तिक सुख का भी हूँ। ●

वर्ष नव। हर्ष नव।

डॉ.रामसनेहीलाल शर्मा यायावर,
डी.लिट.एसो.प्रोफसर, शोध एवंस्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,
एस.आर.कॅे.(पी.जी.) कॉलेज, फरोजाबाद-२८३२०३

मौला मन को विमल कर, दे सात्विक उत्कर्ष।
कोई बेटी दामिनी, बने नहीं इस वर्ष।।

सत्ता को कुछ शर्म दे, व्यथित मनुज को हर्ष।
महंगाई को दे दया, मौला तू इस वर्ष।।

नव संवत् में प्रीति का, पंथ रहे निर्बन्ध।
शिशु की उजली हंसी पर, लगे नहीं प्रतिबन्ध।।

कटे कुल्हाज़ी से नहीं, छैया बाला नीम।
मर्यादा में मुक्ति हो, मुक्ति न रहे असीम।।

नये वर्ष में सत्य हो, शिवसंयुत अविकार।
सुन्दर के संयोग से, सर्जन ले आकार।।

कुष्ठा क्लेश, लुष रहें, नये वर्ष में दूर।
असन, वसन, निवसन रहे, जन-जन को भरपूर।।

उनके सपनों को मिल, सोने बाला ताज।
किन्तु हमें मिलती रहे, रोटी, चटनी व्याज।।

मौत सुनौती दे भला, शोक मिले या हर्ष।
झुके नहीं पर कलम का, स्वाभिमान इस वर्ष।।

पायें कभी न वेदना, संकल्पित संघर्ष।।
निर्मल हो मन-चेतना, हे प्रभु! पूरे वर्ष।।

बिकने को ना विवश हो, नवघट का विश्वास।
धूर्त मॉल अब खेत को, रचे नहीं संत्रास।।

नव संवत् में बढ़ चलें, अब विकास का तंत्र।
प्राण, बुद्धि, मन हों विमल, सासें रहें स्वतंत्र।। ●

कविता

स्वामी विवेकानन्द

श्रीमती आर. राजपुष्पम

भारत माँ के बीर सपूत हैं
नवोत्थान नायक स्वामी विवेकानंद जी
जिन्होंने अपनी धार्मिक भावना एवं
तपस्या निरत जीवन से सबको
समझा दिया आत्म ज्योति का महत्व
शिकागो में अपने उज्ज्वल भाषणों से
प्रभावित कर दिया अंग्रेज़ी सत्ता को
सबों ने हाँ में हाँ मिलाया सामोद
पुण्य पावन धार्मिक चेतना शक्ति को
यौवन काल के युवशक्ति को स्फुटकर
मानवीयता की दीप शिखा बनायी
दुनिया भर घूम देशाटन से भरपुर
सत्य की खोज में घोर तपस्या की
दक्षिण के कन्याकुमारी प्रांत की
सागर-शिला पर जो दीप स्तंभसा
तीर्थाटकों को ज्ञान प्रकाश दे देकर
ज्योतिपुंज बन खडा है 'विवेकानंद रौक'
पुण्य पुरुष की पावन स्मृति पर अर्पित है 'श्रृद्धांजलि'

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य़ बने (१०७)९

नाम : **मंजुषा के.**

पता : टी.सी.२८/९६०(१), रंग,
श्रीकण्डेश्वरम,
फोर्ट पी.ओ.,
तिरुवनन्तपुरम-६९५०२३
Mob: 9497273979

शिक्षा : पी.एच.डी., हिन्दी एम.फिल., एम.ए.(हिन्दी)

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य़ बने (१०८)

नाम : **शालिनी जी.एस.**

पता : श्री शैलम, हाउस नंबर-१७,
प्रियदर्शिनी नगर,
पेरूरक्कडा पी.ओ.,
तिरुवनन्तपुरम-६९५००५

शैक्षित योग्यताएँ : एम.ए., एम.फिल., बी.एड.

संप्रति : शोध छात्रा, यूनिवर्सिटी लाईब्रेरी, तिरुवनन्तपुरम

निदेशक : डॉ.के. सुकुमारन

पति : डॉ. श्रीराज वी.एस.

ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य़ बने (११०)

नाम : **राजलक्ष्मी वी.ए.**

पता : टी.सी.६/६३०, मलमारकुषिविला वीडु, वट्टियूरकाव पी.ओ., तिरुवनन्तपुरम ६९५०१३
फोन: ८२८१०१८४३४

संप्रति : शोध छात्रा, एम.जि.कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम

पिता का नाम : अप्पुक्कुट्टन वी.

माता का नाम : वसन्ता टी.

जन्म तिथि : ०५-०५-१९८४

श्रीमद् भागवतम एकादश स्कंधम (मुक्ति स्कन्धम)

(मलयालम गद्य)

२३-०१-२०१३ में एक श्रेष्ठ सार्वजनिक सम्मेलन में प्रकाशित किया है।

पुस्तक का मूल्य : २५०.०० रूपये

प्राप्त होनेवाला स्थान : केरल हिन्दी साहित्य अकादमी,
लक्ष्मी नगर, डी-१, पट्टम पालस पी.ओ., त्रिवेन्द्रम-६९५००४

केरल के शिक्षा मण्डलों के वैभव

श्रीमती सनूजा: केरल को बधाइयाँ!!

श्री. सुरेश गोपी का दैनिक प्रोग्राम तुम भी कोटीश्वर बन सकते हो। श्रीमती सनूजा ने सुरेश गोपी के संकल्प को चरितार्थ कर दिया!! हज़ारों में एक मामूली नारी ने ज्ञान का दीप प्रज्वलित कर दिया। केरल हिन्दी साहित्य अकादमी की हार्दिक बधाइयाँ!!

डॉ.एस.तंकमणि अम्मा

वर्धावाले महात्मा गाँधी हिन्दी विश्वविद्यालय की कार्यपरिषद में राष्ट्रपति द्वारा डॉ.एस. तंकमणि अम्मा नियुक्त हुईहै, तीन वर्ष के लिए। डॉ.तंकमणि अम्मा केरल की हिन्दी लेखिकाओं में विशेष ख्याति प्राप्त एवं अनेक पुरस्कारों से अकंकृत है। वे केरल विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग की अध्यक्षा एवं विश्वविद्यालयीन समितियों में मुख्य पदों पर रह चुकी हैं। डॉ.तंकमणि अम्मा केरल हिन्दी साहित्य अकादमी की महामंत्री है। शुभकामानाएँ!!

श्रीमती हरिता वी. कुमार

इस वर्ष की सिविल सर्वीस परीक्षा में प्रथम आयी है, श्रीमती हरिता वी. कुमार। तिरुवनन्तपुरमवाले तैकाट में उनता भवन है। अब तक केरल के राजनैतिक एवं शासकीय अधिकारियों द्वारा श्रीमती हरिता वी. कुमार प्रशंसित हो चुकी है। वे केरल के लिए हमेशा स्मरणीय एवं भव्यता की पात्री है। केरल हिन्दी साहित्य अकादमी उन्हें बधाइयाँ अर्पित करती है।

डॉ.विजयन

देश-विदेशों में प्रसिद्ध मर्म चिकित्सक ! पानी पिलाना और नींद में मुंह बंद करके रखना, यह रीति उनकी चिकित्सा का मर्म है। सौंठ, आमलक, धूम-थूलि, बकरों का मूत्र, आरंड तेल इन चीज़ों का प्रयोग उन्हें प्रिय है। डॉ.विजयन केरल के एक ख़ास वैद्य है। कल्लार में आश्रम में रहता है।

अश्वती वी.

अकादमी के लिए विशेष आनंद की बात है कि श्रीमती अश्वती वी. भी सिविल सर्वीस में विजयी हो गयी है। अकादमी की शुभ कामनाएं!! श्रीमती अश्वती अकादमी की मंत्री डॉ.पी.लता की निकट बन्धु है।

डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर मलयालम भाषी हिन्दी साहित्यकार है। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर विश्वविद्यालयीन शोधकार्य करके हिन्दी में उपाधि-प्राप्त उत्तर भारतीय कतिपय शिक्षाविद्

गोपालजी भटनागर
शहदोल (म.प्र.)

रेखा शर्मा
अहमदाबाद

विजय अलन्कार
मध्यप्रदेश

रेणुका दहिया
मेरठ

डॉ. नत्थन सिंह के अनेक ग्रंथ डॉ.नायर पर हैं।

THE MALAYALAM WRITERS WHO WROTE ON DR.N.CHANDRASEKHARAN NAIR

ഡോ. എൻ. ചന്ദ്രശേഖരൻനായരെപ്പറ്റി മലയാളം സാഹിത്യകാരന്മാർ എഴുതിയ ലേഖനങ്ങൾ – മുഖവുരകൾ

ലേഖകൻ	ശീർഷകം	മാദ്ധ്യമം	തീയതി
1. **Sooranad Kunjanpillai**	ദ്വിവേണി	ഭൂമിക - നാടകം	ഡിസംബർ 1981
2. **Prof.N.Krishnapillai**	ദേവയാനി	ഭൂമിക - നാടകം	1962
3. **Dr. P.K.Narayanapillai**	യുഗസംഗമം	ഭൂമിക - നാടകം	1964
4. **P.KParameswaran Nair**	കുരുക്ഷേത്രമുണരുന്നു	അവതാരിക	1965
5. **Dr.V.Govinda Shenai**	ഭാരതീയസാഹിത്യം ഒന്നാംഭാഗം	അവതാരിക	1967
6. **Dr. Govinda Shenay**	ഭാരതീയ സാഹിത്യം (മുഖവുര)	സമീക്ഷാഗ്രന്ഥം	1967
7. **Dr. N.P. Kuttanpillai**	ദേവയാനി ഒരു ഉത്കൃഷ്ട കൃതി	നാടകത്തിന്റെ സമീക്ഷ ഗ്രന്ഥത്തിൽ	1973
8. **Prof.Sukumar Azhikode**	ചതുരംഗം	നാടകം - ഭൂമിക (ലേഖനം)	1974
9. **Prof. Sukumar Azhikode**	അതിത് കേ ദിൻ	അവതാരിക	1974
Prof. Sukumar Azhikode	കഴിഞ്ഞകാലം (കെ.പി.കേശവമേനോൻ)	അവതാരിക	1974
10. **Prof. Melethu Chandrasekharan**	ചതുരംഗത്തിന്റെ സമീക്ഷ	നാടകങ്ങളുടെ സംഗ്രഹം	1974
11. **Nedumkunnam Gopalakrishnan**	സീതമ്മ ഒരു വിശിഷ്ഠ നോവൽ (നിരൂപണം)	കേരളകൗമുദി ലേഖനം	1974
12. **P. Sanalkumar**	ദേശീയ അവബോധം സ്പന്ദിക്കുന്ന കൃതികളുടെ ഉടമ	മന്ദമാരുതൻ - പത്രിക	1974
13. **Prof.P.G. Narayanan**	മൃതിയും പുനരുദ്ധാനവും എന്ന നാടകത്തിന്റെ സമീക്ഷ (അവതാരിക)	മാതൃഭൂമി	1975
14. **Dr. Vellayani Arjun**	ശ്രേഷ്ഠ സിമ്പോളിക് കവി ജി.ശങ്കരകുറുപ്പ് എന്ന ഗ്രന്ഥത്തിന്റെ അവതാരിക	ഗ്രന്ഥത്തിന്റെ അവതാരിക	1980
15. **Sooranad Kunjanpillai**	ഡോ.നായർ പ്രസിദ്ധ ലേഖകൻ (അദ്ധ്യക്ഷപ്രസംഗം)	സാഹിത്യസംരംഭം വിശേഷാൽപ്രതി കൊച്ചിൻ സി. കൃഷ്ണൻനായർ	1981
16. **Kidangoor A.N.Gopalakrishnapillai**	ഡോ.നായർ ഒരു വരിഷ്ഠ അദ്ധ്യാപകൻ	വിശേഷാൽപ്രതി (കൊച്ചിൻ)	1981
17. **Dr. Vellayani Arjun**	ഡോ.നായർ ഹിന്ദിതര പ്രദേശത്തെ വന്ദനീയ സാഹിത്യകാരൻ	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി (ലേഖനം)	1981
18. **Dr. N.A.Kareem**	ഡോ.നായർ ബഹുമുഖ സാഹിത്യകാരൻ	സാഹിത്യസൗരംഭം ഡോ. ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
19. **Mahakavi M.P.Appan**	ഡോ.നായർ ബഹുമുഖ സാഹിത്യകാരൻ	സാഹിത്യസൗരഭം (കൊച്ചിൻ)	1981
20. **Konniyoor Narendranath**	ദേശീയോദ്ഗ്രഥനത്തിന് ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരുടെ സംഭാവന വിശേഷാൽപ്രതി	സാഹിത്യസൗരഭം ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
21. **Dr.S. Thankamani Amma**	ഡോ.നായരുടെ ഗവേഷണസാഹിത്യം	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
22. **Dr.M.A. Kareem**	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരുടെ മലയാളനോവൽ സാഹിത്യം	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981

ലേഖകൻ	ശീർഷകം	മാദ്ധ്യമം	തീയതി
23. **Prof.M.S.Viswambharan**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരുടെ ഹിന്ദിനാടക സാഹിത്യം	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
24. **Prof.P.G.Vasudev**	ആചാര്യനായ പ്രൊഫ. ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
25. **Smt.T.S.Ponnamma**	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ശ്രദ്ധേയനായ ശബ്ദശില്പി	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
26. **Sri.K.P.Padmanabhan Thampi**	ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ - വിമർശകൻ, ചിത്രകാരൻ സംഭാവന	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
27. **Prof.P.Retheedevi**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ കാവ്യാനുവാദം ഗൗരീശങ്കരം	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
28. **Prof.P.Leela (Kaviyoor)**	സാഹിത്യാചാര്യന്റെ സാഹിതീ സഫലത	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം (കൊച്ചിൻ)	1981
29. **Mahakavi M.P.Appan**	അനുഗ്രഹീതനായ സാഹിത്യകാരൻ	സാഹിത്യസൗരഭം ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ പതിപ്പ്	1981
30. **Prof.P.Leela (Kaviyoor)**	മലയാള സാഹിത്യത്തിനു ഡോ.നായരുടെ സംഭാവന	സാഹിത്യസൗരഭം വിശേഷാൽ പ്രതി ലേഖനം	
31. **Dr. M.A.Kareem**	ഡോ.നായരുടെ നോവൽ സാഹിത്യം	കേരളപത്രിക ലേഖനം	1981
32. **Smt.T.S.Ponnamma**	ഗൗരീശങ്കരം	വിവേകോദയം ലേഖനം	1981
33. **Prof.A.V.Sankaran**	പ്രൊഫ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ നാടകങ്ങൾ	കേരളപത്രിക (ലേഖനം)	1981
34. **Prof.Sudeer Kidangoor**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ സാഹിത്യമനീഷി	കേരളപത്രിക (ലേഖനം)	1981
35. **Editor Kerala Pathrika**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരുടെ ചിത്രങ്ങൾ	കേരളപത്രിക (ലേഖനം)	1981
36. **Prof.K.P.Padmanabhan Thampi**	കേരളത്തിലെ കലകൾ എന്ന പുസ്തകത്തിലെ അവതാരിക	(അവതാരിക)	1981
37. **R.RamachandranNair I.A.S.**	ആറ്റംയുഗത്തിലും ഋഷിപ്രഭവം	ഭൂമിക	1983
38. **Kerala Pathrika Editor**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഹിന്ദി സാഹിത്യത്തിലേക്ക്	കേരളപത്രിക	1984 ജൂലൈ 3
39. **P.K.Parameswaran Nair**	കുരുക്ഷേത്രം ഉണരുന്നു (അവതാരിക)	അവതാരിക	1985 ആഗസ്റ്റ് 14
40. **Prof.Hafazath Siddikee**	പ്രതീകവിദ്യയിൽ ഒറ്റപ്പെട്ട വ്യക്തിത്വം	പുസ്തക നിരൂപണം	1985
41. **Prof.M.Sathyaprakasam**	ഗൗരീശങ്കരം ഹിന്ദിയിൽ (ലേഖനം)	ദേശാഭിമാനി ആഴ്ചപതിപ്പ്	1985
42. **Mahakavi M.P.Appan**	ഹിന്ദിസാഹിത്യത്തിൽ പ്രതിഷ്ഠ നേടിയ സാഹിത്യകാരൻ	കേരളകൗമുദി (ലേഖനം)	1985 ജൂൺ 24
43. **C.Krishnan Nair**	ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ മങ്ങാത്ത പ്രതിഭ	സാഹിത്യസൗരഭം (ലേഖനം)	1985
44. **Prof.Vishnunarayanan Nampoothiri**	ശാങ്കരഭാരതിയുടെ സൂക്ഷ്മാവലോകനം	ജി.ശങ്കരക്കുറുപ്പ് സിമ്പോളിക് കവി എന്ന പുസ്തകം (അവതാരിക)	
45. **Prof.S.Gupthan Nair**	സിമ്പോളിക് കവി ജി.ശങ്കരക്കുറുപ്പ് ആസ്വാദനം	ഗ്രന്ഥത്തിൽ ഒരു ആസ്വാദനം	1985

ലേഖകൻ	ശീർഷകം	മാദ്ധ്യമം	തീയതി
46. **Dr.K. Sreenivasan**	ഇംഗ്ലീഷിലുള്ള സർഗാത്മക രചനകൾ	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും (ലേഖനം)	1993
47. **Prof.Kattoor Narayana Pillai** (Principal,Finance Coll.)	ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ കലാകാരനും കലാമർമജ്ഞനും	(ലേഖനം)	1993
48. **Dr.S.N.Ganesan**	ഡോ.നായരുടെ കലാമർജ്ഞത	ഡോ.നായർ ഒരു ചിത്രകാരനും (ലേഖനം)	1993
49. **P.T.BhaskaraPanicker**	യുഗസംഗമത്തിലെ മാനവികത	” (ലേഖനം)	1993
50. **Dr.M.A.Kareem**	മഹാഭാരതത്തിലെ വീര പുരുഷൻ- കഥയും ശില്പവും	ഡോ.നായർ ഒരു ചിത്രകാരനും (ലേഖനം)	1993
51. **Dr. Vellayani Arjunan**	പ്രൊഫ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ കവനകല	” (ലേഖനം)	1993
52. **Sri.R.Ramachandran Nair** (Chief Secretary, Kerala Government)	മുഖവുര	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ സപ്തതി ഗ്രന്ഥം	1993
53. **C.Krishnan Nair**	ഷഷ്ഠിപൂർത്തി ആഘോഷിക്കുന്ന ഡോ.നായർ	കേരളടൈംസ് (ലേഖനം)	1994
54. **Dr.B.K. Nair**	ദക്ഷിണേന്ത്യയിലെ പ്രതിനിധി ഹിന്ദി സാഹിത്യകാരൻ	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്ര-ന്ഥത്തിൽ നിന്ന് അദ്ധ്യായം11	1994
55. **Dr.N.P.Kuttanpillai**	ദേവയാനി ഒരു ഉത്കൃഷ്ഠ കൃതി	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്ര-ന്ഥത്തിൽ നിന്ന് അദ്ധ്യായം 11	1994
56. **Dr.Dharmaveer I.A.S. (Sub Collector, Tvm.)**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ നാടകങ്ങളിലെ ആദർശപക്ഷം	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്ര-ന്ഥത്തിൽനിന്ന് അദ്ധ്യായം 11	1994
57. **Mahakavi M.P.Appan**	ഭഗവാൻ ബുദ്ധൻഡോ.നായരുടെ ഒരു ശ്രേഷ്ഠനാടകം	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്ര-ന്ഥത്തിൽനിന്ന് അദ്ധ്യായം11	1994
58. **Dr.M.A. Kareem**	മഹാഭാരതത്തിലെ വീരപുരുഷൻ കഥയും ശില്പവും	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്ര-ന്ഥത്തിൽനിന്ന് അദ്ധ്യായം 11	1994
59. **Dr. Vellayani Arjun**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരുടെ കവനകല	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്ര-ന്ഥത്തിൽനിന്ന് അ.11, പേ.226	1994
60. **Prof.T.P. Sankaran kutty Nair**	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ബഹുമുഖപ്രതിഭ	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ സപ്തതി ഗ്രന്ഥം	1994
61. **Dr.M.George**	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരും രാഷ്ട്രഭാഷാസന്ദേശവും - സമീക്ഷ		1994
62. **Prof.P.R.Bhaskaran Nair**	ഡോ.നായരും കേരളത്തിലെ സാഹിത്യകാരന്മാരും - സമീക്ഷ	സപ്തതിഗ്രന്ഥം	1994

	ലേഖകൻ	ശീർഷകം	മാദ്ധ്യമം	തീയതി
63.	**M.V.Krishnavarier**	ഡോ.നായരുടെ ഹിന്ദി പര്യയുടെ പശ്ചാത്തലം (ലേഖനം)	സപ്തതിഗ്രന്ഥം (പേജ് 191-192)	1994
64.	**Prof.R.Janardhanan Pillai**	ദ്വിവേണി നാടകത്തിലെ വിശ്വശാന്തി സങ്കല്പം	സപ്തതിഗ്രന്ഥം(പേ.198-199)	1994
65.	**Dr.P. Narayanan**	പൗരാണിക ആഖ്യാനങ്ങളുടെ തിരനോട്ടം - ഡോ.നായരുടെ നാടകങ്ങളിൽ	സപ്തതിഗ്രന്ഥം (പേജ് 236–38)	1994
66.	**Minister Sri.K. Karunakaran**	ഷഷ്ഠിപൂർത്തിസമ്മേളനത്തിന്റെ അദ്ധ്യക്ഷപ്രസംഗം	സപ്തതിഗ്രന്ഥം (പേജ് 279)	1994
67.	**Dr.V. Radhamma**	ഭാരതീയസാഹിത്യത്തിൽ രാമൻ	സപ്തതിഗ്രന്ഥം (പേജ് 307)	1994
68.	**Sivolli Narayanan**	ആർഷചിന്തയുടെ അന്തർധാര	സപ്തതിഗ്രന്ഥം	1994
69.	**Sankar Himagiri**	വിജയങ്ങൾ ഈശ്വരേച്ഛയുടെ പുരസ്കാരങ്ങൾ	കേരളകൗമുദി	1997 ഒക്ടോ.6
70.	**Prof. Venu Maruthayi**	വിനമ്രതയാർന്ന വ്യക്തിപ്രഭാവം	മാതൃഭൂമി (നാലാംപേജ്)	2000 ജൂലൈ 2
71.	**Pattom Aji**	ഇൻഡ്യൻലോകത്തെ സാഹിത്യപ്രഭയുമായി ഒരഭിമുഖം	ദക്ഷിണകൈരളി	2001 ജൂലൈ
72.	**D.Sudarsan Editor, Deepika**	സുനാമി കണ്ണീർതുടയ്ക്കാൻ ഒരു കൊച്ചു തൂവാല	ദീപിക	2002 ഫെബ്രു. 19
73.	**Manacaud Nazar**	കേരള ടാഗോർ	ഇൻഡ്യൻ ന്യൂസ്	2002 ഫെബ്രു.10
74.	**Dr. Sudeer Kidangoor**	രാമായണത്തിലൂടെ ഒരു തീർത്ഥയാത്ര	ഭാരതപത്രിക	2003 ആഗസ്റ്റ് 3
75.	**Aswathi Tirunal Gowri Lekshmi Bai**	ഈ വിനയാന്വിതനായ പുരുഷന് മാർഗ്ഗ ദർശകൻ സ്വയം ഈശ്വരൻ തന്നെയാണ്	ചിത്രകലാസാമ്രാട്ട് രാജാരവിവർമ്മ അവതാരിക	2004
76.	**T.N.Jayachandran** I.A.S.	ലാളിത്യത്തിന്റെ സൗരഭം	ഉള്ളെഴുത്ത്	ഫെബ്രു.2005
77.	**Dr. Babu Paul**	പ്രേമചന്ദിന്റെ വഴിയിൽ ഒരു മലയാളി	മാദ്ധ്യമം ഡെയ്ലി	2005 മാർച്ച് 16
78.	**Madhyamam Editor**	മലയാളി അറിയാത്ത മലയാളിപ്രതിഭ	മാദ്ധ്യമം	2005 ജൂൺ 17
79.	**Dr.N.P. Kuttanpillai**	ഡോ. ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ കവിതകളിലെ രാഷ്ട്രീയ ഭാവന	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ ഒരു ചിത്രകാരനും എന്ന ഗ്രന്ഥത്തിൽനിന്ന് അദ്ധ്യായം11	2005 ജനു.21
80.	**Sanil Sha**	കേരളത്തിന്റെ പ്രേമചന്ദ്	വാരാന്ത്യ കൗമുദി	2005 മേയ് 15
81.	**D. Sudarsan Rashtradeepika**	സുനാമി കണ്ണീർ തുടയ്ക്കാൻ ഒരു കൊച്ചു തൂവാല	രാഷ്ട്രദീപിക	2005 ജനു.21
82.	**Syama** (Editor of Hindu, Cochin)	The Great Literature Dr. N.Chandrasekharan Nair	ദി ഹിന്ദു	2005
83.	**Dr.G.Balamohan Thampi** (V.C.Kerala Uty.)	ഡോ.നായർ കാ സമ്പാദകീയ്	ഗ്രന്ഥത്തിന്റെ ഭൂമിക	2006
84.	**Dr. P. Latha**	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ അസാധാരണമായ വ്യക്തിത്വം (സമ്പാദകീയം)	ശോധപത്രിക വിശേഷാൽപ്രതി	2007 ഒക്ടോബർ
85.	**Dr.V.Govinda Shenai** (Retd. Director)	ഡോ.നായർജിയുടെ സാഹിത്യത്തിന്റെ അന്തർധാരാ ആദർശവും സേവനവുമാണ്.	ശോധപത്രിക വിശേഷാൽപ്രതി	2007

ലേഖകൻ	ശീർഷകം	മാദ്ധ്യമം	തീയതി
86. **Dr.S.Thankamani Amma**	ബഹുമുഖപ്രതിഭാസമ്പന്നനായ ഡോ.നായർജി ദക്ഷിണേന്ത്യയിലെ ലബ്ദപ്രതിഷ്ഠ സാഹിത്യകാരൻ	വിശ്വവിവേക് - അമേരിക്ക ശോധപത്രിക വിശേഷാൽപ്രതി	2007
87. **Dr.H.Parameswaran** (Retd. Principal)	ഭാഷയോടും ആശയത്തോടും സത്യസന്ധത കാട്ടിയ സാഹിത്യകാരൻ	വിശേഷാൽപ്രതി ശോധപത്രിക	2007
88. **Dr.Balasubramonian** (Delhi)	ധന്യധന്യനായ സഹസ്രചന്ദ്രദൃഷ്ഠാ	വിശേഷാൽപ്രതി ശോധപത്രിക	2007
89. **Dr. Poojappura Krishnan Nair**	അദ്ധ്യാത്മരാമായണം ഗദ്യപരിഭാഷ	ഭാരതപത്രിക	2008 ജൂലൈ 23
90. **Dr.P. Sethunadh**	അനന്തപുരിയും ഞാനും വാരാന്ത്യം സൗമ്യം മധുരോദാരം	ഭാരതപത്രിക	19/10/08
91. **Padmasree P. Parameswarji**	Dr.Nair, the famous Hindi writer	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	2008
92. **The Great Gandian P. Gopinathan Nair**	Dr. Nair a known Literaryan	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	2008
93. **Dr.Prof.SreekandanNair**	Mahakavi Dr. Nair	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	2008
94. **Smt. R. Rajapushpam**	Famous Hindi WriterDr. Nair	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	2008
95. **Sri.P.J.Nair** (Editor, Bharathapathrika)	ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരും ചിരംജീവി മഹാകാവ്യവും	ഭാരതപത്രിക	2008 ആഗസ്റ്റ് 13
96. **Prof. Hareendranadha Kurup**	അനന്തപുരിയും ഞാനും (സമീക്ഷ)	മന്നംജയന്തി പതിപ്പ് - സർവീസ്	2009 ജനുവരി
97. **Akkitham Achuthan Namboothiri**	അവതാരിക - ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	അവതാരിക	2009
98. **Dr. George Onakkur**	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	ആമുഖം	2009
99. **Prof. Dr. P.Sethunath**	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	ഭാരതപത്രിക	2009 ആഗസ്റ്റ് 13
100. **G. Hari**	ഗംഗപോലൊരു സാഹിത്യജീവിതം	കേരളകൗമുദി	2011 ഒക്ടോ.29
101. **Arsu (R. Narendran)**	ചിരംജീവി മഹാകാവ്യത്തിന്റെ സമീക്ഷ	സംഗ്രഥൻ	2011
102. **Justice M.R.Hariharan Nair**	ഗുരുവന്ദനം (ഉദ്ഘാടനപ്രസംഗം കേരള യൂണി.)	ശോധപത്രിക	2012 ജനു. 2
103. **Mathruboomi Lekhakan Sreekanth**	ജീവിതം ഹിന്ദികേലിയേ വിജയമന്ത്രം		2012 ജനു.12
104. **Viswavedi Pathrika Editorial Board Interview**	അനന്തപുരിയിൽ ഹിന്ദിയുടെ ഒരു സാന്ദീപനി	വിശ്വവേദി	2012 മെയ് 16 ജൂൺ 15
105. **Dr.K.G. Prabhakaran**	ഡോ.നായർജിയുടെ നിബന്ധസാഹിത്യം	ശോധപത്രിക വിശേഷാൽപ്രതി	2012 ജനു.2
106. **Dr. Preetha Ramani T.E.**	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായരുടെ കവിതകളിലെ രാഷ്ട്രീയസങ്കല്പം	ശോധപത്രിക	2012 ജനു.2

ലേഖകൻ	ശീർഷകം	മാദ്ധ്യമം	തീയതി
107. Dr. Leelakumari S.	ഡോ.നായരുടെ കഥകളിലെ സാമുദായിക, സാംസ്കാരിക പ്രതിപാദനം	ശോധപത്രിക	2012
108. Prof.M.G.Devaki	ഡോ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർജിയുടെ ഗവേഷണസാഹിത്യം	ശോധപത്രിക	2012
109. Dr. Leena B.L.	ഡോ.നായർജിയുടെ ദേവയാനി നാടകത്തിലെ മിഥകീയ സ്വരൂപം	ശോധപത്രിക	2012
110. Dr. Deepakumari	ഡോ.നായർജിയുടെ നാടകം - ധർമ്മവും അധർമ്മവും വ്യക്തമാക്കുന്ന മാനവികത	ശോധപത്രിക	2012 ജനു.2
111. Dr. Remya L.	ഡോ.നായർജിയുടെ ഉപന്യാസസാഹിത്യം - ഒരു അവലോകനം	ശോധപത്രിക	2012 ജനു.2
112. Reeja R.S.	ഡോ.നായർജിയുടെ ദേശഭക്തി കാവ്യങ്ങളിലെ ആധുനിക സന്ദർഭങ്ങൾ	ശോധപത്രിക	2012 ജനു.2
113. Dr.S.Thankamani Amma	കേരൾ കേ ഹിന്ദി സാഹിത്യ കാ ബൃഹദ് ഇതിഹാസ്	ഭൂമിക	2012
114. Asadevi M.S.	മഹാകവി ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻ നായരും ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	ശോധപത്രിക കേ.ഹി.സാഹിത്യ അക്കാദമി സംയുക്താംകം	2012 ഒക്ടോബർ
115. Smt. Kawsalyammal	ഒരു കർമ്മയോഗിയുടെ ആത്മകഥ	ആത്മകഥ	2012 ഒക്ടോബർ
116. K.G. Balakrishnapillai	കേരളത്തിലെ പ്രമുഖ ഹിന്ദി സാഹിത്യകാരൻ ഡോ.നായർ	ഉത്തരസമാചാർ	2012 നവം.16
117. Sri. Sankar Himagiri	വിജയങ്ങൾ ഈശ്വരേച്ഛയുടെ പുരസ്കാരങ്ങൾ ധന്യമാം ജീവിതം (ഡോ.എൻ.ചന്ദ്രശേഖരൻനായർ)	1997 കേരളകൗമുദി	ഒക്ടോ.6
118. Smt. Rema Unnithan	കേരളീയ പ്രേമചന്ദ്	ദി പബ്ലിക് (ഡൽഹി)	2012
119. Justice M.R. Hairharan Nair (X Ombudsman)	My beloved Guru	ശോധപത്രിക	ജനുവരി 2012
120. Dr. Antony P.M.	ഇതിഹാസപുരുഷൻ ഡോ.നായർ	ശോധപത്രിക	ജൂലൈ 2012
121. Kum. Asha Devi M.S. Research Scholar	ഹാർ കീ ജീത്തിലെ നാരീചരിത്രങ്ങൾ	ശോധപത്രിക	ജൂലൈ 2012
122. Kum. Asha Devi M.S. Research Scholar	മഹാകവി നായരും ചിരംജീവി മഹാകാവ്യം	ശോധപത്രിക	ഒക്ടോ. 2012
123. Nirmala Rajagopal	അനന്തപുരിയും ഞാനും (ഭാരതീയ സംസ്കാരത്തെ നെഞ്ചിലേറ്റിയ ഒരു സാഹിതിസേവകന്റെ തീർത്ഥയാത്ര	വിശ്വവേദി	2013 ഫെബ്രു 16 മാർച്ച് 15
124. Editor, Desabhimani Paper	നവതിയുടെ നിറവിൽ ഡോ.എൻ. ചന്ദ്രശേഖരൻ നായർ	ദേശാഭിമാനി പേപ്പർ	2013 ജനു.23
125. Sri.V.S.Rajesh (Editor, Kerala Kaumudi)	നവതിയുടെ നിറവിൽ ഒരു മഹാപണ്ഡിതൻ	കേരളകൗമുദി	2013 ജനു.22

डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर की रचनाओं में कुछ

२३-२-२०१३ को सम्पन्न स्वामी विवेकानन्द सम्मेलन के विविध दृश्य

१४-८-२०१३ को केरल हिन्दी साहित्य अकादमी का ३३ वाँ वार्षिक समारोह धूम-धाम से चलेगा। उसके साथ कवीन्द्र रवीन्द्र पर नेशनल सेमिनार भी आयोजित होता है। उत्तर भारत के छे वरिष्ठ साहित्यकार सम्मेलन में भाग लेंगे।

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी के लिए शोध-पत्रिका डा.एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्री निकेतन, तिरुवनन्तपुरम - ४
द्वारा मुद्रित संपादित और श्रीरामदासमिशन प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग हाऊस, तिरुवनन्तपुरम-८७ में मुद्रित।